राधास्वामी

अनुभव-सार

द्वितीय प्रकाशन

श्री कुबेरनाथ श्रीबास्तव
एडवोकेट
रसड़ा बलिया (यू० पी०)

राधास्वामी

अनुभव-सार

द्वितीय प्रकाशन

श्री कुबेरनाथ श्रीवास्तव
एडवोकेट
रसड़ा बलिया (यू० पी०)

विषय-सूची

प्रकाशक :—

फकीर लायब्रेरी चैरीटेबल ट्रस्ट

सुतहरी रोड,

होशियारपुर ।

राधास्वामी

परम दयाल साहिब और अनुभव सार

श्री कुवेरनाथ जी जो मेरे गुरुभाई तथा हजूर दाता दयाल परम सन्त महर्षि शिवव्रतलाल जी के विशेष प्रेमियों में से हैं। लड़कपन में क्षय रोग से ग्रसित हो गए। कुटुम्बी व सम्बन्धी मतलव के साथी हैं, उन्होंने इनकी कोई परवाह न की। यह दुःखी होकर दातादयाल जी के चरणों में आये। क्षयरोग के कारण कोई इनको छूना तथा देख रेख करना पसन्द नहीं करता था। दातादयाल जी ने इनको अपने गले से लगाया। अपने बाग के कच्चे व खट्टे आम के शरबत व अपने कुंए के पानी में शुभ भावना का सस्कार भर कर दवा के रूप में इनको पिलाया और स्वयं पथ्य बना कर दिया १५ १६ दिन तक जब तक इनकी दशा नहीं सुधरी एकान्त में वास करके इनके क्षय रोग के दूर करने का तप करते रहे। दातादयाल जी महाराज के तप तथा इनके दृढ़ विश्वास से दाता दयाल जी महाराज के संस्कार इनमें प्रवेश कर गए। और इनका क्षय रोग जाता रहा।

दाता दयाल जी महाराज के संस्कार से इस अनुभव सार को इन्होंने बड़े परिश्रम से लिखकर मुझ को प्रकाशित करने हेतु समर्पित किया है। जो कुछ इस में लिखा है वह दाता दयाल जी महाराज के संस्कारों का परिणाम है।

दाता दयाल जी महाराज के चोला छोड़ने के बाद जब मैं उनकी समाधी के दर्शन हेतु भंडारा के अवसर राधास्वामी धाम गया तो मेरा और इनका परिचय हुआ। उसके बाद मैं इनकी मानसिक व आत्मिक देख भाल करता रहा और बड़े भाई के नाते अपनी शुभ भावना देता रहा। हम लोगों का प्रेम दिन प्रति दिन बढ़ता गया।

भूमिका

मालिक क्या है ? वह अनुभव सार है । अनुभव सार क्या है ? वह दातादयाल महिर्षि शिवब्रतलाल जी साहिब तथा परमदयाल जी पण्डित फकीर चन्द जी साहिब के शिक्षा का जौहर यानि 'अनुभव सार' है जिस का मूल्य आंकना केवल जौहरो का काम है। इनकी एक एक कड़ी मोती की सुन्दर लड़ी है । इसके प्रस्तुत करते का अभिप्राय यह है कि सतसंगी भाई साधारण रूप से और अभ्यासी भाई विशेष रूप से इसका अध्ययन करके अपने अनुभव की पुष्टी तथा उन्नति करें और पहुंचे हुए महापुरुष इसके अध्ययन से अपना मनोरंजन करें । इसके अध्ययन से आपकी बुद्धि निर्मल, हृदय शुद्ध, चित्त प्रसन्न और आत्मा को शान्ति होगी । आपने बहुत सी पुस्तकें आत्मज्ञान व अध्यात्मज्ञान के विषय की पढ़ी होगी मगर ऐसी अनोखी पुस्तक नहीं पढ़ी होगी, जिसकी एक एक कड़ी स्वय एक ऐसी पुस्तक हो । अगर इस पुस्तक के दो चार वाक्य भी पढ़ कर समझ कर आप क्रियात्मिक हो गये तो आप के भाग्य की सराहना कौन कर सकता है ? आप में कमी बेशी का कोई प्रश्न नहीं रह जावेगा । आप पूर्ण हो जावेगे जो कहने सुनने में नहीं आता बल्कि "अनुभव सार" है। गुर देव की दया से अगर दो चार व्यक्ति भी इस पुस्तक के लक्ष को प्राप्त कर लें तो हम अपनी मेहनत सफल समझेंगे और मालिक को हम धन्यवाद देंगे ।

अतः आप अवश्य ही इस पुस्तक का अध्ययन करें । क्या पता उन दो चार व्यक्तियों में से जिनसे मेरा अभिप्राय है एक आप ही निकल आवें । इस पुस्तक की यह विशेशता है कि जितनी बार आप इनका अध्ययन करेंगे उतनी बार आपको नया अनुभव व नई प्रसन्नता प्राप्त होगी ।

इस बार इनमें दातादयाल के संकेत व प्रमाण भी सम्मिलित हैं। जो प्रथम प्रकाशन में नहीं हैं तथा प्रत्येक अध्याय में प्रथम प्रकाशन से और अधिक विषय हैं जो नये सज-धज में प्रस्तुत किये जा रहे हैं ।

कुबेर नाथ

दाता दयाल के नज्म

(१)

१. ऐ आफताबे[1] सादिक जल्वा[2] दिखा दे अपना।
आखें तरस रही हैं, पर्दा उठा दे अपना॥
२. ये नूर[3] तेरा मेरे बत, पर्दा आगे आया।
ज़ात[4] और असलियत को, है बे तरह छिपाया॥
३. ये है हिज़ाब[5] तेरा, यह है नकाव[6] तेरा।
गौ नूर है मुजल्ला[7], मेरा बना अन्धेरा॥
४, इस को हटा दे दम में, मैं असलियत को देखूं।
तू क्या है कौन हूं मैं, असानी से यह समझूं॥
५. जो तू है वही मैं हूं, हम दोनों ही हैं एकसा[8]।
कालिव[9] जुदा जुदा हैं, वाहिद[10] है रुह वोजां॥
६. दिल में तेरी जगह है, तू आ के दिलगजी[11] हो।
वहदत का राज़[12] वातिन, अब मेरे दिलनशीं[13] हो।
७. महुबे जमाल[14] करदे, महुबे जलाल[14] करदे।
पर्दा उठे दुई का, महुबे वसाल[15] करदे॥
८. तू क्या है असलियत का, तेरे पता नहीं है।
पर्दा है नूर तेरा, मेरी खता[16] नहीं है॥
९. देखा जो तेरा जलवा, आंखों को खीरगी[17] है।
यह खीरगी[17] नहीं है, दरअसल तीरगी[18] है॥

---

1. मालिके कुल, 2. तेज, 3. प्रकाश, 4. स्वयं, 5. पर्दा। 6, प्रकाशमय, 7. एक तरह का, 8. देह, 9. एक 10. मन में वसना, 11. गुप्त भेद, 12. दिल में बैठना, 13. वाहरी प्रकाश, 14. भीतरी प्रकाश, 15. मिलाप में मग्न, 16. दोष, 17. प्रकाश की खुशी-तरावत, 18. अन्धेरा।

१०. अब दिल में है तमन्ना, उठ जावे पर्दा एक दम ।
हम दोनों मिल रहेगें, बातिन[1] में हो के हम दम[2] ॥

११. हे राधास्वामी रक्षक "ज़ावित" बना है साविर[3]।
पर्गट हो घट के अन्दर, दर्शन मिले बराबर ॥

(२)

१. दिखादे पाकीज़ा[4] शकल अपनी,
जहां को महवे जमाल कर दे ।
तरस्ता हैं देखने को आलम,
नजर में आकर निहाल कर दे ॥

२. जमाल[6] दिखला जलाल[7] दिखला,
जमाली[8] अजलाली[9] शान दिखला ।
मिला जमाल वो जलाल को,
दो का बाहमी इत्तसाल[10] कर दे ॥

३. हवस हुई है कि तुझ को देखूं,
छुपा छुपा फिर रहा है अब क्यों ।
पादीद[11] और दीद[12] के तमाशों के,
मअजजों[13] का कमाल कर दे ॥

४. नहीं मुझे काल[14] की है हाजत[15],
न कहने सुनने से वास्ता है ।
कर्म कर अब देर हो चुकी है,
तू काल को मेरे हाल[16] कर दे ॥

५. खुदा जुदा एक शकल के हैं,
फकत हैं नुकता का फर्क "ज़ाबित" ।
ततहत[17] वो फौक[18] की हो निसबत,
हटाके नुकता बिसाल कर दे ॥

---

1. भीतर, 2. मित्र, 3. धीरज-धारी, 4. विमल, 5. मुग्ध, 6. बाहरी (माया का) प्रकाश, 7. भीतरी (आत्मा का) प्रकाश, 8. बाहरी 9. भीतरी, 10. मिलाप, 11. गुप्त, 12. प्रगट 13. जादु, 14. करनी, 15. जरुरत, 16. रहनी 17. छोटाई 18. बडाई ।

(३)

१. खुदा का है अगर तालिव[1], तो फिर तुझ में खुदी[2] कैसी।
लगाता है वहां दिल तो, यहां दिल वस्तगी[3] कैसी ॥
२. लगायें दिल जहां[4] से, वो जहां वालों से क्या अपना।
मुसाफिर की मुसाफिर से, सफर में दोस्ती कैसी।
३. तेरे दर के गदा[5] हम हैं तेरी, सूरत के दिवाने[6]।
न जाने हम कि जिन्नत[7] क्या बला है वो परि[8] कैसी ॥
४. खुदा के पास होने का, यकी मुश्किल से आता है।
वगरना जब खुदा ही पास है, तो वेकसी[9] कैसी।
५. न पुछो हां न पुछो मुझ से किस हालत में रहता हूं।
तवियत आदमी की है, कभी ऐसी कभी वैसी ॥

(४)

१. फिक्र क्यों करता है और, इस जिक्र से क्या फायदा।
जिक्र[10] क्यों है फिक्र का, इस जिक्र से क्या फायदा ॥
२. दिल तेरा है मिस्ले[11] दरिया, जिक्र-फिक्र इस की तरंग[12]।
देख दिल को यह न होने पाये, इन फकीरों से तंग ॥
३. तजर्वा काफी हुवा, दुनियां की हालत देख ली।
फिक्र क्यों दुनियां की जब, दुनियां की सूरत देख ली ॥
४. वक्त है ये इन्मतहां का, अपने आपे को सम्भाल।
अपने आपे में रहा कर, अपनी ही हो बोल चाल ॥
५. तू मसव्वर[13] है वनाई, सुरते लाखों अजव।
भूला तस्वीरों, पे क्या, उफ कर दिया तू ने गज़व ॥
६. ऐ मसव्वर दिल की तस्वीरों, पे क्यों जाता है।
इन की खातिर इस कदर गम, किस लिए खाता है ॥

1-खोजी 2-अहंकार 3-मोह 4-दुनिया 5-भीखारी 6-प्रेमी
7-स्वर्ग 8-अपसरा 9-कमी गरीबी 10-शिकायत 11-जैसा
12-लहर 13-तस्वीर वनावे वाला।

७. शाने दुर्वेशी[1] हैं यह, आपे से बाहर तू ना जा।
आपे में रह आपे में, साकिन[2] हो और आपे आ॥

८. अपना आपा देख इस, आपे में है दुनियां भरी।
खानाये[3] दिल पर तेरे, आपा ही की है सरवरी॥

९. ख्वाब बीं ने ख्वाब देखा, और परिशां हो गया।
ख्वाब तो था ख्वाब और, नाहक वह हैरां हो गया॥

१०. ख्वाब से वेदार[5] हो, यह ख्वाब दायम[6] कब हुवे।
ख्वाब से उंचा हो दिल में, ख्वाब कायम[7] कब हुवे॥

११ बन्द कर लब[8] बन्द कर कां, और आँखें बन्द कर॥
इस अमल से तू दिले नाशाद को खुरसन्द[10] कर॥

१२. तू है सब कुछ और सहारे, तेरे सब का खेल है।
खेल ही में है जुदाई, खेल ही में मेल है॥

१३. खेल ले इस खेल को, इस खेल को तू खेल जान।
खेल से क्या रंज है, दिखला फकीरी की तू शान॥

१४. किस लिए दिल में उदासी, छा गई है वे तरह।
क्यों मुझे हालत तेरी, यह भा गई है वे तरह॥

१५. कैसी खिल्वत[11] कैसी जिल्वत[13], दोना हालत एक है।
वह समझते हैं इसे, जो दिल में अपने नेक है॥

१६. नेक तू है शक नहीं, दिल में मेरे आया कभी।
नेक को हर वक्त मिलनी, चाहिए दिल की खुशी॥

१७ सुवे तारीकी[13] से जल्दी से, हटा अपनी नजर।
देख नूरे हक[14] तुझे देता हूं मैं असली खबर॥

१८. असलियत तुझ में है, तू है अस्ल बाकी नक्ल है।
नक्ल की जानिब नजर क्यों, अस्ल में जब अम्ल है॥

1-फकीरी 2-निवास करना ठहरना 3-दिल का घर 4-प्रधानता
5-जाग जा 6-स्थाई 7-रुपधारी 8-होंठ 9-दुखी 10-खुश
11-एकांत 12-भीड़ भाड़ 13-अन्धेरा 14-परमात्मा का प्रकाश

१६. हो न दामे रंज वो ग़म में, नू कभी हर्गिजे असीर[1]।
नाम पर सुरत पजा, कहते हैं सब तुझ को फक़ीर॥

(५)

१. वना अहले[2] मकां क्यों, ऐ मकी[2] तू ला मकां[3] होकर।
ज़मी पर ख़ाक[4] का पुतला वना क्यों आसमा हो कर॥

२. पता देता है अपना वो वताता नाम है अपना।
तुझे क्यों नाम की ख्वाहिश है वे मना वो नाम निशाँ होकर।

३. ज़ुवां पर आह वो नाले, दिल मैं दर्द वो रंज हसरत है।
ग़ज़व है क्यों परिशानी, उठाई शादमां[5] होकर॥

४. हकीकत[6] ज़ात[7] जब ठहरी, तो फिर तहकीक[8] लाहासिल[9]।
मगर सब पुछते है, नुक्तादां[10] वो राज़दा[11] होकर॥

५. तुझे गुल के हिफाज़त, की ग़र्ज मदेनज़र होती।
है गुलचीं[13] किस लिए, बागे जहां का बागबां[14] होकर।

६. समझ जिसका न आई, ज़ात[15] की भुला सिफत[16] में वह।
फिरा दर दर गदा[17] की तरह सुलताने[18] जहां हो कर।

७. असीरे[19] दामे ग़फलत क्यों, है दुनियां हमको को बवलावो।
सबव यह है कि वह रहता, है दाना[20] में निहा होकर॥

(६)

१. न अपना नाम रख ना तुम, न दुनिया में निशां रखना।
नहों की जब हुई आदत, ज़वा पर फिर न हां रखना॥

1-कैदी 2-घर बाला 3-बिना घर के 4-मिटी की मुरत
5-खुश 6-असली वस्तु 7-स्वयं 8-खोज 9-वे-मतलब
10-प्रमाणी 11-भेदी 12-जरुरत 13-फुल चुचने वाला
14-माली 15-पुर्ष 16-प्रकिती 17-भिखारी
18-दुनियां का वादशाह 19-वन्दो 20-वुद्धिमान

ठ

२. मुकिर[1] होना अवस[2] है, और मुनकिर[3] होना है गलती।
न सर में ऐसे सौदा, का कभी बोर-गिरा[4] रखना॥

३. न साहिवे दिल न वे दिल, वनने की तुम में हवस आवे।
न दिल देना न दिल लेना, न वहमें दिल सतां रखना॥

४. अगर है तर्क कर दो तर्क, का भी तक वे शुवहा।
मकां जब छूट गया फिर क्यों ख्याले ला मकां रखना॥

५. खमोशी[5] मनिये दारद, कि दर गुफ्तन नमी आयद।
न सच वो झुट कहने के लिये मुंह में जुवा रखना।

(७)

१ वक्ते रेहलत[6] आ गया, फुर्सत किसे आने की है।
तुम को आने की पड़ी है, और मुझे जाने की है।

२. आया था रोता हुवा, जाता हूं अब हंसता हुवा।
गुलशने[7] आलम जगह भी, दिल के वहलाने की है॥

३. वाहमे[8] झूठे थे और फर्जी, थे सब नाम को निशान।
अव तो ख्वाहिश इन मिट, जाने की मिटवाने की है॥

४. जव नहीं है जिस्म वो दिल, अपने तो मैं इनका हुं कब।
यह जुदा हर वक्त थे, यह बात मन माने की है॥

५. क्या लिया क्या ले चले, लेना था क्या देना था क्या।
है हवस बेसुद[9] जिनको लेने की देन की है॥

६. खौफ दौजख[10] वह्म है, उम्मिदे जिन्नत[11] वह्म है।
फिक्र दुनियां दार को नानक, सब धोखा खाने की है॥

1-स्वीकार करना 2-निरर्थक 3-अस्वीकार 4-भारी भोझ
5-चुप रहने का अभिप्राय क्या है कोई कह नहीं सकता।
6-चल चलाव का समय 7-दुनियां की फुलवारी 8-निराअधार स्वबाल 9-वेकार 10-नर्क 11-स्वर्ण

७. जो खिले मुर्झा गये, किसको स्कू[1] किस को करार।
जायेगें जो आये, जो आये उन्हे जाने की है॥

८. हैं भर्म में दीन वाले, दीन वो दुनिया है भरम।
आप भर्मे फिक्र अब, औरों के भरमाने की है॥

(८)

१. आये किस जा से कहां को आ गये।
थे अगर सईयाह[2] क्यों भरमा गये॥

२. दिल लगी को दिल, दिल छिन गया।
दिल में दिल से खुद बखुद शर्मा गये॥

३. दे के दिल पछताते हैं अब रात दिन।
जो किया था उसका फल अब पा गये॥

४. वे तरह लुटे गये गारत[3] हुये।
जिन्दगी से अपने अब अखुता गये॥

५. कौन है अपना यहां कोई नहीं।
धोखा खाया सबसे धोखा खा गये॥

६. उर्म गुजरी सारी खेल वो कूद में।
अपनी हालत देख देख कर थूरा गये॥

७. "नय्यर" अपना नूरे वातिन खो गया।
अव्र[4] तीराकार इस पर छा गये॥

८. येगर्ज़ है ज़ात अपनी वेगर्ज़ रहते है हम।
वेगर्ज़ है ज़ात अपनी लेगर्ज कहते हैं हम॥

1-शान्ति 2-समुद्री यात्री 3-मरबाद काली बादल

दाता दयाल की शिक्षा

जो मुस्रर्त[11] वेरी मुहताजे[11] निगाहे गैर है।
उस मस्रर्त में न खूबो है न कोई गैर है॥

१. खुशी दिल में तुम्हारे है, खुशी के तुम मस्सव्वर[1] हो।
खुशी के मुजहिर[2] वो मुजहिर[3] खुशी के माहवो[4] पैकर[5] हो।

२. जरा दिल में समा जावो, चमक उठो वस अब दिल में।
खुशी के आसमां के आप, तुम शम्शे मन्नउवर हो॥

३. खुशी को जुस्तजू[7] बाहर, नहीं करते कभी दाना[8]।
खुशी है जात[9] में चाहे, कोई भीतर की बाहर हो।

1-फोटोग्राफर 2-प्रकाश 3-खुशी को प्रकाशित करथे वाले
4-चान्द 5-सितारा 6-प्रकाशमान सूरज 7-खोज
8-ज्ञानी 9-स्वयं 10-खुशी 11-दुसरे के आधीन

† मंगलम् †

१. मंगलम् गुरु शब्द रूप अनाप नाम प्रकाशनम् ।
मंगलम् शब्दार्थ शब्दा धार शब्द निवास नम् ॥

२. गुप्त अपने आप में जब अलख अगम अनाम आप ।
जब प्रकट आनन्द ज्ञानाकार वो सतधाम आप ॥

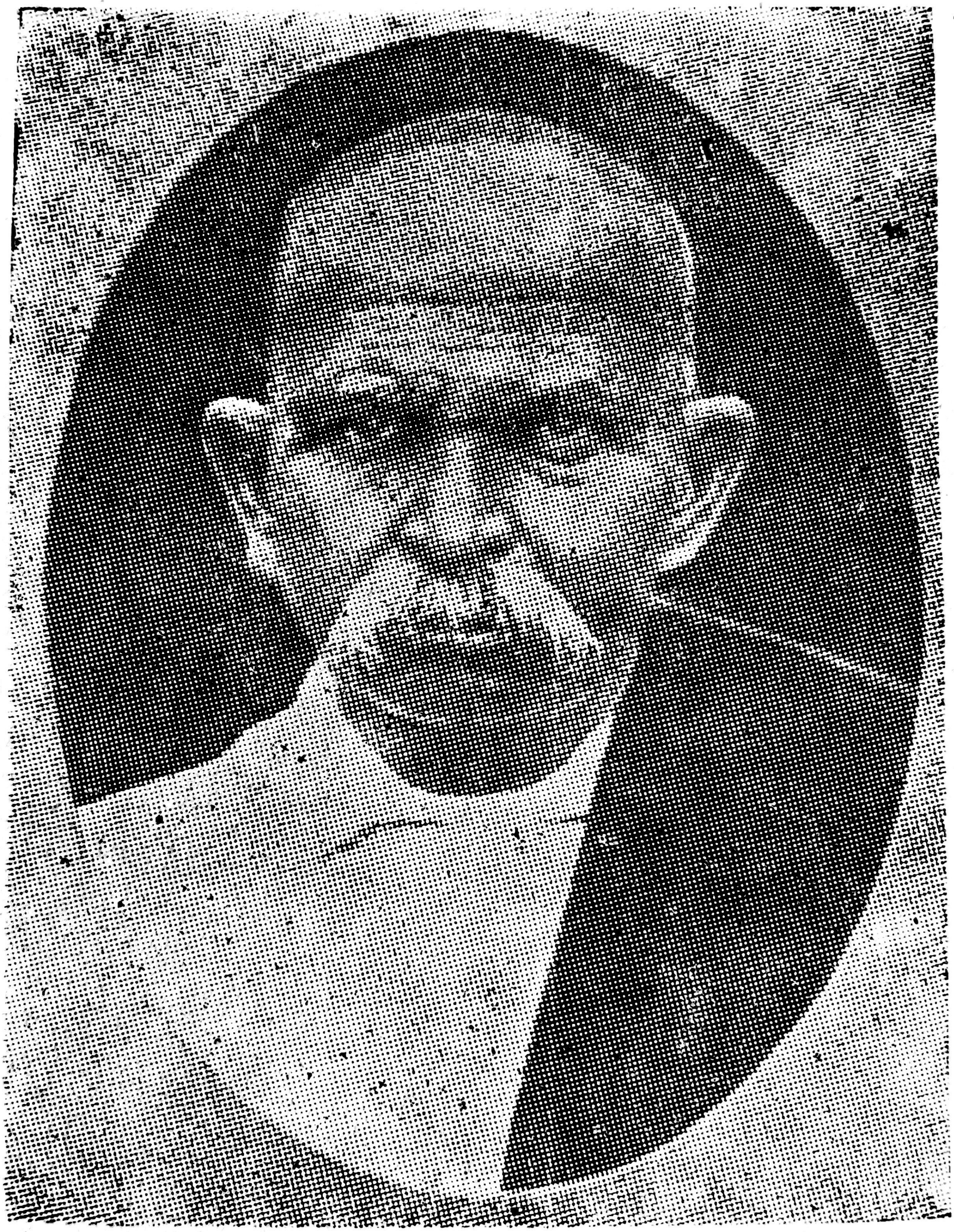
३. साज सन्त समाज मंगल काज जीव उधार को ।
आपने धारण किया है परम संत औतार को ।

४. आप हैं आधार सब के आप के आधार सब ।
वार पार से रहित आप हैं और वारापार सब ॥

५. संग दे कर सत का सतसंग में जीव अधिन को ।
सिंधु सदगति से मिलाया जीव रूपी मीन को ॥

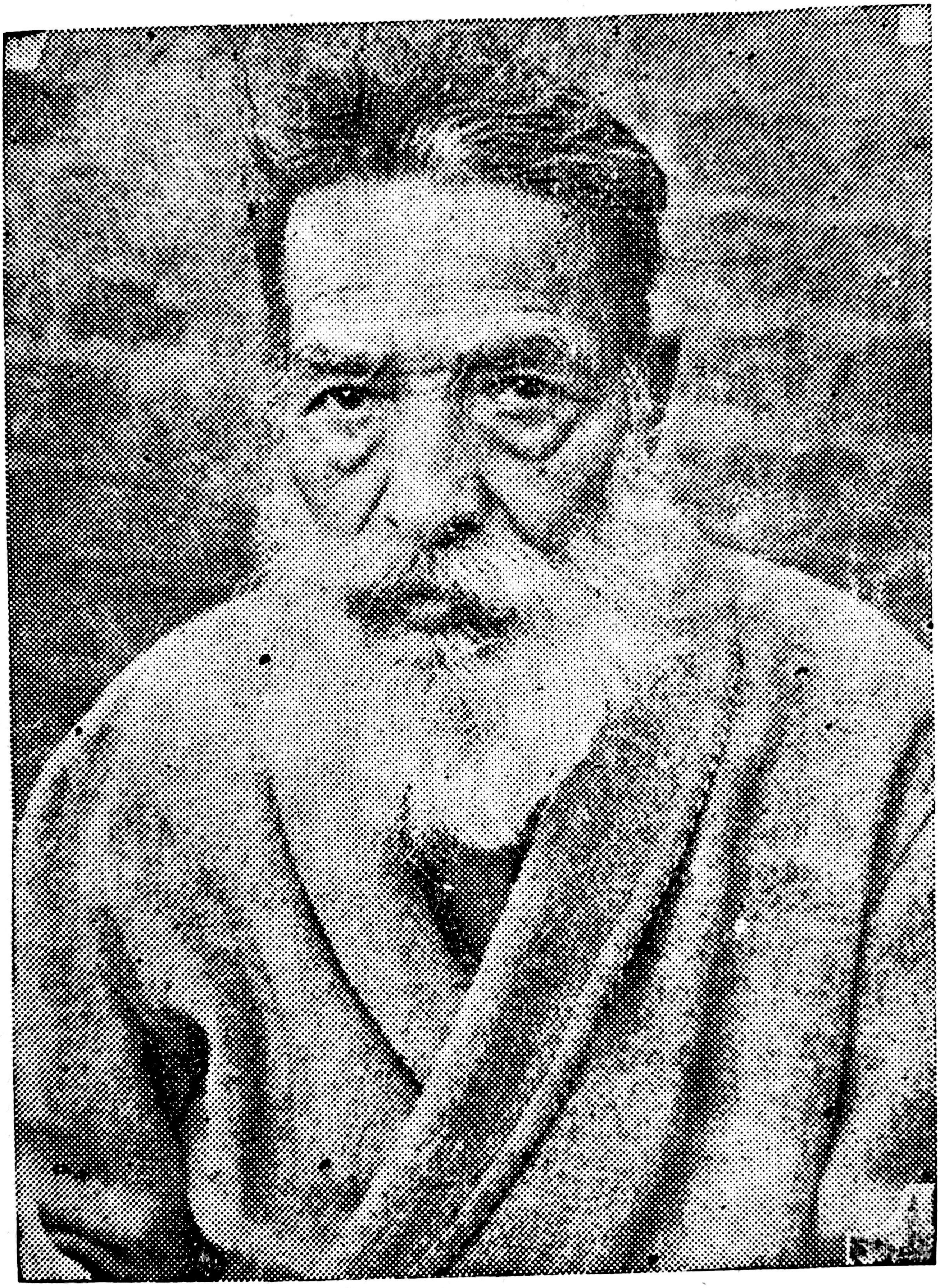
६. सैन वैन का आसरा सतसंग द्वारा दान दे ।
शब्द जोग सिखाय अनहद धाम पद निर्वान दे ॥

७. धन्य सतगुरु, राधास्वामी पार भव से कीजिए ।
भक्ति, मुक्ति जोग, जुक्ती, ज्ञान शक्ति दीजिये ॥

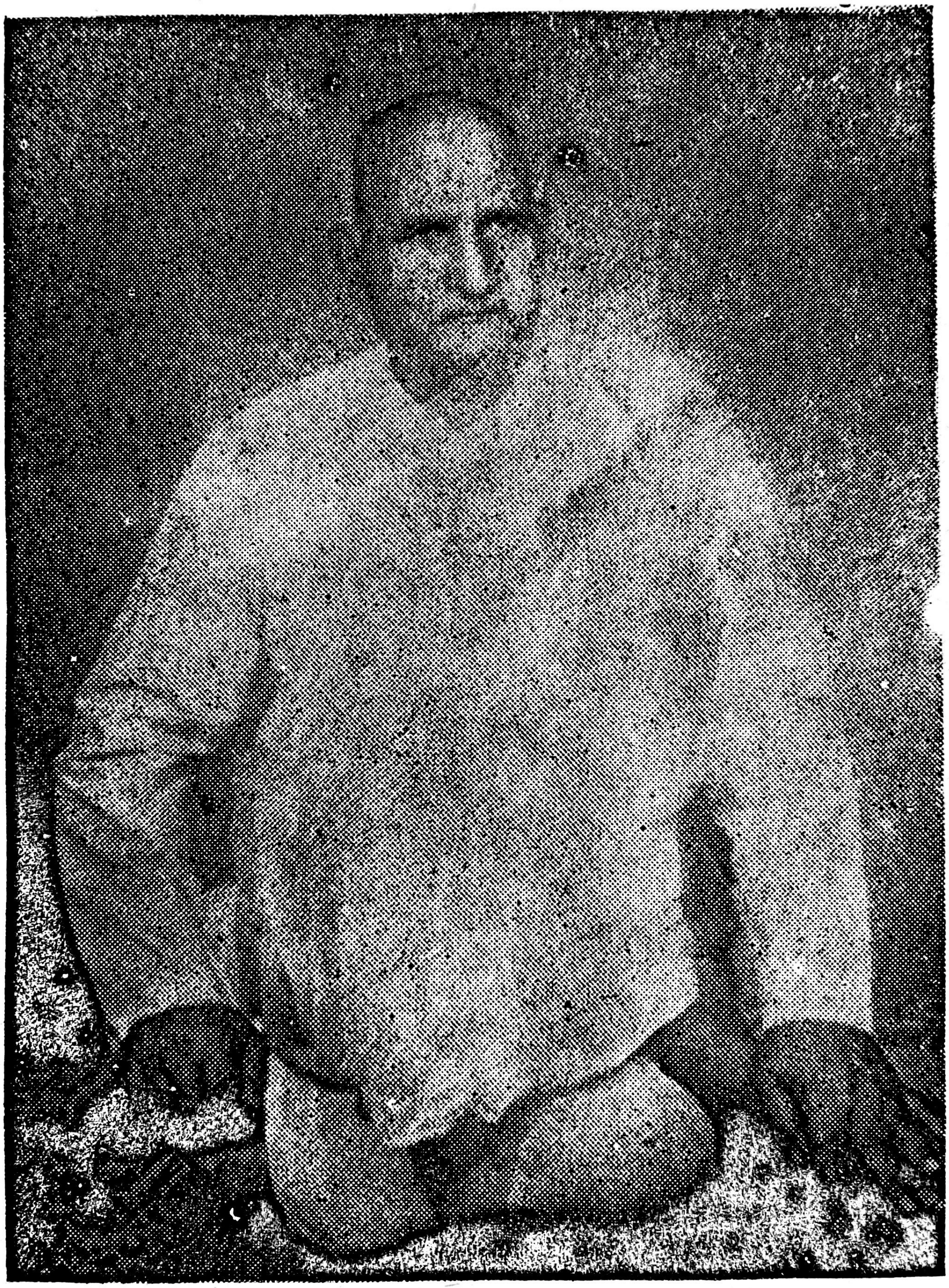


दातादयाल महर्षि शिवब्रतलाल बर्मन

एम०ए०, एल-एल-डी



परमसन्त, परमदयाल
श्री पण्डित फकीर चन्द जी महाराज



श्री कुबेरनाथ श्रीवास्तव एडवोकेट
रसड़ा बलिया (यू०पी)।

राधा स्वामी दयाल की दया

राधा स्वामी सहाय

राधास्वामी

अनुभव सार

परम दयाल

सतसंग कराने वाला अगर निष्काम व निष्कपट हो तो स्वयं इस अवस्था को पहुंच जाता है कि जो कुछ व कहता है वह ठीक होता है क्योंकि अभ्यास के कारण मन अमन, चित अचित और वुद्धि अवुद्धि की दशा में जव होती है तो जो वस्तु सामने आती है उसका अक्स दर्पण की तरह दिमाग पर पड़ता है और पूर्ण पुरुष हमेशा ऐसे लोगों को यह काम सुपुर्द करते है जो निष्काम व निष्कपट होते हैं।

सन्तों का सुधार केवल चौथे पद का वासी यानि अनामी धाम या अलख अगम लोक का वासी कर सकता है इसलिए परम सन्तों को उस अवस्था में जाना पड़ता है जहां देह, मन आत्मा का बोध मान नहीं रहता और रूह या सुरत, निरत होकर अपने स्वयं को खो देती है।

साधु की आंख कुछ और होती है हंस की आंख कुछ और होती है मेरी आंख में दो चार वर्ष के बाद कुछ और तबदीली आ जावेगी। आंख चमकीली क्यों हो जाती है? इसका कारण यह है कि ऐसा मनुष्य विन किसी के सहारे अथवा विना प्रेम किए सत्तलोक में रहता है। सत्तलोक में सहारा व प्रेम नहीं है। वह ज्ञान अनुभव या अपने स्वरूप की आंख है। इस के प्रमाण में स्वामी जी महाराज वो हजूर महाराज के फोटो देखो. स्वामी जी महाराज की आंख कुछ और है उन्होंने मन तथा अज्ञान की भक्ति नहीं की हजूर महाराज ने मन की भक्ति की है उनकी आंख की कुछ और दशा है। स्वामी जी की आंख केवल प्रकाशमय है हजूर महाराज की आंख में प्रकाश व ज्ञान के साथ प्रेम व भक्ति है।

यदि वास्तव में कोई अगम देश का वासी है तो निश्चय है कि जो सच्चा जज्ञासू उसकी विचार धारा को पढ़ेगा उसको अवश्य शान्ति मिलेगी।

अगर किसी सच्चे व तिव्र इच्छा वाले जज्ञासु को ऐसे पुरुष के सत्संग दर्शन, ध्यान और वचन से निभ्रान्ति, शान्ति और निष्कामता प्रसन्नता नहीं मिलती तो मैं यह समझूंगा कि उस पुरुष के अन्तर कमी है।

अव न भजन है न ध्यान है न सुमिरन है केवल सतगुरु का एहसान है।

अब न इश्क रहा न ध्यान, न अपना नामो निशान।

मिट गये सारे अनूमान, प्रमाण और ज्ञान॥

सन्त का ध्यान, उसका ख्याल, उसका जज्बा उसकी सुरत और उसकी हालत लेकर सन्त की तरह हो जाओ।

जिस मनुष्य में कोई भाव, भावना और विचार नहीं रहता यानी निश्चल हो जाता है कोई आशा नहीं रहती, उस अवस्था में जो कार्य करता है वह दयाल मत का कार्य है।

दाता दयाल का वर है कि जो कुछ कह देंगे वह सत्य होगा। इस लिए शब्द व प्रकाश में रहते हुए कुछ कह देते हूं तो वह सच होता है।

शन्ति का अनुभव शान्ति पुरुष की यानी सन्त के सतसंग से होगा।

गुरु की पहचान केवल सूक्ष्म ज्ञान वाले मनुष्य या भाग्य वान को ही मिल सकती है।

जो गुरु चौथे पद में नहीं रहते उनको नाम देने यां सतसंग कराने का कोई हक नहीं है अगर वह ऐसा करते है तो वह उनके लिए और उनके सतसंग करने वाले दोनों के लिए हानि कारक है।

अगर गुरु ठीक है तो शिष्य भी ठीक होगा वर्ना दशा विपरीत होगी।

गुरु की दृष्टि बड़ी तीव्र होती है। अधिकारी व अनाधि को तुरन्त भाप लेते हैं।

जव जब कोई संत प्रकट होता है वह अपने ध्यान को किसी न किसी रूप में राजनीति की ओर लगाता है। मगर पूर्ण रूप से वह उसकी ओर आकर्षित नहीं होता।

पूर्णता प्राप्त किए हुए पुरुष के संकल्प में शक्ति होती है। जब तक गुरु सेवा करके गुरु को प्रसन्न नहीं कर लिया जाता कोई भी खुशी सुख, चैन, आनन्द, ज्ञान व शान्ति प्राप्त नहीं कर सकता।

सच्चे सन्तों की संगत में वे गमी वे फिक्री वे खौफी और शान्ति मिलनी है।

खुशी नेकों के लिए ना खुशी बदों के लिए है। सन्त फकीर दोनों से ऊंचा रहता है। जो बड़ा वनता है वह जारा जाता है। जो छोटा होता है वह हकीर समझा जाता है। सन्त मान बड़ाई, और छोटाई दोनों से न्यारा है।

गृहस्थी होने के कारण माया का असर मुझ पर भी पड़ता है। उससे मैं दुखी तो नहीं होता मगर कुछ देर के लिए बाहर मुखी हो जाता है।

सन्त निष्काम बासना से शान्ति के परमाणुयों को फैलाते है।

अगर कोई बेग़र्ज़ है और दूसरों को सुख पहुंचाना चाहता है तो कोई वजह नहीं कि जो आदमी उसकी विचार-धारा को ध्यान पूर्वक अध्ययन करे उसमें परिवर्तन न आ जाए।

मैंने संतमत के रहस्य को खोल दिया है जिस को पहले के संतो ने गुप्त रखा था व केवल संकेत किया था। मैं जानता हूं कि इस भेद को समझना टेढ़ी खीर है। जब तक मनुष्य समाहित चित्त न हो और साथ ही किसी पूर्ण पुरुष का सतसंग और उसकी दया व सहानुभूति न हो कोई नहीं समझ सकता है।

गुरुमुख हो कर दूसरों से प्रश्न करना गुरु का अपमान करना है और गुरु से विमुख होने का चिन्ह है।

संसार में संत दुखी जीवों का दुख दूर करने के लिए आते हैं, उनकी सेवा यह है कि उनकी शिक्षा का प्रचार करो।

संत की आंख बन्द होती रहती है उस समय सर्वाधार का प्रेम मन में रहता है। उस प्रेम में सुरत कभी प्रकाश और कभी शब्द में खिची रहती है। ऊपर गए तो शब्द व प्रकाश का आनन्द लेता है। कभी सब कुछ भूल कर सर्वाधार हो जाता है।

अगर मैं किसी भयंकर रोग से मरा तो कहे जाता हूं कि सच्चाई, नेकी योग, और मन की सफाई वगैरह सब बेकार है।

तुम स्वयं बेफिक्र एवं बेग़म रहो जिससे तुम्हारे संस्कार दूसरों पर वैसे ही पड़े।

आत्मा तथा उच्च कोटि के जीवन को समझने के अधिकारी बहुत कम लोग होते हैं।

जीवन यानी देह, मन आत्मा का बोध भान का अनुभव जब तक मनुष्य नहीं कर लेता तब तक वह शान्ति, निर्वाण, सदगति तथा अपने आप में जहां से वह पैदा हुआ वहां वापस नहीं जा सकता।

संत को अपने जीवन में विश्वास हो जाता है, कि उसे अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष सब प्राप्त हो गया है और आवागमन का भ्रम मिट जाता है।

यदि कोई सचमुच सन्त है तो जो लोग उससे प्रेम करते हैं उनको अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष मिलना अनिवार्य है।

जो पुरुष दुख सुख से परे की अवस्था का वासी है उसका सतसंग दर्शन और ध्यान जो लोग करेंगे उनको बेग़मी, बेफिक्री और आनन्द मिलना अनिवार्य है। जो गुरु वासना रहित यानि निष्काम नहीं है वह किसी को मुक्त नहीं कर सकता है।

जो शान्ति के इच्छुक हैं गुरु उनको देह मन व आत्मा का बोध भान करा करके चौथे पद में ले जाता है।

जिसका मन पवित्र व निर्मल हो जाता है, इन्द्रियां जिस के वश में रहती हैं वह जो अभिलाषा करता है वह पूरी हो जाती है।

सतगुरु से जीवन व्यतीत करने का ठीक रास्ता मिलता है, शान्ति प्राप्त होती है और दूसरे की पूजा व अराधना का भ्रम समाप्त हो जाता है।

प्रत्येक मनुष्य का प्रारब्ध कर्म होता है, जब यह समाप्त होता है तब शरीर छुट जाता है।

महात्मा, योगी, सन्त इत्यादि यदि एकाग्र चित्त हों तो संस्कारी व अधिकारी जीवो का भला हो सकता है।

ऐसे सन्त का जो ध्यान करेगा उसको पच्चासी प्रतिशत सफलता मिलनी अनिवार्य है। जो शब्द व प्रकाश में रहता है। मैं उसको दाता दयाल का रूप मानता हूं। जो होना है हो के रहेगा जगत कल्याण का खप्त वहम हैं।

चूंकि इस काल व माया के देश में रेडियेशन का नियम सच्चा है, इसलिए जो व्यक्ति ऐसी अवस्था में रहने वाले का सतसंग करेगा उसको सहज समाधी निर्द्वन्द अवस्था प्राप्त होगी, चाहे वह साधन करे या न करे। मगर जिस के दिमाग पर बुद्धि और माया का प्रभाव है उसको सतसंग के साथ अभ्यास करना भी जरूरी है।

अपने कर्तव्य को पूरा करने के लिए मैं ऐसी वासना रखने के लिए विवश हूं कि जनता को उससे सुख व शान्ति मिले। गोकि यह बात सन्त मत की शिक्षा के अनुकूल नहीं है। मेरा यह कर्तव्य है कि अधिकारियों को लक्ष और ध्येय का ज्ञान दे जाऊं।

जिसने किसी विचार को श्रद्धा और विश्वास से ग्रहण कर लिया वह शिष्य है और जिसने उसको सच्चा हित और सच्ची सम्मति दी वह गुरु है। मन्त्र-सम्मति उपाय और विधी को कहते हैं, जिसने उसको समझ लिया और उस पर अमल किया उसका काम बन गया।

सैंकड़ों आदमियों में से कोई एक भक्त होता है। सैंकड़ों भक्तों में कोई एक ही ज्ञानी होता है। सैंकड़ों ज्ञानियों में से कोई लक्ष प्राप्त करता है।

अब मैं वहां जाना चाहता हूं जहां से सूरत निकली है। जो कुछ कर रहा हूं वह कर्ता पुरुष के संकल्प के अधीन है। मौज मुझ से जबरन करवा रही है।

सम्भव है। मेरे पास कुछ हो मगर मुझे इसका विल्कुल ज्ञान नहीं है।

साधु हंस परम हंस की रेडियेशन से आवा-गमन का चक्कर नहीं समाप्त होता। उसकी संगत मनुष्य को विवेकी, ज्ञानो और अनुभवी अवश्य बनाएगी। परन्तु स्थायी-रूप से मुक्ति नहीं दिला सकती है।

गुरु व चेला का सम्बन्ध काल व माया के देश तक ही रहता है।

जो गुरु पदवी पर आकर अपने मन और आत्मा को किसी दूसरे का सहारा लेकर ठहराता है वह गुरु नहीं बन सकता। हां गुरु भक्त हो सकता है।

जो कुछ होने वाला होता है उसका अक्स सन्त के मस्तक पर पड़ता है। चूंकि सन्त का मस्तक स्वच्छ होता है इसलिए वही बात उसके मुख से निकलती है जो होने वाली है।

'मैं' कोई और वस्तु है 'मन' कोई और वस्तु है। इसलिए जब मन के खेल के रंग व रूप मेरे सामने आते हैं वह मेरी सुरत को अपनी ओर खिंच नहीं सकते मैं कभी साक्षी बन कर इनको देख लेता हूं, कभी अपनी सुरत को इनसे खींच लेता हूं।

सतगुरु के दरबार में जो व्यक्ति उनकी बाणी को सुन कर गुनता है उसकी सूरत स्वयं देह, मन और आत्मा के लगाव से छूट कर उपराम हो जाती है :

जो मनुष्य अपने को शब्द और प्रकाश का रूप बना लेता है उसमें यह गुण होना चाहिए कि शब्द और प्रकाश में लय होने की हालत से उठ कर जो कह दे वह सत्य और ठीक हो।

सन्त का स्वार्थ या प्रयोजन यही है कि वह तुमको दिव्य दृष्टि, उदार-चित्त तथा दूरदर्शी देखे।

लय की हालत में मनुष्य की ऐसी गति होती है कि यदि वह सोता है तो कांटों पर पड़ा रहता है, अगर गाने की इच्छा होती है तो घण्टों गाता ही रहता है। भूख, प्यास थकावट नाम को भी नहीं आती है। उसका जीवन कुछ ऐसा बन जाता है जिसकी उपमा नहीं है।

अगर कोई सच्चा साधु वैद्य हो और उसका आदर्श रुपया कमाना नहीं हो बल्कि जीवों को सुख व शान्ति देना हो तो जनता को बहुत कुछ लाभ हो सकता है।

संसार वालों को जीने की इच्छा है और सन्त को मरना और जीना एक समान है।

संतों की हालत देह, मन और आत्मा से ऊंची है, जनता के हित के लिए अपने ऊपर दबाव डाल कर नीचे के मण्डल में आकर कहते या लिखते रहते हैं।

याद रखो अभ्यास की श्रेणियों को सिवाय पूर्ण पुरुष के दूसरा कोई नहीं पूरा करा सकता है।

पूर्ण पुरुष का वचन प्रभावशाली और सत्य होता है। गुरु जनों को पूर्ण रूप से निष्काम होना चाहिए ताकि उनके शिष्यों को गुरु बदलने की जरूरत न हो।

जो व्यक्ति शब्द और प्रकाश में रहता है, वही गुरु होने का अधिकारी है। मैंने बसरा में 12 वर्ष तक तप किया तब नाम को समझ सका। मैं गुरु बनकर नहीं आया था बल्कि गुरु मत को समझने आया था।

काल का प्रभाव संतो पर नहीं पड़ता जब में यह विचार करने लगता हूं कि काल का प्रभाव मुझ पर है या नहीं ? तब मेरी सुरत निरत हो कर अनामी पद में समा जाती है।

जो लोग संत का सत्संग इस नियत से करते हैं कि वह काल कर्म से निकल जावें वह मुक्त हो जावेंगे।

जो संत की बातों को समझते हैं वह मन के उलझन में नहीं फंस सकते हैं।

जो व्यक्ति रहस्य को समझ गया है उसके लिए सत्संग कराना अनिवार्य है।

जब तक गुरु आप दया न करे कोई उसपर विश्वास नहीं कर सकता यानी किसी का विश्वास उन पर टिक नहीं सकता।

संत की सुरत शब्द व प्रकाश में खिचती रहती है। और उस खिचाव में वह आनन्द लेता रहता है। उस हालत में जब कभी वह नीचे आता है तो दुनियां स्वप्न मालूम होगी।

जब तक लय अवस्था न आ जाय तब तक गुरु के रूप का ध्यान करते रहो। जब निष्काम हो जाओगे तब गुरु की जरूरत नहीं रहेगी।

फकीरी का सम्बन्ध बाहरी आडम्बर से नहीं है। फकीर के मन में त्याग होना चाहिए।

अगर तुम को बाहर में पूर्ण गुरु नहीं मिला हुआ है तो लाख कोशिश करो अन्तर में गुरु का दर्शन नहीं होगा।

हम न जिस्म हैं न दिल हैं न रूह हैं हम तीनों से परे हैं। अपने स्वयं के तरफ जाने के लिए कुदरती तीन सुन्न को पार करना है, देह, मन, व आत्मा के बोध भान को छोड़ो। सुमिरन देह से हटने के लिए ध्यान मन से हटने लिए व शब्द योग व विस्माधी आत्मा से हटने के लिए है।

मेरी समझ में सच्चा आत्मिक सुधार केवल यह है कि मन संशय, भ्रम, इच्छा, स्वार्थ और वासना से रहित होकर शान्त बन जाए।

याद रखो जब तक ब्रह्मांड की सैर से जी नहीं भर जायेगा और उदासीनता नहीं आवेगी तब तक स्वयं की ओर ध्यान नहीं जावेगा।

दाता दयाल कहा करते थे क्या पता मैं फकीर का गुरु हूं या फकीर ही मेरा गुरु है?

मेरी समझ में करनी प्रेम को कहते हैं। बजाय पत्र लिखने के अगर किसी काम के वास्ते कोई किसी सच्चे पुरुष का ध्यान सच्चे दिल से करे तो वह जरुर पूरा हो जायेगा।

योगी जन को चाहिए कि वासना रूपी सूक्ष्म प्रकृति इकट्ठा कर के गोलाकार प्रकाश उत्पन करें और उसकी धारें संसार में फैलावें।

जिनको पूर्ण पुरुष न मिले उनको चाहिए कि अपने विचार से किसी को पुर्ण माने और उस पूर्ण रूप से अपने अन्तर प्रेम करें मानसिक सिद्धान्त के अनुसार समय आने पर वह पूर्ण हो जावेगा।

सतगुरु उनको मिलता है जिनके हृदय में प्रेम भाव है।

अध्यात्मिक शान्ति तथा सार भेद केवल उस प्राणी के भाग्य में आता है जो पूर्ण रूप से अपने आपको सच्चा बना लेता है।

आस्तिक व्यक्ति के सिवाय कोई आदमी इस मस्ती को अपने अन्दर पैदा नहीं कर सकता। जिनको आत्मिक अनुभव होता है उनकी आंखों में खास तौर की आभा और मुखाकृति दिव्यमान होती है, ऐसा मनुष्य अधिकतर मौन रहता है। यदि शारीरिक दशा निर्बल है तो कभी २ आवेश में आकर अन्दरूनी हालत कह देता है। इस आनन्द को सम्भालना कठिन काम है। जो इस दशा में विचार रूप में आता है और स्वयं अनुभवी नहीं होता वह रूखा फीका रहता है। उसका जीवन जवानी जमां खर्च का होता है।

जो सूरज ऊंचे मण्डल का है वह इस सूरज से बहुत वड़ा होगा।

आपको आप में लय कर दो या शब्द डोर में समा जाओ। बिना अन्तर का शब्द खुले सत्य का भान नहीं होता गो कि यह भी पूर्ण लक्ष नहीं है।

शान्ति व सुख सहज समाधी में है। अपने आप को पहिचान कर धैर्य और अडोल व अहंकार रहित जीवन व्यतीत करो। आदर्शपना भी भ्रम है।

मन ही गुरु और मन ही चेला है। मगर यह सब भेद बाहरी गुरु के अधीन है।

गुरु नाम है दयाल का, दयाल वह है जिस में दया हो। दयाल के भक्त कोमल हृदय के होते हैं। गुरु की मौज का सम्मान करते हुए वह एक दम के लिए भी अकड़ की हालत में नहीं आते। गुरु के बचन को पालन करना और अनुकूलता की जरूरत है। जिसको "शास्त्र" कहते हैं वह केवल गुरु का बचन है।

रहस्य को समझ जाने के बाद भी सुरत को खींच कर ऊपर ठहराना किसी शूरवीर का काम है।

गुरु की आज्ञा का उल्लंघन करना महापाप है। जब तक शुभ और अशुभ दोनों प्रकार की वासनाएं नहीं समाप्त होती कोई आदमी काल-चक्र से नहीं बच सकता।

दौड़-धूप खोज खाज करने के बाद खामोशी के सिवाय और कुछ हाथ नहीं आता। जिह्वा को और अनुभव को वो शक्ति नहीं कि वह कुछ कह सके मगर आश्चर्य यह है कि जब तक शरीर है इस धुन से छुटकारा नहीं होता। शारीरिक जरूरीयात के लिए मानव, मानव का सहारा चाहता है। मन में मानसिक रूप का सहारा चाहता है। प्रकाश में चला गया तो प्रकाश का सहारा चाहता है। शब्द में चला गया तो शब्द का सहारा चाहता है। और अगर मेरे जैसा खोजी ऊपर चला गया तो वह परम तत्व का सहारा चाहता है।

सन्त का यह स्वभाव होता है कि जिस आदमी को छल कपट नहीं होता और उसको किसी वस्तु के पाने की तीव्र इच्छा होती है और उस की आंखों और चेहरे से उसको ऐसा विश्वास हो जाता है तो वह निर्भय होकर उस शक्ति से जो उसको इस शब्द व प्रकाश के साधन से प्राप्त हुई है उसको अपनी शक्ति हित या विचार देता है और इससे उसको जरूर लाभ होता है। अपने ऊपर दबाव डालकर सन्त यह कार्य नहीं करता बल्कि वह स्वभावतः होता रहता है।

सहज समाधी की हालत में खोज तथा वासना नहीं रहती। ऐसे मनुष्य की दशा बच्चे की तरह हो जाती है, उसको न आगे के लाभ का ध्यान रहता है न पीछे के घाटे का ख्याल रहता है उसको भविष्य व वर्तमान एक जैसा मालूम होता है।

जहां संसार है वहां गति है। अपने विचार को संसार से यानी जहां गति है से हटा कर वहां ले जाओ जहां गति नहीं है, तब माया व काल से बचोगे।

बड़े ही भाग्यवान को किसी सन्त के दर्शन व सतसंग मिलते हैं। उससे अच्छे भाग्यवान को नाम मिलता है। उससे बढ़कर भाग्यवान लोग नाम की कमाई करते हैं।

इस माया तथा काल देश के परे दयाल देश है। दयाल देश के परे सच्चा साहिब है।

प्रकाश देश के पार केवल सन्त जाते हैं। जिसने मन की मुहर सतगुरु के आगे भेंट की हुई हैं। वह मन की मुहर कैसे भेंट करते हैं। किसी सत पुरुष के सतसंग में जाकर मन बुद्धि, विवेक और अनुभव की शक्ति को प्राप्त करते हैं।

अपने जीवन को अमली बनाओ। मेरा घर शब्द व प्रकाश है वही सच्चा दातादयाल है।

बाहर के दाता दयाल का एहसान याद करके उनकी शिक्षा का प्रचार चाहता हूं ताकि उनका नाम रहे। मैं चाहता हूं कि सार वस्तु तुम्हारी समझ में आ जाए। धाम डेरा मसजिद व सतसंग घर काल व माया का झकोला है।

घोर परिश्रम के बाद अन्तर में शब्द व प्रकाश पैदा होता है।

आत्म विद्या की शिक्षा की युक्ति को अनाधिकारियों से गुप्त रखा गया है उनसे इस रहस्य को गुप्त रखने में ही भलाई है, इसके अधिकारी बहुत कम लोग हैं। अधिकारी मनुष्य बड़ी गम्भीरता से आत्म ज्ञान की बातों पर सोच विचार करते हैं और दृढ़ता और मेहनत के साथ इसकी प्राप्ती में लगे रहते हैं।

प्रकृति का सब से ऊंचा और असली स्जोत क्या है, सत्य क्या है? इस खोज में चाहे जितनी कोशिश करो तुम सदैव असफल रहोगे।

जब मेरे जैसी अवस्था किसी को आ जायेगी उस समय मेरी अन्तरीय अवस्था का उसको कुछ २ अनुभव होगा।

मैं बुद्धि विवेक और उन्नति के आदर्श से बहुत ऊंचा चढ़ गया हूं। मुझे अब कुछ करना धरना नहीं है। करना धरना ब्रह्म के लिए है, मैं पुरूष हूं।

मैं चंचल वृति वालों को पसन्द करता हूं। जिस घोड़े में शोखी नहीं है वह किसी काम का नहीं है। ईश्वर ने हमको पैदा करके हमारे अन्दर आस भर दी। हमको इसके पूरा करने के लिए ईश्वर की सहायता ढूंढनी पड़ी इस तौर ईश्वर ने हमसे अपनी पूजा आप कराई।

तुम ईश्वर की खोज अपने अन्तर में करो बाहर खोजोगे तो नहीं पा सकते।

बजाय इसके कि सतसंग के लिए मेरे पास आते, तुम लोग मुझे ही अपने पास बुलाते हो। इससे सतसंग का महत्व कम हो जाता है। मैंने इस वस्तु को जान पर खेलकर प्राप्त किया है।

जो लोग ईश्वर का रूप बनाते हैं वह संसारिक वस्तुओं के वास्ते बनाते हैं।

नाम को तुम अपने अन्तर में पकड़ो इस नाम को तुम उस हालत में पकड़ सकते हो जब तुम्हारा मन तुम को नीचे न खींचे।

जब से मुझे यह ज्ञान हो गया कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता तब से हमारा खून व वीर्य्य बदल गया।

तुम्हारा आत्मा संकल्पों से परे है जो हिरण्यगर्भ प्रतिबिम्ब है, पहले प्रकाश पैदा होता है उसके बाद शब्द आता है। जब प्रकाश आ जावेगा तुम आत्मा स्वरूप हो जाओगे और तुम्हारी दुनियां बदल जायेगी।

जब तक गुरु के ऊपर तुम को यह विश्वास नहीं होगा कि वह सत्त के परे की अवस्था का वासी है तब तक उसके रूप के ध्यान से बेड़ा पार नहीं होगा।

जब तक मनुष्य ईश्वर के रूप को समझकर इससे परे नहीं जाये तब तक उसका जन्म मरन समाप्त नहीं होता।

हमारा आत्मा प्रकाश स्वरूप है, ईश्वर का जो आत्मा है वह परमात्मा है यानी महान प्रकाश का समुन्द्र है। प्रकाश वास्तव में नहीं मरता मगर जब नीचे आ जाता है तो जन्म मरन लेता है और अगर ऊपर यानी अपने भंडार में चला गया तो जन्म मरन से रहित हो जाता है। जो मनुष्य शरीर ही तक सीमित है उसका ध्यान ईश्वर की ओर नहीं जा सकता वह ईश्वर के पूजने की ओर ध्यान नहीं देगा।

जिन सच्चे लड़कों ने अपने माता पिता की सेबा की उनकी रक्षा होती है, ईश्वर के स्थूल विराट की सेवा करना ही मानव सेवा करना है सूक्षम विराट की सेवा करना मानव की सेवा करना नहीं है सूक्षम विराट की सेवा अपने स्थूल शरीर रूपी विराट से करना है।

ईश्वर के अव्यकृति रूप की सेवा मन से होती है, ईश्वर के कारण रूप की सेवा आत्मा से होती है। उसके सूक्ष्म रूप यानी परमात्मा हिरण्यगर्भ की सेवा आत्मा से होती है। तुम्हारे आत्मा स्वरूप प्रकाश के भंडार के साथ मेल करने का नाम हिरण्यगर्भ की पूजा है।

मानसिक जगत से शान्ति प्राप्त करने का अगर कोई सच्चा ज्ञान दे सकता है तो वही दे सकता है जिसकी आत्मा प्रकाश के भण्डार में लय हो सकती है।

मेरी समझ में सुरत को शारीरिक मानसिक और आत्मिक प्रभावों से अलग रखना अहिंसा है हिंसा और अहिंसा के ध्यान को मन में न रखते हुए अपने रूप में स्थित रहना और प्रसन्न रहना चाहिए।

इस बात का ध्यान हमेशा रखना चाहिए कि मैं अकाल पुरुष का अंश हूं। सत लोक से इस संसार में केवल खेल खेलने आया हूं। यही बात गुरु के मुक्त रूप का सुमिरन है। अब मेरा साधन दसवें द्वार या सोहंग के आगे से शुरु होता है। सहस दल कंवल त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न व भंवर गुफा का साधन छुट गया।

स्वामी जी ने ठीक लिखा है कि गौतम बुद्ध भी दसवें द्वार से आगे नहीं गए।

वह वस्तु जिसको मजनु प्रेम करता था वह लैला नहीं थी वह तो अपने मन ही को प्रेम करता था। इसका नतीजा यह हुआ कि वह अपने जीवन को नष्ट कर गया।

कवियों से केवल यही लाभ होता है कि मनुष्य इनकी रोचक या भयानक बातों में खिच जाता है। खेंचातानी हमारा काम नहीं है। यह गुरु का काम है। मैं सत गुरु हूं, मेरा काम सत्त वर्णन करना और खेंचातानी से बाहर करना है।

मैं यह कहने का साहस नहीं करता कि मैं प्रकाश को पैदा करता हूं। प्रकाश मेरे शरीर में पहले ही था, उसको प्रगट करना दूसरी बात है।

मैं चलते २ जब आत्मा का प्रकाश समाप्त कर देता हूं तो अकेला निज स्वरूप रह जाता है अब निज स्वरूप से भी आगे चलता रहता हूं। मगर मेरी बात कौन समझेगा। यह गुरु की कृपा और मन की निर्मलता से होता है।

अपने हैंपने की अवस्था में भी मेरी खोज समाप्त नहीं होती यह वहां समाप्त होती है जहां मैं अपने को भूल जाता हूं।

जब मैं किसी के दुःख को दूर करने की इच्छा करता हूं तो मैं उसके दुःख को अपना दुःख मानकर चाहता हूं कि वह दूर हो जाये।

जो सच्चे गुरु होते हैं वह हृदय से चाहते हैं कि समय पर उनका शिष्य भी उनके ऐसा हो जावे।

मेरे लिए अब सत्तलोक की कोई महानता नहीं है मैं अब अलख व अगम लोक का वासी हूं।

यदि महात्मा गांधी प्रकाश के रूप का साधन करते होते तो उनके कार्य का परिणाम रक्तपात नहीं होता।

मेरे दिल में यह सच्ची लगन है कि मुझ से प्रेम करने वाले जो दो चार आदमी हैं उन में यह शक्ति आ जाये कि वह सच्चा पथ प्रदर्शन कर सकें।

मेरा निज अनुभव है कि सुरत हमेशा स्वामी के देश में ठहर नहीं सकती।

भारत वर्ष की स्वतंत्रता समय से पहले मिली है, इसी वजह से हमारी शिक्षा समय से पहले है ताकि इसकी स्वतन्त्रता स्थित रहे।

अगर किसी ने देह, मन वो आतमा का बोध मान वो आनन्द प्राप्त किया तो क्या हुआ जब तक उसने प्रमातमा का बोध भान नहीं किया। जीवन २ ही बना रहा। आवागमन समाप्त नहीं हुआ जीवन हस्ता नहीं बना हस्ती सत्त पद सत्त या सत्तलोक को कहते हैं। सत्तलोक में कोई पूरी तौर उस समय ठहर सकता है जब उसको किसी प्रकार की इच्छा नहीं रह जावे आत्म अवस्था को मस्ती कहते हैं हस्ती में देह मन वो आतमा का बोध भान नहीं रहता। वहां केवल शान्ति है इस दशा को प्राप्त करने के लिये निष्काम प्रेम करना चाहिए, जब मनुष्य इस दशा से निष्काम प्रेम करता है और कोई इच्छा नहीं रखता तब वह वहां पहुंच कर ठहर सकता है।

कबीर साहब ने कहा है कि वहां मोती बरसता है वो अमृत चुता है इसका अर्थ यह नहीं है कि वहां मोती बरसता है वो अमृत चुता है उसका अर्थ यह है वहां पहुंचने पर प्रत्येक प्रकार की वासनायें त्रिप्त हो जाती हैं। कोई चाह नहीं रहती वह अपने स्वयं के आनन्द को भी भूला हुआ रहता है।

असली बात यह है कि गीता, महाभारत की लड़ाई के बाद उस लड़ाई के आधार पर लिखी गई है न कि लड़ाई के समय श्री कृष्ण ने अर्जुन को समझाया है क्योंकि जब महाभारत की लड़ाई का टेपरेकार्ड लिया गया तो लोगों की पुकार, घोड़ों की

हिनहिनाहट हाथियों का चिंघाड़ ही टेपरेकार्ड में आया और गीता की कोई बात नहीं आई।

अपना आपा कोई बदल नहीं सकता यह हो सकता है कि कोई अपनी तिब्र विचार शक्ति से उसको अच्छा रंग दे सके मगर वह अव्याकृत वो हिरण गर्भ के अधीन होगा स्वभाविक तीब्र विचार सभी को अव्याकृत वो हिरण गर्भ स्वयं प्रभावित होकर वैसा कार्य करने को विवश करते हैं जैसी उनकी इच्छा या मौज होती है। जैसी दशा संतों की है ऐसे लोगों पर यह दोनों स्वयं प्रभावित होते हैं क्योंकि संत इन से मिले जुले समीप रहते हैं।

✣ संत ✣

जो मनुष्य स्वयं सुखी रहना चाहता हैं और दूसरों को सुखी देखना चाहता है वह सतसंगी हैं।

जो मनुष्य "स्वयं" को सुखी रखने और दूसरों को सुखी रखने की युक्ति को अमल में लाकर जीवन व्यतीत करता हैं वह साधु है।

जो मनुष्य अपने इष्ट को पूर्ण मान कर अपने को स्वयं शरणागत कर देता है उसके चित्त की वृत्ति शान्त हो जाती है। जो अपने स्वरूप में या अपने आप में ठहरा रहता हैं और किसी दूसरे की मदद नहीं चाहता वह सच्चा साधु हैं।

जो मनुष्य मानसिक प्रकृति के खेल का ज्ञाता है वह साधु हैं। जिस मनुष्य के मन में किसी से द्वेष इर्षा व मतसर नहीं हैं वह साधु है। ऐसे महात्मा या साधु जो अपने शुद्ध भाव से तमाम दुनियां को देखते हुए सब के हितैषी हैं उनसे द्रोह रखने वाला मनुष्य नष्ट भ्रष्ट हो जायेगा?

साधु की संगत और उसके परमाणुओं से जिन्दगी को सब जरूरीयात पूरी हो जाती हैं।

जो मनुष्य दिली व मानसिक विचारों के प्रभावों को समझता है (जिस तरह वैद्य या डाक्टर शरीर को दशा समझते हैं) और उस के अनुसार स्वयं और दूसरों को समझाते हैं वह हंस हैं।

हंस की संगत से बुद्धि व ज्ञान प्राप्त होता है. जिस मनुष्य में द्वेष ईर्ष्या, लोभ, मोह और अहंकार आदि प्रभावित हैं वह हंस नहीं हो सकता।

जो मनुष्य हंसपने की हालत के साथ पूर्ण रूप से ख्यालात या ब्रह्म वो ब्रह्माण्ड के खेलों का ज्ञान रखता है वह परमहंस है।

परमहंस की संगत से मानसिक चैन मिलता है जो मनुष्य शरीरिक और मानसिक जीवन के प्रभावों को न ले और अपने हैपने के यकीन को पक्का करके अडोल निर्भय और अभय पद में जीवन व्यतीत करे वह सन्त है।

सन्त की संगत से मानसिक आनन्द वो शान्ति मिलती है। जो व्यक्ति अपने हैपने को स्थायी रूप से भूल कर यानी हर प्रकार के प्रभावों को त्याग कर संसार में बच्चे की तरह जीवन व्यतीत करता है वह परम सन्त है।

परम संत की संगत से अचिन्ता, निर्भयता और अमर पद प्राप्त होता है।

जो मनुष्य मानसिक प्रकृति के खेल का ज्ञाता है वह साधु है जो आत्मिक रहस्य का ज्ञाता है वह संत है जो शरीर, मन और आत्मा के भेद का ज्ञाता है वह परम संत है।

जीवों को चिताने का अधिकार साधु को है। जोगियो को चिताने का अधिकार हंस को है। हंसों को चिताने का अधिकार संत को है।

पूर्ण पुरुष वह होता हैं जो सहज वृति में रहता है। पूर्ण पुरूष के सतसंग से पूरा-पूरा लाभ उस मनुष्य को होता है जिसके दिल में सुख सकून व शान्ति की हार्दिक तपन पैदा हो गई है।

पूर्ण पुरुष की हार्दिक इच्छा रहती है कि जो मनुष्य उससे प्रेम करता है वह उसी की तरह आजाद व शान्त हो गई।

पूर्ण पुरुष के सतसंग के बचनों को प्रेम व श्रद्धा से सुनने वाला मनुष्य बिना किसी परिश्रम व थकावट के सुगमता पूर्वक अपने से सत पद की अवस्था को प्राप्त कर लेता है।

पूर्णता की अवस्था की प्राप्ति के बाद पूर्ण पुरुष का काम केवल यह रह जाता है कि वह सबका भला चाहे।

पूर्ण पुरुष और सच्चे साधु के विचार में महान शक्ति होती है चूंकि वह सहज वृति में रहते हुए दूसरों का भला चाहते हैं?

उसका विचार और भाव अधिकारी के मन को संचालन करके सुगमता से रहस्य को प्राप्त करा देता है।

पूर्ण पुरुष की सहानुभूति उस समय ही लाभदायक होती है जब वह स्वयं ठीक केन्द्र पर ठहर कर सहानुभूति देता है।

बहुधा पूर्ण पुरुष बिना किसी लगाव के रेडियो के नियम के अनुसार अनजाने प्रभावित होते हैं।

पूर्ण पुरुष रहस्य और यथार्थ अपने जीवित प्रमाणों से संकेत से और शब्दों से प्रगट करते हैं। किन्तु इसके समझने के अधिकारी बहुत कम हैं।

पूर्ण पुरुष का हित उनसे सम्बन्धित मनुष्यों की सम्भाल उनके गिरावट व दो चिताई के समय करता है।

पूर्ण पुरुष की सुरत परम पद में रहती है जो कि एक ऐसी अवस्था है जहां न प्रेम न विरह या विछोह है, न राग है न वैराग है। न ज्ञान है न अज्ञान, न मुक्ति हैं न भक्ति किसी वस्तु की इच्छा नहीं रहती है यहां तक कि परम तत्व को पाने की भी इच्छा नहीं रहती है। ऐसे मनुष्य को माया के रूप का ज्ञान हो जाता है। उसको काग बुद्धि नहीं रहती और हंस बुद्धि आ जाती है।

सन्त वह है जो केवल शब्द प्रकाश में रहता है जो मनुष्य स्वच्छ दिल और दिमाग का होता है जिस में क्रोध और बदला लेने की भावना नहीं है और सम अवस्था में रहता है वह फकीर है।

संत शब्द व प्रकाश का रूप हो जाता है उस पर किसी का प्रभाव नहीं पड़ सकता है। शब्द व प्रकाश से माया नष्ट हो जाती है।

जो मनुष्य अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए निर्भय, निर्वैर और अडोल रहता है। वह संत है।

जो मनुष्य कटु-वचन को सुनता है और मन को विचलित होने नहीं देता, समता बनाए रखता है वह सन्त है।

सन्त वह मनुष्य है जिसका देह, मन और आत्मा स्वभाविक रूप से प्रकृति से मिल कर एक हुआ है उसके दिमाग पर ब्रह्माण्ड की धार यानी मौज प्रभावित होकर वही कहलाती है और वही कराती है जो कुछ मालिक की मौज होती है।

सन्त वह है जिसकी वृत्ति किसी समय छिन्न न हो न डोले यानो अडोल रहे। जिस मनुष्य की वृत्ति निर्भय, निर्वेर, अडोल और विस्माधी रहती है वह साधु है जिस मनुष्य में प्रेम व दया है जो दूसरों की गलती को क्षमा करता है और सत्य का साक्षात स्वरूप है वह सन्त है।

सन्त को सन्त ही पहचान सकता है। सन्त सर्वव्यापक होकर दूसरों को खुशी प्रदान करते हैं उनकी देह, मन और आत्मा में समता रहती है। उनके मन व बुद्धि नियमानुकूल रहते हैं।

सन्त को निज स्वरूप में पहुंच कर सर्वव्यापक होने का बोध भान नहीं रहता।

सन्त जग के दुःख को पल भर में दूर कर देते हैं यह बात उन मनुष्यों पर लागू होती है जो उन पर विश्वास रखते हैं।

जो सन्त ऊंचे मण्डल में रहते हैं चूंकि वह नीचे के मण्डल में कम आते हैं इसलिए वह दुनियां यानि नीचे मण्डल में रहने वाले मनुष्य की इच्छा की पूर्ति कम कर सकते हैं। उनकी भी पूर्ति हो सकती है वशर्ते की उनमें विश्वास हो।

फकीर हमेशा अधिकार व संस्कार देख कर शिक्षा देता है।

सन्त गति में पहुंचे हुए मनुष्य का न कोई मित्र रहता है न कोई शत्रु होता है।

सन्त होने वाली बात को जानते हैं।

सन्त या फकीर का मस्तक चौमुखी दर्पण होता है। उन पर श्रोताओं के भाव व विचार का अक्स पड़ता रहता है और उसीके अनुकूल उनके मुंह से बातें निकलती रहती हैं।

सन्तों को अपने हैंपने अथवा स्वयं में एक हालते बेहालती रहती है जो कि इस संसार के रूप रंग व रेखा को भूली हुई है।

संत या फकीर कभी तलवार से काम नहीं लेते हैं। संत या फकीर सोच विचार कर यानी बुद्धि पर जोर देकर कोई बात नहीं करते स्वभावतः जो मौज कहलवा देती है कह देते हैं।

सन्त या फकीर सतसंग कराते वक्त उस अवस्था में रहते हैं कि दूसरे लोग उसका प्रभाव ग्रहण कर सकें और उनका रेडियेशन ले सकें।

सन्त अपनी विचारधारा के अन्तर्गत जनता को ला सकता है।

सन्त का निज अनुभव वाह्य प्रभावों पर आधारित होता है। शब्द व प्रकाश सन्त के अधीन है। सन्त शब्द व प्रकाश के अधीन नहीं है।

सन्त चूंकि शब्द व प्रकाश में रहते हैं अतः अगर वे भूत-प्रेत के स्थान पर चले जाएं तो या तो भूत की योनी बदल जायेगी या, वह उस स्थान को छोड़ देगा।

बहुत संत बोलते हैं बहुत मौन रहते हैं। मौन रहने वाले सन्तों की रेडियेशन बोलने वाले सन्तों से ज्यादा प्रभावित होती है।

सन्त के मुंह से वही बात निकलती है जो होने वाली होती है।

सन्त प्रश्न करने वाले मनुष्य की सूरत देखकर भांप जाते हैं और उसी के अनुकूल उत्तर देते हैं।

सन्त दूसरों के दोष छिपाते हैं और इसके लिए अपने ऊपर दुःख व क्लेश उठाते हैं।

सत पुरुष प्रकाश व शब्द के लोक को कहते हैं, सत पुरुष प्रेम के वदले प्रेम देता हैं। सत पुरुष किसी से प्रेम या द्वेष नहीं

करता है और ऐसी अवस्था में रहता है कि दूसरे मनुष्य उस अवस्था को उस से प्राप्त कर सकते हैं वह दे नहीं सकता।

सत पुरुष की संगत व्यवहारो दुनियां में भी जरूरी है।

सत पुरुष की वृत्ति बहुत ऊंची चली जाती है, उनके आनन्द-मय कोष का पर्दा फट जाता है मगर उसकी छाया मौजूद रहती है जिस दिन वह उतर जाती है सत पुरुष का शरीर नहीं रहता।

विदेह गति में आये हुए पुरुष ज्यादा दिन जिन्दा नहीं रह सकते हैं।

सत पुरुष का प्रति दिन का यही कार्य है कि वह इस ब्रह्माण्ड में प्रसाद भेजता है कि प्राणी मात्र को शान्ति प्राप्त हो।

गुरु की चार श्रेणियां हैं।

प्रथम :— श्री गुरु, वाह्य पूर्ण पुरुष जो स्वयं पूर्ण हो, जिन को ऊंचे से ऊंचे और नीचे से नीचे अवस्था का अनुभव हो।

द्वितीय :— सत गुरु जो प्रकृति नियम का ज्ञाता होने के कारण उसके रहस्य को समझता हुआ श्रेष्ठ हित और मत दे सकता है।

तृतीय :— युगादी गुरु वाह्य जगत और अन्तरीय जगत के शब्द व प्रकाश में रहने वाला गुरु जो वाह्य और अन्तरिक संसार में अपनी संसारिक, मानसिक व आत्मिक अवस्था को श्रेष्ठ बना सकता है।

चर्तुथ :— आदि गुरु जो सब का आधार परम तत्व, अकाल, पुरुष अथवा अनाम पद है।

पहला गुरु प्रेम प्रबल इच्छा सच्ची लगन और तड़प है।

दूसरा गुरु श्रद्धा और विश्वास है।

तीसरा :— प्रकाश।

चौथा :— शब्द नाम धुनी।

गुरु अटल विश्वास का नाम है। असली गुरु शब्द व प्रकाश हैं इसको छोड़कर दूसरा गुरु नहीं है।

गुरु नाम है उस ज्ञान का समझ का जिसके द्वारा मनुष्य अपने शारीरिक व मानसिक जीवन को बेहतर बना सकता है। यह समझ ज्ञान या विवेक त्रिकुटी के स्थान पर साधन करने से पैदा होती है। प्रतिबन्ध यह है कि किसी सत पुरुष का सतसंग मिल जाए यदि मनुष्य स्वय ऐसा साधन करने से मजबूर हो तो पूर्ण पुरुष के आदेश अनुसार जीवन व्यतीत करें।

गुरु की महमिा यह है कि वह अपने शिष्य का कर्म कटा देता है।

गुरु की बड़ी भारी महिमा यह है कि जो संस्कार देते हैं वह समय पर अपना रंग लाता है।

जिस बाह्य पुरुष की दया से मनुष्य में माया की समझ आ जाए उस पुरुष को माया की दृष्टि से गुरु कहते हैं। अपने आप को कभी कोध, ईर्षा और द्वेष इत्यादि में न आने देना गुरु है और सदा प्रसन्न चित्त रहना गुरु की सेवा है।

गुरु को निरिक्षित, सच्चा और हितैषी होना चाहिए।

जो आचार्य या गुरु अपने शिष्य से प्रेम करता है वह उसकी बुरी आदतों को ग्रहण करता है।

गुरु को पूर्ण शारीरिक दृष्टिकोण से नहीं कहते बल्कि मानसिक दृष्टिकोण से कहते हैं।

सत गुरु या मालिके कुल तमाम ब्रह्मांड का आधार है और सब में रहता हुआ सबको आबाद किया हुआ कायम रखता है।

सत गुरु या मालिके कुल *Existence power of harmony and healing power* को कहते हैं।

Harmony यानी समता केवल अभ्यास ही से नहीं आती इसके साथ-साथ पूर्ण पुरुष का सतसंग होना अनिवार्य है। सत गुरु नाम है पूर्ण विवेक का जो महासुन्न में निर्विकल्प समाधी के बाद प्रगट होता है, वह भी उस समय तक प्रगट नहीं होता जब तक

पूर्ण पुरुष का सतसंग प्राप्त नहीं होता, महासुन्न के आगे सत गुरु की प्राप्ति होती है।

जब कोई जीव दुखी होकर सच्चे दिल से सतगुरु को याद करता है तो वहां से जिस तत्व की शक्ति मनुष्य को निज घर पहुंचा देती है या लौटा देती है उसको सतगुरु कहते हैं।

गुरु त्रिकुटी में और सतगुरु महासुन्न में रहता है और उससे आगे प्रगट होता है। सतगुरु केवल शब्द व प्रकाश है।

जो गुरु सत लोक या सत पद में रहता है वह वास्तव में मनुष्य की अपनी सुरत है।

सतगुरु कण-कण से व्याप रहा है जिस मनुष्य में प्रगट हो जाता है उनकी महिमा है।

सतगुरु का कोई भी अपना नहीं होता न उसका कोई माता पिता है और न लड़का है, वह अखंड मण्डलाकार है उसकी समझ किसी सत्य प्रिय निष्काम पूर्ण पुरुष की संगत और कुछ साधन से होती है।

सतपुरुष हमेशा वीतराग पुरुष होता है।

सतगुरु या पूर्ण विवेकी पुरुष को किसी से द्वेष और नफरत नहीं होती है। सतगुरु सतसंग कराए तो वह सतसंगियों के द्वेष को निकाल देता हैं, उसके प्रभाव से उनके अन्दर द्वेष आदि नहीं रहते वर्ना ऐसे लोग सतगुरु के पास ठहर नहीं सकते।

सतगुरु के दरबार में जो उनकी वानी को सुनकर गुनता है उससे उसकी सुरत स्वयं मानसिक, शारीरिक और संसारिक सम्बन्धों से उपराम हो जाती है।

सतगुरु की ओट सतगुरु के वचनों को समझना और गुनना है। जब पूर्ण विश्वास हो जावेगा तब पाप, पुण्य, हानी, लाभ, जीवन मरण का भर्म सामाप्त हो जावेगा।

पूर्ण गुरु वह है जो मनुष्य की प्रकृति की निरख परख करता हुआ उसको ऐसे तजरबात या अनुभवों की श्रेणियों से ले जाता है जिससे उसकी बुद्धि निर्मल हो जाती है।

पूर्ण गुरु क्या है? उसकी अपनी रहनी उसका क्रियात्मक जीवन उसका व्यवहार उसकी वानी, उसका वचन इनको अंगीकार करो।

संत सतगुरु वह है जो तुमको सब कुछ तुम्हारे अन्दर होने का पूर्ण विश्वास करा देवें।

संत सतगुरु वक्त कभी कभी पैदा होता है जो शिक्षा में परिवर्तन किया करता है।

अवधूत में धार्मिक पक्षपात नाम को भी नहीं होता। वह इस दर्जे से बहुत ऊंचे चढ़ जाता है जहां ऊंचे विचार वाले मनुष्य को सर्व-साधारण की राय की परवाह नहीं होती।

अवधूत अपने निज स्वरूप में हमेशा मस्त रहता है जब किसी से बात करनी होती है तब नीचे आता है।

तुम किसी मुक्त पुरुष की पहचान उसके झूठ और सच से नहीं कर सकते। यह प्रकृति रूप से स्वतंत्र है, वे न सच्चे है न झूठे हैं।

प्रत्येक कार्य को स्वभाविक रूप से करना और उसके फल प्राप्ति की ओर ध्यान न देना ही जीवन मुक्त अवस्था है परन्तु यह दशा हर एक मनुष्य को प्राप्त नहीं होती।

योगी ब्रह्माण्ड के सूक्षम व कारण प्रकृति के देश में रिडियो नियम के अनुसार शरीर में रहता हुआ सैर कर सकता है गृहस्थी नहीं कर सकता है। क्योंकि इसके ऊपर घर की जिम्मेदारियों का बोझ रहता है इसके प्रारब्ध कर्म कटने जरूरी हैं। इस उलझन में फंसने से गृहस्थी का कार्य-क्रम नहीं चल सकता। व्यवहार में कठिनाई पड़ेगी इस बात का विश्वास रहे कि जो मनुष्य योग की

इन क्रियाओं को नहीं करता वह अधूरा नहीं रहता। जीवन का ध्यय तो खुशी बेफिक्रो, निर्भयता और अचिन्तपना है।

मगर यह सच्च है कि जो मनुष्य इसका अनुभव नहीं करता वह साधन अवस्था में रहने वाले मनुष्यों का पथ प्रदर्शन नहीं कर सकता है।

योगी-प्रकृति के विधान को नहीं तोड़ता वह किसी के दिल की बात जानने की इच्छा नहीं करता।

अकाल पुरुष :—वह अवस्था है जिस में कोई खालिक, मखलूक़ और खिलकित का बोध भान नहीं रहता।

साधु व सन्त का काम संकल्प को बदल देना है। शब्द व प्रकाश का रूप हो जाना ही मानव की उसकी भक्ति है।

सन्तों का मन्तव्य केवल जीवों को सुख पहुंचाना है वह किसी मत के अनुयायी नहीं होते।

वीतराग पुरुष बुद्धि और विवेक से ऊंचे चढ़ जाते हैं उनको कुछ करना धरना नहीं पड़ता, उनको बढ़ने और सोचने से कोई मतलब नहीं रहता। जिसको बढ़ना और सोचना बाकी है उसका आदेश-बुद्धि और विवेक है वह ब्रह्म है।

गुरु की संगत और उपासना आत्म ज्ञान के लिए अनिवार्य है।

प्रेम और उमंग जब तक दिल में नहीं होती तब तक सूरत शब्द योग के सोपानों के पार नहीं हो सकती।

जिसके जीवन में काम, क्रोध और अहंकार नहीं है वह जीवन नहीं है। मगर वह सूक्ष्म रूप में ही होने चाहिए स्थूल रूप में नहीं।

फकीर या सन्त ज़ाते मुतलक या सर्व आधार होते हैं। वह किसी के आगे अपना सर नहीं झुकाते और न चापलूसी करते हैं।

सन्त मनुष्य की प्रकृति का अनुभव करके उस प्रकृति को थका कर उसको समाप्त कर देते हैं।

व्यवहारी बाहरमुखी है परमार्थी अन्तरमुखी है।

सन्तों की सुरत से मालिक के नाम, काम और रूप की याद देहानी होती है। उनपर किसी का प्रभाव नहीं पड़ता, चारों ओर से दुःख का पहाड़ ढाहा जाए परन्तु सच्चा गुरुमुख कभी इन दुःखों से विचलित नहीं होता और हमेशा प्रसन्नचित्त रहता है।

गुरु प्रत्यक्ष में सेवक को बुराभला कह कर आँतरिक तौर पर उसको मदद देकर आप जैसा बनाता है।

दीमक की जुबान, चीटी की नाक, चील्ह की आंख, कुत्ते का कान, अन्धों का धूना, इस सब में दूसरों से विशेषता होती है।

इसी प्रकार सन्तों में यह विशेषता होती है कि वह किसी मनुष्य को देखकर समझ जाते हैं कि उसका अभिप्राय क्या है और इसी के आधार पर वह अपने अनुभव के अनुसार उससे बात करते हैं। जो मनुष्य उनके समक्ष आता है उसके संस्कारों को वह उसी तरह पढ़ने लगते हैं जैसे कोई मनुष्य खुली हुई किताब को पड़ता है। इसका सम्बन्ध आत्मिक ज्ञान या योग विद्या की निपुणता पर स्थित है।

सन्त वह है जो अपनी सुरत को शब्द व प्रकाश में रख कर शब्द व प्रकाश के भंडार में लय कर सकता है।

सन्त सूक्ष्म शरीर का आपरेशन करते हैं।

ईश्वर का पूर्ण अनुमान हर पहलू से कोई नहीं कर सकता। कबीर साहिब या स्वामी जी को भी कुल रचना का भेद मालूम नहीं होगा।

फकीर या सन्त प्राकृतिक व्यवस्था यानी मांग व पूर्ति *Demand & Supply* के नियमानुसार प्रगट होते हैं, उनको स्वयं भी पता नहीं होता कि वह दुनियां में किस काम के लिए आए हैं।

जो मन की साधना करता है वह साधु है, जो मन से निकल कर शब्द व प्रकाश की साधना करता है वह सन्त है।

जो मनुष्य साधगति में रहता है उसकी सिद्धि स्थूल रूप में होती है, हंस गति में सूक्षम रूप से होती है, सन्त गति में सम अवस्था में रहती है। सन्तों से मनुष्य शान्ति प्राप्त कर सकता है। प्रतिबन्ध यह है कि उसमें विश्वास हो।

जब कोई देह, मन तथा आत्मा के ऊपर जाता है तब वह गुरु को पाता है।

नाम दान देना और बात है, नाम दान लेना दूसरी बात है। जब तक कोई नाम दान लेने का अधिकारी न हो वह नाम दान नहीं ले सकता। कबीर साहिब ने बीस वर्ष में धर्मदास को नाम दान लेने का अधिकारी बनाया तब नाम दान दिया।

जो बिना गुरु के सतसंग के अभ्यास करेगा वह पागल हो जायेगा।

सन्तों की शिक्षा प्राप्त करने के लिये बलिदान जरूरी है। बिना बलिदान के आदर्श की प्राप्ति नहीं होती। मुक्ति कभी काजी नहीं होता।

सन्तों पर अपने हर्ष व शोक का कोई प्रभाव नहीं होता, वह दूसरों के सुख को देखकर सुखी और दुःख को देखकर दुखी होते हैं और सुखी रहने व दुःख से बचने का उपाय बताते हैं।

ऋषि लोग केवल सतलोक तक पहुंचे जहां से गति की उत्पत्ति होती है मगर सन्त गति समाप्त करके अवगति यानी सतलोक से ऊपर के मंडल में जाते हैं राधास्वामी दयाल वर्षों तप करके उस स्थान पर पहुंचे जहां अगति भी नहीं है।

⁑ श्रेणियां ⁑

सहस दल कंवल :—

इस स्थान पर साधन करने से सांसारिक कामनाएं पूरी होती हैं।

शरीरिक स्वास्थ, धन और मान आदि की तमाम कामनाएं सहस दल कंवल या ज्योति स्वरूप के ध्यान से पूरी होती हैं। इसका सहज उपाय यह है कि अपनी कामना का नाम रखो और उसका रूप बनाओ और उस नाम और रूप के ध्यान में लय हो जावो जितनी ही इसकी इच्छा तीव्र होगी उतनी ही सफलता होगी।

चूंकि प्रकृति में गत है, जहां गत होगी वहां शब्द व प्रकाश होना अनिवार्य है जितनी ही अधिक एकाग्रता होगी उतनी ही अधिक शब्द व प्रकाश पैदा होने पर वह कामना जल्द पूरी होगी वहां ध्यान लगाकर जो मनुष्य साधन करेगा उसकी सांसारिक मनोकामना पूरी होगी। प्रतिबन्ध यह है कि ब्रह्मचर्य कायम रहे और विषयविकार से परहेज रहे और साथ ही दूचिताई और दुविधा न हो।

सहस दल कंवल से आगे वही मनुष्य त्रिकुटी में जा सकता है जिसकी संसारिक कामनाएं साधारण रूप से पूरी होती हैं।

सहस दल कंवल से महासुन्न तक सब श्रेणियां मन की हैं, यानी विचार भाव और बुद्धि की हैं, सन्तमत महासुन्न या निर्विकल्प अवस्था के बाद शुरू होता है।

सहस दल कंवल, त्रिकुटी, सुन्न महासुन्न की मिली हुई अवस्था का नाम सोहंग पुरुष है।

यदि मूर्ति बनानी आ जावे तो सब काम बन जाये।

सहस दल कंवल से दसवे द्वार तक का साधन पूर्णमासी का साधन है. क्योंकि इन स्थानों के साधन करने वाले की हर प्रकार की मनोकामनाएं पूरी होती हैं।

मनुष्य जब तक पूर्णिमा यानी सतचित व आनन्द का खेल नहीं खेल ले, आगे की श्रेणियों में नहीं जा सकता।

मन की कुल वृत्तियों के एकाग्र होने पर जो आनन्द मिलता है। उसको तुरिया कहते हैं।

मायातीत—माया से रहित, तुरियातीत-तुरिया से रहित।

इसके आगे शब्द व प्रकाश का मंडल है, जहां न देह न मन न आत्मा है।

जब सुरत शब्द को सुनती है देह गेह और मन का बोधभान नहीं रहता वहाँ सब कुछ भूला हुआ रहता है।

त्रिकुटी के स्थान पर साधन करने से सांसारिक बुद्धि और विद्या की प्राप्ति होती है।

त्रिकुटी में हर प्रकार का विवेक पैदा होता है चाहे जिस प्रकार की इच्छा हो।

त्रिकुटी में प्रवेश करने के लिए सतगुरु की मूर्ति और नाम का सहारा लेना अनिवार्य है। याद रखो जिस विचार और भाव वाले मनुष्य का ध्यान करोगे वैसा ही विचार और भाव तुम में आवेगा और तुम वैसा ही बनोगे। इस वजह से यह अनिवार्य है कि जिसकी तुम मूर्ति बनाते हो वह पूर्ण पुरुष हो या तुम उसको पूर्ण पुरुष मान लो। इस स्थान पर प्रेम के बढ़ जाने से मन सूक्ष्म होने लगता है और सूक्ष्म परमाणुओं की गति से यहां का शब्द बादल की गरज अथवा ओम् २ शब्द के समान होता है। यह सब को एक जैसा सुनाई नहीं देता। इस स्थान पर अभ्यास करने वाले की इच्छा शक्ति बहुत प्रबल हो जाती है। सन्त मत की भाषा में उसको साधु कहते हैं वह अपनी विचार धारा दूसरों पर बहुत कुछ प्रयोग कर सकता है। मगर शान्ति उसको भी

प्राप्त नहीं है। याद रखो त्रिकुटी के स्थान पर विचार योग, भक्ति और प्रेम योग से भी पहुंच सकते हैं। मगर बिना पूर्ण पुरुष के सत्संग के खतरा है। यहां पहुंचने के वास्ते केवल सच्ची लगन व प्रेम की जरूरत है।

त्रिकुटी के स्थान पर तीन शक्तियां होती हैं जो ध्यान, ध्याता और ध्येय हैं। इस स्थान पर अभ्यास करने से कामना पूरी होती है मगर आवागवन समाप्त नहीं होता।

शिवनैत्र यानी त्रिकुटी से जब सुरत की धार शरीर में नीचे यानी कंठचक्र हृदयचक्र और नाभीचक्र इत्यादि में आती है तो इनको संचालन करके संसार का व्यवहार करती है और जब ऊपर सुन्न महासुन्न इत्यादि को जाती है तो अकाशी बन जाती है।

सुन्न और महासुन्न के स्थान पर साधन करने से सुख और आनन्द प्राप्त होता है मस्ती मिलती है जो जीवन को अमृत प्रदान करती है।

महासुन्न तक सिवाय द्वैत अंग के दूसरा नहीं पहुंच सकता भंवर गुफा पर साधन करने से विवेक की मस्ती, बेहोशी मस्ती या महाआनन्द मिलता है।

भंवर गुफा में ज्ञान प्राप्त होता है।

जब एकत्व के विचार फूरने लगते हैं तब भंवर गुफा की बारी आती है मगर अन्तर में प्रेम होना जरूरी है। विचार योग से अन्तरी कुरेद नहीं मिटती। इस एकत्व स्थान के आगे अन्दरूनी शब्द योग की जरूरत पड़ती है। अपने आप को अपने स्वयं में लय करो फिर क्या होगा? प्रकृति नियम के अनुसार शुभ संकल्प रखते हुए अपने निज स्वरूप का ध्यान रखो यही आदर्श है। मन को प्रेम द्वारा जितना ही साफ रखोगे उतना ही आनन्द खुशी और मस्ती मिलेगी आखरी उमर में विस्माधी आवेगी और शरीर छूट जावेगा।

सतपद की चैतन्यता का इतना और अधिक बढ़ जाना जिस से मनुष्य व्यक्तिगत में आ जाये यानी अपनी व्यक्तिगत कायम कर लेवे, उस अवस्था को सतलोक कहते हैं। सतलोक के स्थान पर साधन करने से आत्म पद में जीवन शरीर व मन से अलग होकर अमन बनने में आनन्द लेता है।

ध्रू पद या सतलोक में खुशी, बेगमी, बेफिक्री और शान्ति का जीवन हो जाता है।

अगमलोक की अवस्था की चैतन्यता का थोड़ा अधिक बढ़ जाने की अवस्था को सतलोक कहते हैं।

जब तक कोई मनुष्य अचिन्त और बेआस नहीं होता तब तक ध्रू दरबार में नहीं जा सकता।

प्रश्नों का उठते रहना और उसका समाप्त न होना इस बात का प्रमाण है और पता देता हैं कि अभी सत पद की प्राप्ति नहीं हुई।

सतलोक में सूर्य, चन्द्र और तारागण नहीं है, यह सत लोक की किरणों से बनते हैं।

सुरत का स्वामी शब्द व प्रकाश है।

सतपद में मन नहीं रहता वहां केवल शब्द और प्रकाश का मंडल है, वासना या इच्छा का कोई प्रश्न नहीं उठता वहां एक प्रकार का आकर्षण है।

जो मनुष्य अपनी सूरत को अपने आप में ठहरा लेता है तो जैसा उसका विचार होता है वह स्वभाविक रूप से पूरा होता रहता है।

शब्द व प्रकाश का साधन आत्मिक आनन्द और इससे परे की अवस्था को प्राप्त कराता है। वह तभी हो सकता है जब सुमिरन व ध्यान पूरा हो गया हो यानि शरीर स्वस्थ्य और मन स्वच्छ हो गया हो, शब्द व प्रकाश का साधन करने वाला शरीर

व मन के बोध भान से ऊपर आ जाता है, इस कारण आत्मिक आनन्द व सुख प्राप्त रहता है। वह कर्म करता हुआ भी अकर्मक है। प्रतिबन्ध यह है कि उसको किसी पूर्ण पुरुष का संग प्राप्त हो जिस से उसके संसारिक शंका और संदेह के बोध भान समाप्त हो गए हों वह जीवनमुक्त और विदेह की अवस्था में रहता है। शब्द व प्रकाश की भक्ति मनुष्य की हर प्रकार की निर्बलता को दूर करती है।

सुरत—श्रद्धा, विश्वास, प्रेम और सच्ची लगन से चढ़ती है।

शरीर से निर्बल और कम विश्वास वाले मनुष्य की सुरत नहीं चढ़ सकती है।

शरीर मन व आत्मा तथा शब्द व प्रकाश से परे ही जाने की अवस्था को निर्वाण कहते हैं।

शरीर का भान अजपा जाप से, मन का भान शब्द व प्रकाश के साधन से जावेगा। किसी सत पुरुष का प्रेम सुगमता से इसको प्राप्त करा देता है।

शब्द व प्रकाश के प्रभाव से मन में परिवर्तन आना अनिवार्य है। जो मनुष्य शब्द व प्रकाश के साधन से उठकर किसी वस्तु को प्रसाद कर दे तो उसका प्रभाव अवश्य होगा, चाहे इसके लेने वाले का विश्वास हो या न हो।

अभ्यास किया करो इसका महत्व तुम को बुढ़ापे में मालूम होगा।

अभ्यास का अनुभव किसी से मत कहो, अगर कहोगे तो रिक्त हो जाओगे।

शान्ति केवल चौथे पद में है, मगर इसके अधिकारी करोड़ों में से एकाध ही आदमी हो सकता है।

मन के थकने यानो इसके बोध भान के समाप्त होने की अवस्था का नाम महासुन्न निर्विकल्प समाधी या दसवां द्वार है।

अगम देश में तमाम मानसिक व आत्मिक जगत के खेल की समझ होती है।

अगम कहते हैं अनुभव की, बोधन शक्ति को, हैपना (मैं हूं) के अंखुवा के फूटने को यानि थोड़ी सी चैतन्यता आने को।

जब तक चौथी अवस्था नहीं आती तब तक मन बस में नहीं आता।

देह मन और आत्मा के परे जो प्रकाश का भण्डार है उसका नाम चौथा पद है। जब तुम्हारी ध्यानशक्ति गहरी हो जावेगी, उस समय तुम को प्रकाश व शब्द प्रगट होगा।

अगम में अनुभव के विकास की श्रेणी को जो महा आनन्द दायक होता है। अलख कहते हैं।

जब तुम क्षर अक्षर के पार अपने को शब्द में लय कर लोगे तब तुम को अपना रूप दृष्टि गोचर होगा परन्तु यह महा कठिन है।

चौथा पद उनको मिलता है जो इसके इच्छुक हैं अथवा जिन पर मौज स्वयं दया करती है।

जन साधारण के लिए सुमिरन व ध्यान अनिवार्य है।

जब तुम इच्छा और संकल्प को छोड़ दोगे तब तुम्हारे अंदर जो स्वाभाविक शब्द होगा उसको नाम कहते हैं।

अनामी पद में ममुष्य अपने स्वयं को भूल कर निज स्वरूप में लय हो जाता है। इसके बाद जब तक वह जीवत रहता है अपने प्रारब्ध कर्म से शारिरिक व मानसिक शक्ति के अनुसार काम करता रहता है।

जिन्दगी हासिल है और हम जिन्दगी में शाद है।
रंज व गम, ऐश व ,लख, के बहम से आजाद है।

हम न विरान न बस्ती के, कभी कायल हुए।
लामकां में घर है और इस घर में हम आबाद हैं॥
देख हर रंग व नूर में जलवा उसका।
हर तमाशा में है दर्पर्दा तमाशा उसका॥

अनामी पद मैं मनुष्य अपने व्यक्ति गत को खो जाता है मगर यह सब अपनी इच्छा व वासना की प्रवलता पर पर निर्भर है।

गहरी नींद में होश आने की अवस्था की समानता अनामी के अवस्था की है।

पीले रंग का प्रकाश :- इसमें मानसिक इच्छाओं का पदार्थ विधमान रहता है। इसमें थिर रहने वाला सिद्धि शक्ति वाला और प्रबल संकल्प शक्ति का अधिकारी होगा।

नीलगू प्रकाश :—इसमें थिर रहने वाला अपनी जात (स्वयं) पर भरोसा रखता है और पूजा पाठ और बाहरी आडम्बरों और दास्तव के विचार से उच्चतर रहता है।

लाल रंग :—उसमें सूक्ष्म वासना विधमान रहती है, इसमें रहने वाला विवेकी और विद्यमान होगा।

चन्द्रमा का प्रकाश :—इसमें थिर रहने वाला स्वयं आनन्द का अधिकारी होगा और अपने वचनों से दूसरों को आनन्द देने वाला होता है।

स्वेत प्रकाश :—इसमें थिर रहने वाला आत्मिक शान्ति को प्राप्त करता है उसके दर्शन और स्पर्श से दूसरों को शान्ति प्राप्त होती है।

मनुष्य का मस्तिक दो भागों में बना है। एक भाग का रंग पीला और दूसरे भाग का रंग स्वेत है। पीला भाग जिस का सम्बन्ध स्थूल शरीर से है वह शरीरिक व मानसिक इन्द्रियों पर नियन्त्रण करता है। स्वेत भाग शान्ति व आन्नद से परिपूर्ण और आत्मिक लहरों से प्रभावित होती है।

अपने आप को बे-ख्याली की अवस्था में ले जावो वहां मन संकल्प नहीं करता।

शब्द अभ्यास से शारीरिक, मानसिक और आत्मिक आनन्द तो अवश्य मिलता है परन्तु आवागवन का चक्कर समाप्त नहीं होता, यह बिना पूरे ज्ञान या विवेक के नहीं जाता इसके लिए किसी पूर्ण पुरुष का सतसंग अनिवार्य है।

सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण मनुष्य के भावों के सूक्ष्म परमाणु हैं। इनके इकट्ठा होने से जो शब्द उत्पन्न होता है इसका नाम अगम है। जिस वासना को लेकर मनुष्य अन्तःकरण में एकाग्र होगा उसकी धुनी सूनेगा और जिस कार्य को हाथ लगावेगा वह अवम्य सुफल होगा। गायत्री मन्त्र का जाप करने वाले बिना लकड़ी के अग्नि उत्पन्न करते थे।

इसी प्रकार एकान्त में चले जाने पर जब वृत्ति एकाग्र होती है वहां जो प्रकाश होता है। वह चन्द्रमा जैसा होता है। चूंकि भावनाएं माद्दा हैं माद्दा की उतपति चन्द्रमा से होती है ज्यों ज्यों भावनाएं सूक्ष्म होती जाएगीं चन्द्रमा का प्रक श बढ़ता जावेगा।

समाधी जब गहरी हो जाती है तो दसवां द्वार या महासुन्न कहलाती है। वहा मन, बुद्धि, चित्त, अहंगकार काम नहीं करते।

इसी प्रकार ब्रह्माण्ड में महासुन्न का एक देश है, जो मनुष्य इस स्थान पर बहुत देर तक ठहर सकता है वह ऊपर के देशों से *Radio Television* के नियम के अनुसार उनसे मिलकर एक हो सकता है।

इंगला को सूर्यनाड़ी, पिंगला को चन्द्रनाड़ी कहते हैं। इंगला शुभ कामों में सफलता देने वाली है और पिंगला अशुभ कामों में सफलता देने वाली है। जब शुभ भावनाएं शुभ विचार, शुभ संकल्प उठते हैं तो इंगला नाड़ी चलती है। पिंगला नाड़ी प्रतिकूल दशा में चलती है। इन दोनों नाड़ियों में साधन करने वाला संसार में फंसा रहेगा। सत पद उस समय प्राप्त होगा जब मनुष्य शुभ

और अशुभ वासनाओं से रहित होकर सुषमणा नाड़ी से साधन करेगा।

पहले विराट ज्योतिस्वरूप का प्रकाश प्रगट करो. फिर हिरण्य गर्भ लाल रंग का प्रकाश प्रगट करो। फिर स्वेत रंग का प्रकाश प्रकट करो।

प्रथम अपने इष्ट का नाम व रूप बनाओ. इसके बाद तुम नाम व रूप के सहारे अनाम गति में चले जाओगे।

शब्द योग आसान है कठिन नहीं है। प्राकृतिक है, मगर साथ ही अधिकार, संस्कार और समय चाहता है।

सूरत व शब्द दोनों एक रूप हैं।

शब्द का नतीजा सूरत और सूरत का नतीजा शब्द है। रूहानी मंडल में संकल्प विकल्प रहते हैं, सुरत व शब्द की स्थूल दशा का नाम मन है, मन की स्थूल दशा का नाम जीवपना है। यही जीवपना उलट कर मन बना, फिर सुरत बना, फिर शब्द बना, फिर अशब्द पना हासिल करता है। इस लिहाज से *Power of existance* ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर तक मौजूद है। वही शक्ति तमाम ब्रह्माण्ड को उठाए हुए हैं, इसका अनुभव करो, तुम्हारी हालत खामोशी की होगी। कुछ कह सकोगे तो हैरत, हैरत और हैरत। मानव का जीवन अपने शारीरिक, मानसिक और आत्मिक अवस्था के अहम भावों के अनुभव को दूर करने के बाद एक ऐसी निर्मल अवस्था प्राप्त कर लेता है जिस को कोई कुछ और कोई कुछ कहता है। राधा हमारे जीवन की प्रारम्भिक दशा है और उसके अहम् भावों को त्याग देना राधा-स्वामी धाम है।

नाम शब्द ब्रह्म है।

जिन को अपने निज घर की खोज है वह शब्द गुरु को मालिक समझ कर आन्तरिक साधन करते है। शब्द सुनने से प्रकाश पैदा होता है। जो व्यक्ति अभ्यास करता है उसमें १६

प्रकार की चेतनतायें आ जाती हैं वह दूसरों का पथ प्रदर्शन कर सकता है। बीन की धुन पूर्ण है, इससे मस्ती पैदा होती है जो पूर्ण है, जो बीन शब्द सुनते हैं उनसे किसी की बुराई नहीं हो सकती।

जिस जगह पहुंच कर मनुष्य स्वयं अपने आप में आनन्द लेने लगता है उसको अगम देश कहते हैं।

साधन अवस्था में शरीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य पालन करने की बड़ी आवश्यकता है। साथ ही भोजन और व्यवहार पर भी ध्यान रखना चाहिए।

स्थूल शरीर जल, अग्नि, वायु और आकाश के स्थूल तत्वों से बना है इसमें तीन कोष हैं, वे अन्नमय कोष, प्राणमय कोष और विज्ञानमय कोष है।

आस्तिक वह है जो धन रोचक (*Positive*) हो और नास्तिक वह है जो रिण रोचक (*Negative*) हो।

साधन के बराबर करते रहने से समस्त बोध भान सूक्ष्म हो जाते हैं और अन्तर की आंख खुल जाती है और अभ्यासी जीवन मुक्त अवस्था का आनन्द लेता रहता है।

जब वासनाएं खतम हो जाती हैं तब जीवन मुक्त दशा आती है।

सतलोक तक सुख व प्रसन्नता का आभास है अलख अगम व अनामी पद में सुख दुःख का आभास नहीं है।

ब्रह्मा, विष्णु और शिव उत्पत्ति, स्थिति और विनाश की शक्तियां है ध्यान ध्याता और ध्येय को ब्रह्मा, विष्णु और शिव कहते हैं।

सुरत का स्थान शरीर, मन व आत्मा से परे है।

शारीरिक और मानसिक बोधभान छोड़ देने के बाद जो वस्तु बाकी रह जाती है वह नाम है।

साधारण एकाग्रता से जो शब्द सुनाई देता है वह चूं चूं जैसा होता है। अभ्यासी में वात, पित्त और कफ की मात्रा अपने अनुपात से रहनी चाहिए। अगर इसके प्रतिकूल दशा है तो पूर्ण दृश्य नहीं दिखाई देगा।

मन एकाग्रता की दशा में संकल्प, विकल्प छोड़ देता है। मन-बुद्धि चित्त और अहंकार को छोड़ कर अमन हो जाता है।

सार शब्द सहज सुभाव बिना मेहनत प्रयत्न तथा प्रयास के स्वतः पैदा होता है।

मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार कारण रूप से सुरत में रहते हैं। जहां स्थूलता व सूक्ष्मता का प्रश्न छोटाई बड़ाई का विचार नाम व रूप का भेद मिट जाता है, वहां केवल चेतन्य रहती है और इसी को चौथी अवस्था कहते हैं।

ब्रह्म ही माया को मकड़ी के जाले को तरह पैदा करता है, माया ब्रह्म को नहीं पैदा करती।

मन के तीन रूप हैं, स्थूल, मध्य और सूक्ष्म। स्थूल भाग पेट में रह जाता है जो पृथ्वी है, सूक्ष्म भाग सिर में रहता है। जो आकाश है और मध्य भाग हृदय में रहता है, इसको ऊपर, मध्य और नीचे तीनों जगह काम करना पड़ता हैं।

इष्टदेव पर ठहराव को निष्ठा कहते हैं।

जाग्रत में मन की बैठक केवल इन्द्रियों पर ही नहीं बल्कि देह के रोम रोम पर रहती है। स्वप्न अवस्था में यह अपने निज स्थान पर बैठता है। सुषुप्ती में आत्मा की ओर प्रवृत होता है, सुरत के साथ मन का मिलकर एक हो जाना ही आनन्द हैं।

आत्मा में एकपना है, मन में दोपना है और देह में अनेकपना है।

सुषुप्ती में कोई हमेशा नहीं रह सकता। प्रकृति का ऐसा नियम नहीं है इसमें कोई लाभ भी नहीं है। क्रियात्मक ढंगों से देह व मन आत्मिक बना लिया जाये व देह, मन व आत्मा में

अभ्यास व साधन से समानता पैदा कर ली जावे ताकि वह अधिकार में हो जावें।

इन्द्रियों का मंडल, जागृत और मन का मंडल स्वप्न और सुरत का मंडल सुषुप्ती है।

सहस दल कंवल, त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न और भंवरगुफा के सोपानो को जब तक कोई छोड़ नहीं देता तब तक सतगुरु शाह के पास नहीं पहुंचेगा।

जो रूह सत्तलोक में पहुंच जाती है उसको सत नाम अपनी शक्ति देकर यानी बीन की धुन सुना कर अलख व अगम पहुंचाता है।

सत्तधाम इष्ट पद नहीं है, बीन की ध्वनि सत्तधाम में ही सुन सकते हो, आगे अलख व अगम के शब्द हैं।

जागते हुए आंखों की खुली दृष्य में भी अचेत और बेसुध रहना सुषुप्ती हैं।

प्रतिहार, धारणा, ध्यान और समाधी चार अवस्थाएं हैं।

मुक्ति और केवल्य अवस्था का मतलब सहज समाधी हैं।

त्रिकुटी में सविकल्प समाधी लगती है और सुन्न व महासुन्न में निर्विकल्य समाधी लगती है।

असलीयत भंवर गुफा से आगे है, सतलोक में उसका आरम्भ होता हैं। सतलोक में सहज समाधी लगने लगती है जो वास्तव में हम में पहले से ही है।

सांस का बाहर जाना रेचक, अन्दर आना पूरक और ठहरना कुम्भक है। इसमें समता प्रकृति रखती है।

सोहं का शब्द बांसुरी की तरह होता है। ओ३म् त्रिपुटी है, अ-उ-म के मिलाप से बनता है, यही मूल वाणी है। "अ" में उत्पती "उ" में स्थिती और "म" में लय है। मूल वाणी के अन्दर

यह तीनों धुन मौजूद हैं, वह तबला की थाप की तरह है। यह स्थान त्रिकुटी इसी लिए कहलाता है, क्योंकि इसमें सत, रज और तम तीनों गुणों के त्रिगुणात्मक रूप हैं।

जब सुरत त्रिकुटी को पार कर के सर के पेशानी की चोटी पर पहुंचती है तो वहां सोहंग का शब्द सुनती है, यह भंवर गुफा है। अगर त्रिकुटी के स्थान पर तीन प्रकार के (शब्द) भाव हैं तो भंवर गुफा में दो प्रकार के शब्द हैं "सो" का अर्थ वह और "अहं" का मैं हैं।

जैसे चमकता हुआ आकाश का सूर्य अपनो छाया पानी में डाल कर पानी का सूर्य बन जाता है इसी तरह को लोला भंवर गुफा में पैदा होती है। यह छाया गुफा में प्रगट होती है और वह गुफा भंवर की तरह चक्कर खाती रहती है। नीचे के स्थान त्रिकुटी में त्रिपुटी है। ऊंचे के स्थान भंवर गुफा में द्वैत है।

सहस दल कंवल में सुमिरन का केन्द्र है त्रिकुटी में ध्यान का केन्द्र है और सुन्न में भजन का केन्द्र। चित्त लगा कर तथा ध्यान देकर सुन्न के केन्द्र पर नाम सुना जाता हैं। यहाँ पर जो रूप गुरु का प्रगट होता है वह चन्द्राकार है।

प्रकाश सतपुरुष हैं और शब्द सत्तनाम है, नाम का सम्बन्ध शब्द व प्रकाश ही तक है।

आत्मिक मार्ग दीन व होनों के लिए है, जब तक किसी की सुरत मन के विकारों को छोड़कर अपने अन्तर शब्द व प्रकाश में नहीं जावेगी इसमें भोला व बालपन नहीं आएगा।

ईश्वर के देह को विराट, उसके मन का अव्याकृत और उसकी आत्मा की हिरण्यगति कहते हैं। जितनी मन की कल्पनाएं हैं वह सब ईश्वर यानी अव्याकृत के रूप हैं। मन के विचारों के रूप को छोड़कर अपना इष्ट पूर्ण प्रकाश या नूर है और प्रकृति वह वस्तु है जो विचारों के रूप में उससे निकलती है, वह मन बुद्धि और चित्त है। इसको माया कहते हैं।

शब्द व प्रकाश मनुष्य का अपना ही रूप है उससे आगे जाने पर खोज समाप्त हो जाती है या विलुप्त हो जाती है। क्या हो जाता है? आश्चर्य, हैरत।

जब तक कोई साकार व निराकार के आगे नहीं जावेगा वह परम तत्व तक नहीं पहुंच सकता।

जिस केन्द्र पर पहुंच कर सब बुद्धि विवेक विचार समाप्त हो जाते हैं, वहां से आत्मिक अवस्था आरम्भ होती है। उस पर विचार नहीं किया जा सकता, उसमें रहना पड़ता है।

सच्ची बुद्धि व ज्ञान का प्राप्त करना ही सत्त पद जाना है।

प्रकाश के आगे शब्द है जिस को दयाल देश कहते हैं। जब तुम शब्द में चले जाते हो तो वहां रचना नहीं होती, कोई संकल्प नहीं रहता है. वह जो रचना करती है शब्द में समाप्त हो जाती है। रचना का कार्य प्रकाश में होता है। काल देश में प्रकाश हमारी सहायता करता है। मगर हमारा असली देश प्रकाश व शब्द के परे है. जो हमारा निज स्वरूप है।

असत क्या है? जिस में सब रचना पहले से थी उसको मैं अनामी कहता हूं।

गुरूमुख की पहली पहचान यह है कि वह गुरु से प्रेम करता है। दूसरी पहचान यह है कि वह गुरु का आज्ञा पालन करता है।

शब्द व प्रकाश एक अथाह सागर है जिस को सत्तपुरूष कहते हैं। मगर अजायब पुरुष उसके आगे है, प्रकाश व शब्द उसकी देह है। जो वस्तु प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है, शब्द में रहती हुई शब्द को सुनती है वह आजायब पुरुष है।

शब्द व प्रकाश में आना रचना में जाना है। सुरत का निज घर या केन्द्र अकाल पुरुष है।

पहले चित्त की वृत्ति को एकाग्र करके प्रकाश में ले जाओ। फिर उस वस्तु की खोज करो जो प्रकाश को देखती व शब्द को सुनती है, वही शक्ति अजायब पुरुष है।

प्रकृति ने जिस प्रकार का दिल व दिमाग किसी का बनाया है उसी प्रकार का शब्द व प्रकाश उसको पैदा होता है और वह वैसा ही काम करता है।

आवश्यकता और आस का होना ही तपन है। इसकी समाप्ती उस केन्द्र पर होती है जहां खालिक, मखलूक और खिलकत नहीं है।

गुरु स्वरूप शब्द व प्रकाश का ध्यान लाते रहना और उसमें न फंसना वानप्रस्थ अवस्था है।

आध्यात्म अवस्था सोहंग से शुरू होती है। शब्द ही सच्चा गुरु है जो जीव को हमेशा के लिए भवसागर से पार कर सकता है।

शब्द व प्रकाश का ध्यान निर्वाण का रूप है। सुरत का अपने अन्तर में अशब्द गति में ठहर जाना ही इष्ट पद है।

मनुष्य का अपनी सुरत को शब्द व प्रकाश में रखना ही हकीकत या सत है, क्योंकि सुरत जो इस शारीरिक व मानसिक जगत में दुख सुख भोगती है, इससे उसको छुटकारा हो जाता है।

जब तक तुम्हारे अन्दर गुरु का रूप नहीं प्रगट होगा तब तक तुम को मानसिक शान्ति प्राप्त नहीं होगी।

बंकनाल :—अभ्यास में शब्द प्रकाश तथा अन्य दृश्यों को भूल कर नीचे गिर जाना यानि उनको छोड़कर नीचे की हालत में आना है। शास्त्रों ने उसका नाम संधि रखा है। मनुष्य के अन्दर कोई नाली नहीं है जिसको बंकनाल कहा जाये। बंकनाल एक संधी की अवस्था है। बंकनाल एक अवस्था को भूल कर दूसरी अवस्था में जाने के रास्ते को कहते हैं।

मन की कुल बृत्तियों का एकाग्र हो जाना मान सरोवर है। मनुष्य शरीर में रहता हुआ शरीर का आनन्द लेता है। आत्मा में ध्यान से अलख लोक का आनन्द लेता है। तब अपने रूप को पहचान कर अगम लोक में जाता है।

जब मन शुद्ध व पवित्र हो जाता है तो सिद्धि शक्ति मिल जाती है। यह इष्ट पद नहीं है, रास्ते का विश्राम है।

इष्टपद के अस्तित्व या निज स्वरूप से किसी को इनकार नहीं हो सकता है। वहां तक पहुंचना किसी आदमी के बस की बात नहीं हैं। यदि भाग्य में होगा तो सर्वाधार से मेल होगा। यदि अभ्यास में तुम्हारी सुरत तन, मन, धन को नहीं भूलती तो तुम उस देश में प्रवेश नहीं कर सकते। जो जिस देश से आया उसको उसी देश की खोज रहती है। उसको दूसरे देश में चैन नहीं मिलता। जो अनामी धाम से आया है उसको अनामी धाम की खोज रहती है।

सुन्न तीन प्रकार का होता है :—शारीरिक, मानसिक व आत्मिक।

मन का स्वप्न सुन्न की अवस्था है, सुषुप्ती महासुन्न की अवस्था हैं. आत्मा की जागृत अवस्था भंवर गुफा है।

सुरत जब ऊंची अवस्था में रहती है तब वह ब्रह्म हैं। जब नीची दशा में आ जाती है तो जीव हो जाती है।

जैसे दूध में घी छिपा रहता है वैसे ही हमारा निजस्वरूप अभेद है।

सुरत का स्थूलरूप सतपद है, सूक्ष्मरूप अलख है और कारण रूप अगम है।

जिस अवस्था में मनुष्य के हर प्रकार के अहम् भाव समाप्त हो जाते हैं वह अवस्था नाम है।

शब्द व प्रकाश हमारा मानसिक जीवन सुख दाई बनाता है। जो व्यक्ति अन्तर में प्रकाश प्रगट कर लेता है उसकी मनोकामना पूरी होती हैं, और उसको साहस निर्भयता और अचिन्तपना प्राप्त होता है।

ध्रुपद शब्द व प्रकाश का भंडार है। असली प्रकाश महा-सुन्न के ऊपर से निकलता है। प्रकाश तो कई प्रकार के नीचे भी होते हैं, मगर असली प्रकाश निर्विकल्प समाधी के बाद आता है। जब तक कोई निर्विकल्प समाधी में न आवे वह आगे नहीं बढ़ सकता।

नाम कई प्रकार का है। कहीं शारीरिक सुख का नाम है, कहीं मानसिक सुख का नाम है, कहीं आत्मिक सुख का नाम है और कही परम शान्ति का नाम है।

अगर कोई सतलोक तक पहुंच जावे तो उसको मन से छुटकारा मिल जावेगा जो कि सुरत को फांसता और बेचैन करता है।

अगम लोक में केवल शब्द है।

सहज सुन्न में कोई संकल्प विकल्प नहीं उठता है।

सुरत का अपने स्वयं में ठहर जाना नाम है। शब्द को भी नाम नहीं कह सकते। वह संकेत व शब्द के परे की अवस्था है। इस नाम के परे एक अवस्था है जिस को अनामी कहते हैं।

सन्त निजस्वरूप में रहते हैं उनके मुंह से वही बातें निकलती हैं जो मालिक चाहता है।

अगर शरीर स्वस्थ नहीं है तो सारशब्द की प्राप्ति कठिन है।

नाम या तो अपने भाग्य से या मालिक की दया से ही मिलता है।

जो मनुष्य शब्द व प्रकाश को देखता है उसके मन के विचार समाप्त हो जाते हैं जो कोई आदि शब्द सुनता है वह आत्मा से ऊपर चला जाता है।

जो कोई देह, मन व आत्मा यानि शब्द व प्रकाश के ऊपर चला जाता है वह स्वयं का अनुभव कर लेता है उसको इस

बात का अनुभव हो जाता है कि न कोई कहीं से आता है न कोई कहीं जाता है।

नाम या आकर्षण के सहारे तो यह सारा ब्रह्मांड है, लेकिन नाम का आधार चौथे पद में है, चौथा पद इस का आधार है।

अन्तर की धुनो को जो कोई सुरत से सुनता है वह आवागमन से बच जाता है पर मन से सुनने वाला आवागमन से नहीं बचता है।

संसारिक वासनाओं से केवल शब्द व प्रकाश ही छुटकारा दिलाता है। शब्द व प्रकाश की प्राप्ति मन को बिना सूक्ष्म बनाये नहीं हो सकती। मन को सूक्ष्म बनाने के लिए वैराग्य है जिसका ज्ञान सतसंग में होता है। जब तक मनुष्य को पूरा वैराग्य न हो वह विदेह पुरुष को नहीं पा सकता। जिसको बाहर निष्काम प्रेम करने की आदत हो जाती है वह भीतर में विदेह पुरुष से प्रेम करने का अधिकारी हो जाता है।

शब्द व प्रकाश हमारा असली घर या आदर्श नहीं है क्योंकि शब्द व प्रकाश प्राप्त करने के बाद इससे हम अलग भी हो जाते हैं। उससे प्रेम करते हुए इस से आगे बढ़ो। यह स्वयं नहीं है मगर बिना इसकी प्राप्ति के तुम स्वयं को भी प्राप्त नहीं कर सकते। इसके प्रेम का जब अंत हो जावेगा यह आप ही छूट जावेगा। तुम आगे बढ़ोगे और अलख में प्रवेश करोगे। जो देखा जाता है मगर वह क्या है तुम कह नहीं सकते। शब्द व प्रकाश भी एक आकर्षक बंधन है। इसको तोड़ने पर तुम अलख में जावोगे।

जब तक तुम शब्दब्रह्म व पारब्रह्म से आगे नहीं जाओगे मोक्ष नहीं प्राप्त कर सकते।

अगर शब्द व प्रकाश के साधन से किसी को बेखौफी, बेफिक्री, बेगमी और आनन्द नहीं मिलता तो समझ लो वह रुहानियत से अभी दूर है।

सत : –शब्द वो प्रकाश है जो वस्तु या शक्ति इसको देखती है वह सत नहीं है वह सत से परे हैं ।

जो हालत किसी की गहरी नींद से होश में आने लगने की होती है वही हालत तुरीया की दशा में भी होती है । उस दशा में जाग्रत, स्वपन्न और सुषुप्ती के मिलने की दशा होती है उसको खुद मस्ती भी कहते हैं जो बेहदी में प्रवेश करने पर आती है खुद फरामोशी या तुरीयातीत बेहदी के परे की दशा है जहां कुछ बाकी नहीं रहता उसको अंग्रेजी में सुपरमोस्ट कोनसैंस *Super most concious* कहते हैं बुलबुला टूटा और समुन्द्र व उसका फर्क दूर हो गया ।

जिस अवस्था में गती अवगती दशा प्राप्त कर लेती है तथा देह मन व आत्मा के मंडल के खेल को खत्म करके परे की अवस्था से सूक्ष्म होकर निराधार हो जाती है उसको प्रलय तथा नाम की प्राप्ती कहते हैं ।

शब्द व प्रकाश प्रगट होने पर भी देह व मन की वासनाऐं शान्ति प्राप्त करने में बाधक होती हैं ।

—❖—

‡ भेद ‡

आत्मिक अवस्था को प्रगट करने के लिए सिवाय स्पर्श *touch* या संग के कोई वाणी या विचार नहीं है। वाणी के इशारे से, सैन वैन मिलता है। जिस तरह कोई मनुष्य शराब पिए हुए हो और नशे में चूर हो. इसी तरह नाम की खुमारी रहती है। मगर यह हालत स्थाई नहीं रहनी चाहिए वरना सांसारिक व्यवहार नहीं हो सकता। खास-खास मनुष्यों की बात और है।

प्रसाद वगैरह से खास-खास किस्म का शरीरिक, मानसिक और आत्मिक फल होता है, यहां नियम विचार शक्ति का है। प्रतिबन्ध यह है कि कोई अधिकारी बिश्वासी हो। जो बात होने वाली होती है वही होती है। साधु बोले सहज सुभाव, साधु का वचन वृथा नहीं जाए।

जिस प्रकार विषेश बिमारीयों के कीड़े होते हैं उसी तरह विचार और आत्मिक आनन्द के परमाणु हैं। वे सच्चे साधुओं और सन्तो के अन्दर से बराबर निकला करते हैं।

सूर्य को शक्ति नहीं है कि वह गर्मी न देवे। इसी तरह सच्चे साधु और सन्तो के प्रभाव से अधिकारी मनुष्य वंचित नहीं रह सकते हैं।

अगर मनुष्य का विश्वास किसी अन्य स्थान पर नहीं टिकता तो वह अपना ही ध्यान करे, मगर इसके साथ पूर्ण पुरुष का सतसंग अनिवार्य है।

सार ज्ञान या सार अनुभव उस समय तक प्राप्त नहीं होगा जब तक पूर्णपुरुष के आदेशानुसार त्रिकुटी और महासुन्न के स्थानों को पार न किया जाये।

सत्त—शारीरिक बोध, चित्त—मानसिक विचार आनन्द—आत्मिक बोध, ये जीवन के तीन मण्डल हैं. जहां जीवन नहीं वहाँ निज स्वरूप है।

मनुष्य की अतिम कमी को दूर करने का यह उपाय है कि उसको ज्ञान हो जावे कि वह क्या है?

जीवन जब तक आजीवन में नहीं बदल जाता मनुष्य की कुरेद नहीं मिटती।

वहाँ न रोशनी है न शब्द न कोई प्रकाश, वहां क्या है? केवल अपने आप का एहसास।

योग और ध्यान के बाद किसी पूर्णपुरुष की संगत से पूर्णता प्राप्त होती है।

न घबराना ही आत्मिक अवस्था है, घबराहट का दूसरा नाम डर है।

बिना सच्चेपुरुष यानी पूर्णपुरुष के सतसंग के अगर कोई दूसरे से प्रेम करेगा तो शान्ति नहीं मिलेगी।

सतपद में पहुंचा हुआ मनुष्य कभी नहीं घबड़ाता। अभ्यास साधन है केवल अपने को जानने के लिए या मालिक को पहचानने के लिए।

जब तक देह मन व चित्त स्वस्थ नहीं है मनुष्य नहीं समझ सकता कि वह कौन है?

यदि मनुष्य में घृणा, द्वेष और ईर्षा है तो वे बलवान होकर उसके बिनाश के कारण बन जाते हैं। नेकदिली व पवित्र विचार सुन्दर रूप धारण करते हैं। और द्वेष व ईर्षा के विचार भयानक रूप धारण करते हैं।

विषय विकार से परहेज इसलिए जरूरी है कि इससे स्वास्थ्य बिगड़ जाता है जिससे मन चचल रहता है। और जिससे सार बात समझ में नहीं आती है।

जिस समय तमाम ईर्षा, द्वेष आदि समाप्त हो जावे, मालिक से मिलने की तीव्र इच्छा हो, दीनता का अंग हो, मान बढ़ाई का ध्यान न रहे, उस समय मनुष्य की सुरत स्वयं सुषमना में चली जावेगी।

आत्मिक अवस्था के देने का केवल एक यही उपाय है कि देने वाले पुरुष की ऐसी इच्छा है। मगर इसके साथ प्रतिबन्ध यह है कि लेने वाले मनुष्य की भी प्रबल इच्छा हो।

"एक सिंघासन चढ़ गए, एक बन्धे जात जंजीर" का मतलब यह है कि सुरत का देह मन और आत्मा के बोध भान से अलग होकर अपने आप में ठहरना सिंघासन पर चढ़ता है और उपरोक्त बोध भान में फंसना या इच्छा रखते हुए मरना जंजीर में बन्धना हैं।

यदि कोई किसी से तीव्र प्रेम करता है तो प्रीतम के विचार, भाव प्रेमी के हृदय पर प्रभावित होकर उसमें हिलोर पैदा करते हैं, और प्रीतम के विचार भाव उसमें आ जाते हैं।

राधास्वामी धाम एक अवस्था है जो पूछ खोज के समाप्त होने पर स्वयं आती है।

गुरु के शुभ भाव शिष्य की रक्षा करते हैं।

आकाश से प्रकाश, प्रकाश से वायु, वायु से जल और जल से पृथ्वी पैदा होती है, शब्द आकाश का गुण है।

जब तक कोई व्यक्ति शब्द अभ्यासी नहीं होगा और शब्द के सुनते-सुनते अशब्द गति जो मुख्य तत्व है, उसमें लय नहीं हो जाएगा यह असम्भव है कि वह इस रचना के खेल से छुटकारा पावे।

पूर्णपुरुष का सतसंग केवल मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार से छुटकारा के लिए होता हैं और साधन अपने आप को उस परम

तत्त्व सर्व आधार में लय करने के लिए होता है, जो आखरी हालत है. साथ ही अनुभव की भी जरूरत है।

वह एक महान आनन्द या आकर्षण की या शान्ति की अवस्था है।

सूक्ष्म व कारण प्रकृति की बिजली मानसिक व आत्मिक प्रकृति में पहुंच कर उसका संचालन करती है। इसके समझने वाले विशेष प्रकृति के मनुष्य होते हैं।

दयाल देश शब्द व प्रकाश का देश है। प्रत्येक प्रकार के अहम् भाव के समाप्त हो जाने के बाद जो हालत स्वयं की रह जाती है उसका नाम निर्वान है।

जीवन का आदर्श सुख, शान्ति और प्रेम है यह केवल उन्हीं को प्राप्त होता है जो इन्द्रियों के पुजारी नहीं हैं।

थोड़ा बहुत अभ्यास करते रहो अन्तिम अवस्था में इसको इतना बढ़ाओ कि संसार के बोध भान से छूट जाओ ताकि अन्तमता सोगता के नियम के अनुसार संसार से बच जाओ।

आत्म विद्या मूल्य लेकर सिखाना महापाप है। भरत ने कोशिल्या से कसम खाई थी कि जो पाप ब्राह्मण को वेद बेचने से लगता है वह मुझ को लगे। अगर कोई हमारा हाथ राम को बनवास देने में है।

जिस आदमी का देहिक और मानसिक ब्रह्मचर्य लड़कपन में ठीक नहीं रहा और उसने उसको संयम नहीं किया और न उसकी ओर ध्यान दिया, उसमें वीर्य की कमी से अशान्ति पैदा होती है।

प्रभु सुमिरन साधु के संग होगा तब लाभ होगा।

अगर किसी का सम्बन्ध सत पुरुष की देह से होगा तो वह छूट जायेगा।

हजारों आए यहां और गए।
आ आ के सब चले जायेंगे॥

हां अगर आदर्श की खोज है और उसको पाना चाहते हो तो किसी सत पुरुष के वचन को पकड़ो, निश्चय तुम अपने आदर्श को पा जाओगे।

वेदान्त वेद का अन्त है, यह उस समय की बात है जब मनुष्य बुद्धि खोकर निर्बुद्धि हो जावें केवल स्वयं ही रह जावे।

इस समय भारत वर्ष ही नहीं बल्कि कुल दुनियां में अशान्ति बढ़ गई है क्योंकि राज्य प्रजातन्त्र Democratic है, जो अपूर्ण है और लाभदायक नहीं हो सकता। वर्त्तमान धर्म मनुष्य को आत्म अवनति की ओर ले जा रहा है और अहंकार पैदाकर रहा है। अहं ब्रह्म Egoism है, जब तक Auto Democracy जिस का नाम "मनुष्य वनो" है जिसका मतलब Self-respect, Self-realization और Self-decipline है नहीं अपनाया जाएगा शान्ति नहीं मिलेगी। ठोकर खाने के बाद प्रकृति स्वयं इस Democracy को Auto-Democracy में वदलेगी फिर कुछ समय के लिए सुख व शान्ति का राज्य होगा।

यह समय भारतवर्ष के लिए दुःख का है, वीर व सूरमा ऐसे ही समय जन्म लेते हैं।

किसी पर अत्याचार मत करो और न किसी को करने दो, प्रेम से दो और प्रेम से लो।

यह संसार एक थियेटर है, सब अपना २ पार्ट (Part) करके स्टेज (Stage) से उतर जाते हैं।

मन के सम्पूर्ण विचार को त्याग करने के बाद तुम मन को त्याग कर अमन हो जाते हो।

कालमत वह है जहां समय भास्ता है। दयालमत वह है जहां समय नहीं भास्ता।

किसी को कुछ देने से पहले अगर तुम अपने चित्त को एकाग्र कर के दोगे तो निज अनुभव के आधार पर हेला मार कर कहता हूं कि तुम्हारा भला होगा। कोई शक्ति इस नियम को तोड़ नहीं सकती।

सूर्य कहते हैं ज्ञान के रूप को और चन्द्रमा कहते हैं भक्ति के रूप को। राधास्वामी दयाल की वाणी है।

भक्ति, चन्द्रमा, सूर्य, ज्ञाना, दोनों गए छिपायी।
और कबीर साहिब भी लिखते हैं हुवा, प्रकाश आस मिटी दुजा उगीया निर्मलसुर (सच्चा ज्ञान)

सतलोक के आगे और तीन लोक हैं जिसका नाम अलख, अगम और अनाम हैं। उसकी प्राप्ति के लिए सच्ची लगन की जरूरत है। यह सच्ची लगन स्वयं ऐसी परिस्थिती पैदा कर देगी कि मनुष्थ उन लोकों को पहुंच जावे)

मानसिक काम का प्रभाव शरीर पर पड़ता है, अभ्यास सीमा से बाहर न होने पावे वर्ना जीवन संकट में पड़ जावेगा।

आजकल के लोगों की आयु इस कारण कम होती है कि वह समान्यता का बिचार नहीं रखते।

प्राकृतिक नियम यह है कि कोई वस्तु बिना भण्डार के नहीं रह सकती। अगर राक्षसों की तरह खुदगर्जी के वश किसी ने इस नियम को तोड़ने की कोशिश फी तो वह तबाही का कारण होगा। अगर पूंजीपति से पूंजी छीनकर अन-अधिकारी को दी जावेगी तो वह दुःख का कारण होगा।

मालिक के दरबार में कोई कमी नहीं है, करने और कराने वाला वह स्वयं है, हम सब लोग उसके अस्त्र हैं।

एकलव्य भील का लड़का था वह द्रोणाचार्य के ध्यान से वगैर उनके जाने हुए तमाम शस्त्र विद्या सीख कर अर्जुन से भी बढ़ गया।

यदि इष्ट पूर्ण है तो हर प्रकार से मनुण्य की सहायता होती रहेगी।

ऐसा सत्संग या व्याख्यान जिस में एक दूसरे मत मतान्तर का खण्डन हो बजाय लाभ के हानि करता है।

ख्याल किया और इष्ट प्रगट हो गया, यही काम धेनु गाय हैं।

आत्मिक विषय की कमाई बिना गुरु के पूर्ण नहीं होती।

ध्यान अवस्था में माया के दृश्य दिखाई देते हैं।

मित्र की दृष्टि मित्र के दोष पर नहीं पड़ती बल्कि उसके गुण पर पड़ती है।

परमात्मा के किसी कार्य में तर्क वितर्क मत करो और न इसमें त्रुटी देखो।

दुःख सुख का भान केवल उसी समय होता है जब इन्द्रियां संचालित होती हैं।

जब किसी प्रकार का कष्ट आवे तब अपनी सुरत को प्रकाश में ले जाओ फिर तुम को दुःख नहीं होगा।

कबीर साहब के शब्द में जो सोलह शंख का अवलेख आया है वह मनुष्य की सोलह प्रकार की चेतनाएं हैं। सोलह सूरज भी तुम्हारे अन्तर हैं। उनके परे एक परम तत्व प्रधान है। परम तत्व को ही अकाल कहते हैं।

निर्बलता और कोई वस्तु नहीं है, केवल मन की धार का कभी के साथ आना ही निर्बलता है।

नेकी चित्त की एग्रता है और बदी चित्त की दो चिताई है।

ब्रह्म प्रकाश और ताप को कहते हैं :—

फितरत (प्रकृति) को ना पसन्द है सख्ती जुबान में।
पैदा न हुई इस लिए हड्डी जुबान में॥

सतसंग करो और शारीरिक व मानसिक ब्रह्मचर्य रखो।

मन व सुरत में अन्तर है। मन का काम विचार करना है। बिचार मन से उसी प्रकार निकलता है जैसे सूर्य से किरणें निकलती हैं।

सुरत वह वस्तु है जो विचार को त्यात देती है। मन से निकलने का साधन यह है कि गुरु से लो लगाओ।

जिस प्रकार हमारी सांस बाहर की हवा से मिली हुई है उसी प्रकार वासना बाहर की इच्छा से मिली हुई है।

अशान्ति के पैदा करने में सबसे अधिक भाग धार्मिक आदमियों और किताबों का है।

यह हड़तालें देश में बहुत दुःख व विपति लावेंगी। जब तक भारत वर्ष की राजधानी दिल्ली रहेंगी, राज्य को शान्ति स्थापित करने में बहुत शक्ति लगानी पड़ेगी, परीक्षा कर देखो।

रिद्धि, सिद्धि भक्त को हो प्राप्त होती है, ज्ञानी को नहीं प्राप्त होती है।

सिद्धि शक्ति सब में उत्पन्न होती है परन्तु सांसारिक वासनाओं से और भाम प्रतिष्ठा की वजह से नष्ट हो जाती है।

ईश्वर को निराकर रूप मानने से तुम संसारिक जीवन को अनुकूल नहीं बना सकते।

प्रेम मार्ग में आदमी का इष्ट और उसके साथ श्रद्धा और विश्वास है। प्रश्नोंत्तर कुछ नहीं है। ऐसे ही लोग सिद्धि प्राप्त करते हैं।

जब ज्ञान हो जाता है तब अपना ममत्व मिट जाता है। नाम और रूप के मिट जाने से पता चल जाता है कि वह सर्वाधार का अंश है। पहले शरीर का वोध भान जाता है फिर मन का फिर आत्मा का इनका बोध भान समाप्त हो जाने के बाद एक अनन्त असीम सर्व व्यापक अस्तित्व रह जाता है।

प्रेम व आकर्षण जितना हो धना होगा उसी मात्रा के अनुसार वह ब्रह्माण्ड में हिलोर लेने लगेगा। मालिके कुल या सतुरु तुम्हारी अभिलाषा और वासना के अनुसार स्वयं तुम्हारे जीवन में परिवर्तन लावेगा।

जहां दो आदमियों में समानता, एकता, विश्वास और प्रेम अधिक होता है वहां अधिकार व संस्कार की तत्व भी बढ़ जाती है

जिन दो दिलों को एक दूसरे पर न्योछावर होते हुए देखो तो समझ लो कि यह परलोक के प्रभावों को लेकर पृथ्वी पर साक्षात दया की दृष्टि के रूप में प्रगट हुए हैं जिस से दीन दुखी जीवों को शान्ति मिले।

जिस्म मन और आत्मा का बोध भान रखते हुए कोई लक्ष्य को नहीं प्राप्त कर सकता है।

हर प्रकार के संशय भ्रम और अज्ञान (चाहे वह देह, मन व आत्मा के हों) का निकल जाना ही काल से निकलता है।

भगवान यानी प्रकाश का दर्शन उस समय होता है जब मन में मैल नहीं रहती। मैल शारीरिक वासना है या यो समझो कि जब भगवान् का दर्शन हो जाता है यानी जब आदमी प्रकाश में चला जाता है तो वासना नहीं रहती।

हर एक जीव का पूर्णता में लय होना अनिवार्य है।

जहां अपनी अपनी पड़ी रहती है वहां नेक है, जहां सहानुभूति होती है वहां ही स्वर्ग है।

क्या पता मालिक की मौज से भारत वर्ष किसी दिन सोलह कला सम्पन्न हो जावे।

माया जिस के अधीन है वह ईश्वर है और जो माया के अधीन हो वह जीव है।

जिसमें ऐश्वर्य, वल, पराक्रम और स्वतन्त्रता हो वह ईश्वर है और जो परतन्त्र और अधीन हो वह जीव है।

माया मनुष्य की अपनी युक्ति का यन्त्र है जिससे वह सबको माप तौल करता है किसी को बड़ा समझ कर उसकी बड़ाई से डाह करने लग जाता है। किसी को छोटा समझ कर उसकी छोटाई से घृणा करने लग जाता है। माया जीव को अपनी बुद्धि है।

ईश्वर और जीव दोनों में माया है परन्तु ईश्वर की माया अंग-संग रहती हुई साधारण दुःखदायी नहीं है, मगर जीव की माया अज्ञान के बस दुःख दायी हो जाती है।

अभिमान और दीनता दोनों ही अभिमान के रूप हैं।

ईश्वर समुद्र के समान है उसमें मन की तरंगे स्वाभाविक उठा करती है, वो लाख उठा करें। ईश्वर को इससे हानि लाभ नहीं होता, वह अपने रूप में रहा करता है। जीव नदी है, इस दोष से उसमें जो तरंगे उठती हैं इसमें वह अभिमानी होकर लम्पट हो जाता है।

पूर्ण पुरुष के सतसंग से पूरा लाभ केवल पूर्ण जिज्ञासु ही उठा सकता हैं, दूसरा पूरा लाभ नहीं उठा सकता।

बुद्धि में निर्बलता और भक्ति में सबलता है।

आदि सनसनाहट सुरत कहलाती है जो शब्द व प्रकाश पैदा करती है जिस को ब्रह्म कहते है वह विचारों और बुद्धि के कारण जीव बन जाता है।

रहस्य को खोल देने से विश्वास में दृढ़ता नहीं होती।

जहां तक गति है वहां तक काल का पसारा है। जब तक मन से अहंगकार दूर नहीं हो जाएगा तब तक न आत्मा की समझ आवेगी और न परमात्मा की।

सुमिरन, ध्यान, भजन, कर्म, योग और उपासना यह सब के सब त्रिगुणात्मिक जगत के खेल है। असली पूजा केवल अचिन्त, अभय और प्रसन्न रहना है।

विश्वास में वाद विवाद नहीं होता। स्पष्ट शब्दों में मालिक का रूप विश्वास हैं। तू उस मालिक को जो तेरे विश्वास का रूप है बाहर समझता है, अगर इस पर भी तेरा विश्वास हो तो तेरा काम बन जाएगा। सफलता वास्तव में वहां होती है जहां मनुष्य खुलकर खेलता है।

अगर दुसरे आदमियो को सुख व प्रसन्नता देते हो तो तुम्हारी सुख व प्रसन्नता सौगुनी बढ़ जाएगी और अगर दूसरे आदमियों को दुःख क्लेश पहुंचाते हो तो तुम्हारा दू:ख क्लेश सौ गुना बढ़ जाएगा। परमात्मा दृढ़ संकल्प वालों की सहायता करता है।

मानसिक और आत्मिक शक्ति अवश्य काम करती है मगर जहां अधिकारी व संस्कारी होते हैं।

लेना चाहते हो तो बड़ों का आर्शीवाद लो या नाम लो।

अनुभव का जागना ही वैराग्य और ज्ञान का चेतन में आना है और वही कलयुग का धर्म है।

जीवन में संस्कारों से बचाव नहीं है क्योंकि मौज ने संसार को ऐसा ही बनाया है।

जो मनुष्य बुद्धि के चक्कर में है उसको सन्तों के सत्संग से शान्ति नहीं मिलती Non-conductor किसी बात को बिना परीक्षा किए हुए नहीं मानता।

सब के लिये शुभ भावना और सहानुभूति रखो। ऐसा करने से तुम विशाल हो जाओगे।

जीवन का मतलब कार्य और कार्य का मतलब जीवन है। लेकिन इसमें लम्पट मत बनो।

दुःख केवल स्वार्थ व अहंकार में है। जहाँ अहंकार आ जाता है वहीं परिश्रम व काहिली का प्रश्न उठता है।

दाता दयाल ने एकाग्रता की शिक्षा के साथ शुभ संकल्प रखने की भी शिक्षा दी है।

परमेश्वर, प्रभु या ईश्वर सूक्ष्म व स्थूल प्रकृति से मिली शक्ति का नाम है।

जो सच्चा जिज्ञासु प्रेम व मानसिक आनन्द पाता है अगर उसका यह कार्य सत्तगुरु द्वारा नहीं होता तो शारीरिक और मानसिक जीवन में लम्पट हो जायेगा।

जो पैसा लेकर कीर्तन करते हैं उनकी आंखों को मत देखो, चूंकि वह पैसा लेकर भजन करते हैं, उनकी आंख या चेहरा देखने से तुम कामना वाले हो जाओगे।

हर आदमी की धार जो उससे निकलती है, वायुमण्डल द्वारा अपने जैसे विचार वाले में असर करती है। चाहे वह एक दूसरे को नहीं भी जानते हों।

दस्ते सवाल लाखों ऐबों का ऐब है।
जिसमें न हो यह ऐब वह दस्ते गैब है।

धार्मिक व पंथिक उन्मत्त आदमी स्वच्छ विचार का नहीं हो सकता है।

मुख्य व वास्तविक जीवन उन लोगों का है जिनको कोई खब्त नहीं है।

अधिकारी वही हो सकता है जो पहले ही प्रेम के रंग में रंग चुका हो और वह भी सच्चे निष्काम हृदय से।

जब तक जिज्ञासु की जिज्ञासा तीव्र नहीं होगी उसको कोई कुछ दे नहीं सकता। असली भेद केवल अधिकारी जीवों को बतलाया जाता है।

रहनी उस समय आती है जब सच्चे साहब का रूप समझ में आता है।

निचले (मध्य) स्थानों में माया प्रबल और आत्मा निर्बल है मध्य में बराबर है और उच्च स्थानों में आत्मा प्रबल व माया निर्बल है।

जब तक कोई निर्द्वन्द व अल्मस्त नहीं होता और चित्त की वृत्ति विरोध को प्राप्त नहीं करती, कोई व्यक्ति सार भेद और सार ज्ञान से परिचित नहीं हो सकता।

जो आदमी शब्द व प्रकाश का साधन करने से थक जाता है वह स्वयं, यानि सच्चे मालिक में लय हो जाता है।

जीवन की जरूरतों के पूरा करने का सामान ऊपर के लोकों से आता है।

वर्तमान विज्ञान यह सिद्ध करता है कि प्रत्येक प्राणी से एक प्रकार की सूक्ष्म बिजली इतनी मात्रा में निकलती है जिससे एक शहर में उजाला हो सकता है।

असली आत्मिक यज्ञ यह है कि मनुष्य अपनी वासना को बारम्बार विचार करके अपनी वृत्ति को अपने अन्तर प्रकाश तथा सावित्री रूपी आत्मा में एकत्रित करे, इससे सूक्ष्म प्रकृति संचालित होकर उसकी मनोकामना पूरी करेगी।

जो प्रकृति चाहती है यह जरूर होगा, इस पर तुम को शोक नहीं करना चाहिए।

मौज से जो हो रहा है अच्छा है। मालिक अपना काम करेगा, तुम अपना काम करो। जो होना है स्वयं होकर रहेगा। अगर कुछ नहीं करते तो मालिक पर भरोसा रखो, कार्य करना अपना धर्म है। सफलता का सम्बन्ध किसी परम शक्ति के हाथ में है। ईश्वर का संकल्प चाहे जिस दशा में रखे उसी के अनुसार रहने में भलाई है। ईश्वर की बात ईश्वर ही जानता है। जहां मनुष्य का बस नहीं चलता वहां मालिक की मौज ही पर रहने से भलाई है। मनुष्य को चाहिए कि घबराए नहीं। काम करता रहे, प्रकृति के भण्डार से आवश्यक सामान आप ही आप खिंच कर आ जाएगा। और चित्त की आकर्षण शक्ति उसको खींच बुलाएगी जो हार न माने, थका न समझे वही आदमी काम का होता है। जो व्यक्ति आशावादी रहता है वह गुरु का सच्चा भक्त है। जो कभी निराश नहीं होता सफलता को उसका पैर चूमना पड़ता है।

जितना जिसको जिससे लेना है वह उस से किसी न किसी तरह से लेगा और देने वाला देगा।

आवागमन से बचने के लिए हर प्रकार की वासना से रहित होना अनिवार्य है।

आवागमन से बचने के लिए अपने आप को शब्द व प्रकाश बना लो या इसका इष्ट रखो।

यह प्रजातन्त्र वाले स्वयं स्वच्छ नीयत के नहीं हैं। इस कारण वह जनता में शान्ति नहीं ला सकते।

विषय विकार के जीवन और आर्थिक कठिनाईयों की वजह से मन चंचल रहता है।

शोक की दवा अनुभव और विवेक है कोई अधूरा गुरु या मृतक आत्मा तुमको राह नहीं बता सकता है।

पागल में मनन शक्ति का अभाव रहता है। पागलपन शरीर में विशेष प्रकार की कमी आने के कारण से पैदा होता है यह दवा से दूर होगा, मानसिक उन्मत्तता की दवा, विचार, आत्मिक उन्मनता की दवा, सुरत शब्द योग और सत्संग है।

जब तक कोई किसी भी आशा में फंसा है तब तक उसको शान्ति नहीं मिल सकती है।

परिवर्तनशील दशा का नाम काल है, चौदह लोकों में काल बसता है।

सुख वास्तव में सन्तुष्ट रहने की दशा है।

धनी निर्धन, स्वस्थ, अस्वस्थ और लाभ हानि इत्यादि का बहुत कुछ सम्बन्ध प्रारब्ध कर्मों से होता है।

जो वस्तु परिश्रम से प्राप्त की जाती हैं वह स्थायी नहीं रह सकती है।

एक प्राकृतिक वासना है जिसका नाम मौज है, उसके अधीन मानव की वासना है।

वासना प्रकृति माता है और शब्द व प्रकाश पिता है।

मन-काल व माया का अंश है।

चित्त की वृत्ति की एकाग्रता और वस्तु है ? अन्तःकरण की शुद्धि और वस्तु है। शुद्धि से यह मतलब है कि दिल में दुनिया या दीन की कोई वासना नहीं रह जावे।

सच्चे हितैषी की शुभ भावना अवश्य लाभदायक है, प्रतिबन्ध यह है कि अपनी नीयत साफ हो।

परम सुख न तो साधन में है और न अभ्यास में है, वह केवल अनुभव और ज्ञान में है, परन्तु यह अनुभव व ज्ञान बिना साधन व सत्संग से प्राप्त नहीं होता है।

जब तक तुम्हारे अन्दर अपने होने का भान है तब तक वह भान कलंक का दाग़ है।

मन से ऊंची वस्तु अगर कोई हो सकती है तो वह प्रकाश है।

अहम् भाव का नाश होकर सर्वव्यापक होना निर्वाण है, जो मनुष्य अपने अहम् भावों के ऊपर चला जाता है वह प्रकृति का रूप हो जाता है। उसमें और प्रकृति में केवल इतना भेद है कि प्रकृति एक महान शक्ति है और वह सीमित है।

सुरत का स्वामी शब्द व प्रकाश है। सन्तपद शब्द व प्रकाश का मण्डल है। इसमें मन नहीं रहता इसलिए वासना या इच्छा का कोई प्रश्न ही नहीं उठता वहां एक महान आकर्षण रहता है।

सुरत का खिचाव ही भक्ति है। सुरत का कोई सम्बन्ध शरीर मन व आत्मा से नहीं है। यह साक्षी है जैसे दूध में घी रहता है।

सुरत का और कोई भण्डार है, यह कहां है इसकी समझ अभी तक हमको नहीं आयी।

जो व्यक्ति मानसिक प्रेम सीमा को समाप्त नहीं कर लेता वह मुरली की धुन को नहीं सुन सकता।

रगड़ खाते २ जब मन सूक्ष्म हो जाता है तब मानव को न मानसिक कर्म, न मानसिक ज्ञान और न मानसिक भक्ति ही सहायता कर सकती है, इसके बाद चौथा पद आता है।

जिस मनुष्य के मन की ग्रन्थी खुल गई है मगर आत्मा की ग्रन्थी नहीं खुली है वह मरने के बाद भंवर गुफा के लोक में जन्म लेगा। जिसके आत्मा की ग्रन्थी खुल गई है मगर सुरत की ग्रन्थी नहीं खुली है वह सत्तलोक अलख व अगम में जाएगा। जिस की सुरत निरत होकर अपने स्वयं को खो गई है वह अनामी पद व अकाल गति में जाएगा। यानि सर्व व्यापक हो जायेगा। जिस का शब्द खुल गया हैं वह सत लोक में जायेगा। जिस ने अप्रकाश व अशब्द गति को प्राप्त कर लिया है वह धुर धाम को जायेगा।

जिनको मरते समय गुरु या देवता इत्यादि दिखाई देते हैं वह अच्छे घर में जन्म लेंगे।

महासुन्न से सतगुरु के सिवाय कोई नहीं निकाल सकता है। क्योंकि यहां भी अवगति या विचार हीनता की अवस्था नहीं है जो स्थायी नहीं है प्राणी मन के मण्डल में रहता है यहां भी मुक्ति नहीं है।

प्रत्येक कार्य में निर्भयता और बेखौफी की ज़रूरत है। यह गुण उसमें आते हैं जो आचरण का बहुत ऊंचा हो। जिसके जीवन का लक्ष्य सत्यता हो।

मानव शरीर में आना ही दोष का कारण है। व्यवहार, देह का, प्रतिभास, मन का और परमार्थ, आत्मा और विषय है।

मैं डंके की चोट कहता हूं कि मनुष्य का लक्ष्य पूजा, पाठ और जप तप नहीं है उसका लक्ष्य सत्यपद की प्राप्ति है। यानि सुखमय और शान्तिमय जीवन व्यतीत करना है।

तप, सच्चाई व ईमानदारी से जीवन व्यतीत करने वाले मनुष्य में एक तरह का अहंकार आ जाता है।

जब प्रेमी व प्रियतम मिलकर एक हो जाते हैं तब मनुष्य में बुद्धि आती है। जिसको हम ज्ञान कहते हैं। इससे बेपरवाही आ जाती है। इस बेपरवाही से निष्कामता आ

जाती है । जब चित्त इच्छा रहित होकर शुद्ध हो जाता है तब मनुष्य आत्मा में लय हो जाता है। इसे निर्विकल्प समाधि कहते हैं सविकल्प समाधि में द्वैत भाव रहता है। अहंकार एकदम दूर नहीं होता।

प्रत्येक मनुष्य अपने मरने से थोड़े दिन पहले उसका अनुमान लगा सकता है। हृदय की एक विचित्र दशा हो जाती है। इन्द्रियों की चेष्टा विशेष प्रकार से ऊपर की ओर बदल जाती है । सब लोगअपनी मौत छः महीने पहले जान सकते हैं उनको अपनी नाक दिखाई नहीं पड़ती और न दर्पण, तेल अथवा पानी में अपनी छाया दिखाई पड़ती है।

सहारा तो ईश्वर का है।

संस्कार विचित्र रूप से काम करता है। आत्मा नित्य प्रति साधन से ऊंचे उठने लगती है, संसार का रस फीका मालूम होने लगता है, मन की शक्ति एकाग्र होकर एक ओर ही अपनी चेष्टा बना लेती है। यही जीवन है और असली जीवन है।

राग व द्वेष की तरफ जब तक दो आदमियों में आपस में सहानुभूति नहीं है तब तक आकर्षण नहीं हो सकता। राग व द्वेष की तरफ से ध्यान हटा लेना उदासीनता है।

जिनमें स्वाभाविक सम्बन्ध नहीं होता, उसमें आकर्षण शक्ति भी नहीं होती।

सूक्ष्म भाव वाला मनुष्य अपने विचारों को वैसे ही रंग रूप में देखना चाहता है और इसमें उसे विशेष आनन्द मिलता है, इस आकर्षण शक्ति के अभाव या उसमें दबे रहने की अवस्था को द्वेष और घृणा कहते हैं। वास्तव में जो राग है वही द्वेष भी है। भेद केवल उसकी विशेषता का है।

इच्छा की सफलता का नाम प्रसन्नता है, उसके प्राप्त होने पर खुशी तो मिलती है मगर वह ज्यादा दिन नहीं रहती।

अगर तुम संसारी काम में सफल हो तो जान लो कि तुम्हारा चित्त जाने या अनजाने एकाग्र है। तुम्हारे शत्रु तुम्हारा लाख विरोध करें मगर तुम्हारे दृढ़ व एकाग्रित आकर्षण का सामना नहीं कर सकते, आकर्षण करना यानि ख्यालो धार का मन में एकाग्र करना और उसको चालू करके किसी इच्छित कार्य में ठहरा देना योग के शब्दों में "संयम" कहलाता है।

चित्त रूपी अग्नि को केन्द्र बनाकर ख्यालो आहुति को दे देकर उसको भीतर ही भीतर प्रकाशित करना "हवन" है।

जो लोग जीवन में खींच-तान करते हैं कर्म करने से उनका हृदय विशाल, दृष्टि ओर स्वभाव ऊंचा हो जाता है।

आत्म ज्ञान के अधिकारी केवल थोड़े आदमी होते हैं।

अगर मनुष्य साधन के नियम को नहीं छोड़ता सिद्धि का उचित उपयोग करता है अथवा किसी अधिक सिद्धि वाले के मुकाबिले पर नहीं आता तो वह बनी रहेगी। विपरीत हालत में साधारण हो जाएगी। यह शक्ति हर एक में नहीं आ सकती। साधक गम्भीर स्वभाव नियम पर चलने वाला निर्भय और साहसी हो, चित्त एकाग्र करने की योग्यता रखता हो तो कुछ ही दिन में सिद्धि प्राप्त कर लेगा।

गुरु के चित्त पर शिष्य की अन्तरीय दशा का प्रतिबिम्ब पड़ता है। उससे वह समझ लेता है कि शिष्य समाहित चित्त है या नहीं। अगर शिष्य समाहित चित्त का होता है तो गुरु उसको गुप्त विद्या सिखाकर अपना गुरु ऋण चुका देता है।

रूहों की आगे होने वाली बातों को बतलाने की आज्ञा मालिक की तरफ से नहीं है।

गुरु की उपेक्षा बुरे विचार नहीं लाने चाहिए, इष्ट से ऊंची कोई वस्तु नहीं होती है।

दुनियां में जितनी घटनायें होती हैं उनका प्रतिबिम्ब आकाश के सूक्ष्म पर्दों पर खिच जाता है। जिनके नेत्र रूहानी होते हैं वह उन्हें देख सकते हैं। या तो मनुष्य के नेत्र स्वाभाविक रूप से ऐसे बने हों अथवा देवता ऋषि और भूत आदि इन लोगों को ऐसी दृष्टि दे देते हैं जिनको वह दिखाना चाहते हैं तब इन दृष्यों को कोई देख सकता है।

महाभारत के युद्ध के बाद अन्धे धृतराष्ट्र ने संजय ऋषि से कहा कि मैं अपने पुत्र दुर्योधन की शूरवीरता खुली आँखों से देखना चाहता हूं। संजय ने अपने हाथों से उसके नेत्र छू दिये उसे दिव्य दृष्टि मिल गयी। चूंकि आकाश मण्डल में हर एक योद्धा के चरित्र का चित्र खिच कर सुरक्षित रखा था उसने सब कुछ देख लिया। जिस घर में जो व्यक्ति रहता है उसका प्रतिबिम्ब सदा के लिए खिच जाता है। बार-बार सफेदी करने पर भी वह दूर नहीं होता इसी का नाम चित्रगुप्त है।

भूत दो कारण से आदमी पर सवार होते हैं, या तो इनका कोई काम दुनियां में बाकी रह गया होता है उसको वह उसकी सहायता से पूरा कराना चाहते हैं, अथवा इसे दिखा-दिखाकर उससे अपना बदला लेना चाहते हैं।

यदि आपको स्वप्न अवस्था में स्वाद लेने और बोलने की शक्ति होती है तो भूतों को प्राकृतिक रूप से ज़बान होनी चाहिए।

नियम में कमी बेशी नहीं होती दुनियां जिसको मुर्दा कहती है वह स्वप्न ही का पेश खेमा (अगुवानी) है।

छल व कपट का जीवन स्वयं ही दुखदायी है। गरीब से गरीब आदमी को सोने का सुख मिलता है, मगर कपटी आदमी को नींद तक नहीं आती।

जीवन के सम्बन्ध मरने के बाद बदल जाते हैं।

समय आदमी को उसके अच्छे व बुरे काम का फल देता है।

प्रसन्नता कुकर्मियों के भागमें नहीं आती है। अपनी असलीयत अपना स्वरूप और अपने हैपने को जान लेना ज्ञान है।

जो जिस भर्म में फंसा है वह उसी का तमाशा देखता है।

गुरु की पूजा गुरु की आज्ञा को मानना है।

संसार में प्रत्येक वस्तु किसी न किसी विशेष कारण से प्रकट होती है। और जब तक वह "जरूरत" पूरी नहीं होती कोई उसको मिटा नहीं सकता।

जैसी जिसकी वृत्ति होती है और जिस पर जिसका ध्यान आकर्षित रहता है वही उसको प्राप्त कर सकता है।

हृदय की शक्ति की कमी के कारण मनुष्य मोक्ष को नहीं देख सकता है। हृदय की शक्ति का उभार कर लो और उसको जान जाओगे।

आत्मिक ज्ञान उस समय होता है जब चित्त एकाग्र करके पूर्ण विश्वास की अवस्था प्राप्त कर ली जाती है। इसका नाम तपस्या है।

उपदेश का सम्बन्ध अधिकार से है मन के मानसिक भाव और विचार की धार एक की आंख से निकलकर दूसरेकी आंख में समा जाती है और बिना कहे सुने एक के भाव को दूसरा समझ जाता है।

संतों का संस्कार अनिवार्य फलता फूलता है परन्तु जिस संस्कार को लेकर कोई पैदा हुआ है जब तक वह दग्ध नहीं हो जायेगा, संतों का संस्कार पूर्ण रूप से काम नहीं करेगा।

समझ चार प्रकार की होती है, एक तो सुनी सुनाई बातों को याद कर लेना और उसको तोते की तरह दुहराते रहना, दूसरी सुनी सुनाई बात के किसी हिस्से को समझना, तीसरे असलियत को अनुभव करके उस पर आरूढ़ हो जाना, चौथा अनुभव का रूप बन जाना है।

किसी वस्तु को एक ही दिन के देखने से कोई ठीक राय कायम नहीं की जा सकती।

विचार को बदल देने से स्वभाव में दुचित्ताई आ जाती है और मनुष्य का संस्कार भ्रष्ट हो जाता है।

श्रेष्ठ मनुष्य दूसरे के स्वभाव को अपनी सहनशीलता से बदल देता है।

ईश्वर की भक्ति बिना जरूरत नहीं की जाती। जिसको दुनिया का भोग भोगने को नहीं मिला वह मोक्ष को नहीं समझ सकता है।

मनुष्य के भेष में जिनको तुम देखते हो वह मनुष्य नहीं हैं सम्भव है वह आगे चलकर मनुष्य बन जावे।

अनुमान भी एक प्रकार की विद्या है, जिसका सम्बन्ध मन और इन्द्रियों से है।

(१) यके नेकों, दो बद बाशद, सेह अज मेहनत बर आयद कार चहारुम नहुस पंजम साद, सशुम नेको बले दुशवार।

(२) व हफतुम काम दिलयावी मुरादे दिल शवद हासिल+वो हश्तुम हम वरआयद कार, वाद अज मुद्दते विसी यार.

1	2	3	4
5	6	7	8

1. नेक है।
2. बुरा है।
3. मेहनत से सफलता होती है।
4. बुरा है।
5. भाग्यवान।
6. नेक है मगर कठिन है।
7. मनोकामना पूरी होती है।
8. से भी काम बहुत दिन के बाद निकलता है।

किसी एक विषय में निपुणता प्राप्त कर लो और फिर आदर्श की सच्ची समझ आ जाएगी।

एक ही कारीगर के हाथ की बनाई हुई वस्तु व एक ही आदमी की लिखी हुई किताब का पता सूक्ष्म दृष्टि वाले मनुष्य को ही हो सकता है।

किसी को यह पता न लगने पावे कि तुम तप कर रहे हो। कहने सुनने या दिखावे से प्रभाव जाता रहता है। संकल्प को मुख से प्रगट कर देने से चित्त में निर्बलता आ जाती है। अपने संकल्प से किसी को जानकारी नहीं करानी चाहिए।

वृत्ति के सूक्ष्म होने के कारण सुरत का खिचाव ऊपर की ओर हो जाता है उसकी धार नीचे नहीं आती, इसीलिए वीर्य का उतार नीचे नहीं होता। जो मनुष्य ज्ञान ध्यान से विशेष सम्बन्ध रखते हैं उन्हें संतान कम पैदा होती है।

प्राचीन समय की कुंवारी कन्याओं के बारे में कथायें सुनी जाती हैं कि वह देवताओं की अराधना करके संतान पैदा कर लेती थीं, परन्तु यह विद्या अब संसार से गुप्त हो गई है।

राजा और योगी सिद्धी व माया के चक्कर में पड़े रहते हैं। इस चक्कर से बाहर जाने वाले कोई-कोई ज्ञानी होते है। जिन्होंने योग साधन द्वारा ज्ञान की प्राप्ति की वह निर्वाण पद में लय हो गए।

कुछ दिनों बाद मानसिक भावों का फोटो खींचा जाएगा क्योंकि मनुष्य की बुद्धि इसके पीछे पड़ी हुई है।

बनावट अगर प्रकृति के अधीन रहे और प्रकृति से वह भिन्न न हो तब तो दोनों मिल जुल कर फब जाती है।

दृढ़ता, अभ्यास से आती है और अभ्यास एक दिन का काम नहीं है।

अशान्त मन को शान्ति से क्या सम्बन्ध है। सूअर, बन्दर और भेड़िये यह सब मानसिक भाव हैं, वह जिसके वश में आ गए उसको शान्ति प्राप्त हो जाती।

इच्छा गहरा या अंधेरा कूप है। जिसमें सारे इच्छुक गिरे पड़े रहते हैं।

खाने से खिलाने में अधिक स्वाद आता है, पहनने से पहनाने में अधिक आनन्द मि ता है।

जो गुरु की आज्ञा नहीं मानते, और न उनके बचन पर विश्वास रखते हैं, उनको भूलकर भी सिद्धी शक्ति की आशा नहीं रखनी चाहिए।

बली वह है जिसमें भलाई का गुण और संस्कार हो जिसमें बुराई का संस्कार हो वह निर्बली है। जो दूसरों को सताता है वह बलहीन, वीर्यहीन, पुरुषार्थहीन और चिड़चिड़ा होता है। जो नेक है वह बलवान, वीर्यवान, पुरुषार्थी, प्रसन्नचित्त, सुशील और सहनशील होता है।

दुनिया में जितने जीव जन्तु होते हैं सब पूर्ण हैं। अधीन कोई नहीं है। कौन जाने कब से यह भ्रम मनुष्य के हृदय में आ गया ?

किसी के पीछे मत पड़ो काम से काम रखो।

दुनियादार सब कुछ रखते हुए कंगाल है और उदास रहता है, और साधु के पास कुछ नहीं रहता है मगर वह धनवान हैं और प्रसन्न चित्त रहता है।

अगर मनुष्य सूर्य, चन्द्र व सितारों की तरह काम करने लग जावे तो न कहीं अधीनता हो और न कहीं कमी हो।

सृष्टि दो तत्वों के मेल से होती है। एक गर्मी और दूसरी सर्दी। गर्मी वीर्य और सर्दी रज है।

बचपन की शिक्षा भुलती नहीं उसका महुत प्रभाव होता है।

हर प्रकार की दौलत अपने साथ शराब की तरह अहंकार का नशा रखती है।

जहां सुरत ठहर जाती है उस ठहराव का नाम निरति है।

जब तक दुनिया के बाहरी शब्दों पर काबू नहीं आता कोई व्यक्ति सुख चैन नहीं पा सकता।

परमार्थ की धुन के साथ साथ इस दुनिया में जीवन व्यतीत करने का तरीका भी सीखो।

परमगति कहते हैं सबसे बड़ी अवस्था को। उसे प्राप्त करने का तरीका परमगति प्राप्त किए हुए पुरुष का सत्संग है। इसको वही समझ सकता है जो समाहित चित्त हो। यदि कोई मनुष्य किसी भी तरीके से अपने चित्त की वृत्ति का निरोध कर ले और यदि उसके बाद कोई पूर्ण पुरुष मिल जाए तो उसको किसी भी साधन की जरूरत नहीं रह सकती।

जिनको परोपकार का कार्य करना है उनको तप करना अनिवार्य है।

जो समाधि अवस्था तक नहीं पहुंचे हैं अगर वह पूर्ण पुरुष का आत्मिक सत्संग करेंगे तो उनमें शारीरिक व मानसिक खराबियां होने का भय है।

परमार्थ की प्राप्ति का ख्याल सिवाय खास-खास परमार्थिक आस रखने वालों के, औरों में तो परमार्थिक आस जीवन में अहंकार का अंकुर है।

फिलास्फी का सम्बन्ध केवल मन व बुद्धि से ही है। गुरु को प्रसन्न करना सहज काम नहीं है।

शाँत भाव रखते हुए यह समझो कि मैं सत्पुरुष का दास हूं, यही जीवन मुक्त अवस्था है।

जो अपने भले के वास्ते आनन्द की अवस्था में रहते हैं उनको अपना भला तो होता ही है साथ ही साथ उनके ख्याल और Radiation रेडियेशन से दूसरों का भी भला हो जाता है।

मालिक का कोई रूप नहीं है अगर कोई उसका दर्शन मन से करना चाहे तो वह असफल हो जाएगा। वासना से जो रूप प्रगट होता है वह उसकी छाया है।

ध्यान से वीर्य की कमी पूरी होती है। परमदयाल ने पहले गुरु की सेवा की तब गुरु मिले हजूर महाराज को गुरु पहले मिले बाद को उन्होंने सेवा की।

प्रसन्नता और आनन्द का जीवन व्यतीत करना ही गुरु का गुण गाना है।

सुरत की भक्ति मन से ऊंची है, वह निवृति मार्ग वालों के लिए है, जिनका संसार से जी भर गया है। मगर निबृति मार्ग का प्रेमी कोई बिरला होता है।

कभी का प्रश्न मन के मण्डल में है आत्मा के मण्डल में इसका कोई प्रश्न नहीं है।

यमराज, चित्रगुप्त और धर्मराज मन के तीन रूप हैं। यमराज मन के अनेक प्रकार की वासनाएं है। चित्रगुप्त मन के अन्तर की दबी हुई वासना है और धर्मराज मन की एकाग्र वासना है जिसको मन का ठहराव कहते हैं।

यदि अकाल मृत्यु से कोई मर जावे और उसकी देह और हड्डी पर किसी ब्रह्मनिष्ठी पुरुष की दृष्टि पड़ जावे तो उसकी सद्गति हो जावेगी यदि परम दयाल का व सन्तों का भाषण मृतक को सुना दिया जावे तो वह यमपुर नहीं जायेगा क्योंकि शुभ भावना से मृतक की सद्गति हो जाती है।

जीवन-जीवन के वासनाओं का केन्द्र है।

जो व्यक्ति प्रेम, भक्ति, योग, ज्ञान और आनन्द की इच्छा रखते हैं उनका सूक्ष्म शरीर हल्का होता है। वह दायें बायें, पूर्व व पश्चिम से जाता है।

जिसमें भलाई बुराई की इच्छा नहीं है मगर उनका सूक्ष्म शरीर यानि मन है वह ऊपर (उत्तर) जावेगा।

जिनके मन में बुराई, ईर्ष्या और द्वेष है वह नीचे (दक्षिण) जावेगा जो यमपुरी है।

जब प्रवृति मार्ग के धर्म की हानि होती है तो इसको नियमानुकूल बनाने के लिए ब्रह्म का अवतार होता हैं।

राधा स्वामी मत में मन की भक्ति नहीं है बल्कि सुरत की भक्ति है। मगर सुरत की भक्ति जल्दि नहीं की जा सकती है। यह तब होती है जब मनुष्य मन पर विजय पाकर उसको जीत लेवे।

ध्यान के साधन से मनुष्य की इच्छा शक्ति बलवान हो जाती है और ऐसा मनुष्य जैसा-जैसा सोचेगा वैसा-वैसा होता रहेगा।

जब मनुष्य का हृदय विशुद्ध हो जाता हैं। शब्द व प्रकाश स्वयं खुल जाते हैं।

सबसे पहले काल पुरुष ने आस की थी इसीलिए सन्तों ने इसका नाम काल रखा है वह इस सृष्टि की रचना करता है और यह भी नहीं परवाह करता कि तुम मरते हो या जीते हो।

करुणा, मैत्री, मुदिता और उदासीनता के नियम वरतना चाहिए, यह छोटों पर दया, बराबर वालों से मित्रता, बड़ों को देख कर प्रसन्न होना विरोधी को भूल जाना है।

जीवन नियम पूर्वक व्यतीत करना ही शान्ति है शान्ति और कोई दूसरी बात नहीं है।

मन और देह में रहते हुए जो साधन किया जाता है उससे मनुष्य अपने निज घर नहीं जा सकता अपने आपको शब्द व प्रकाश में रखने से मनुष्य निज घर में जाएगा।

जब तुम्हारी मानसिक वासनाएं कम हो जावेंगी तब मन एकाग्र होगा।

कलियुग में प्रत्येक कार्य जल्द से जल्द होता है, काल हमारा मन है।

मन की बासना और दुनियां की चाह लेकर जब तक तुम ध्यान करोगे तब तक सत्तनाम की प्राप्ती नहीं हो सकती है।

पूर्णमासी-जिस व्यक्ति को सब कुछ प्राप्त है और जिसमें पूर्ण त्याग भी है। वह व्यक्ति भी सतनाम, सच् खण्ड या अकाल पुरुष को प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि पूर्ण ज्ञान न मिले।

जिनको संसार की आशाएं है और उससे निकल नहीं सकते, उसके लिए शब्द योग एक हउवा है।

गृहस्थियों के लिए पूर्णमासी का मार्ग है और संन्यासियों के लिए अमावस का मार्ग है।

जब तक मनुष्य पूर्णमासी की अवस्था को पूर्ण रूप से नहीं भोग लेता, आगे की श्रेणियों में नहीं जा सकता।

सत्त-चित्त आनन्द के आगे शब्द व प्रकाश का मण्डल है जहां देह मन और आत्मा नहीं है।

जब सुरत शब्द को सुनती है देह, गेह और मन के बोधभान नहीं रहते वहां केवल शब्द व नाम होता है वहां सब कुछ भूला हुआ होता है।

अहम् भाव का मिट जाना दीनता है।

जब तक मनुष्य को यह विश्वास नहीं हो जाता कि यह संसार हमारा नहीं है हम किसी और देश के वासी हैं तब तक मन और धन से प्रीति नहीं छूटती।

किसी के ध्यान में जो रंग रूप प्रगट होते हैं वह रंग रूप आदि वह होते हैं जिनका संस्कार दिमाग पर कुछ पहले जन्मों का होता है और कुछ इस जन्म के बाह्य प्रभावों का होता है।

जब तक जीने और मरने का बोधभान है तब तक शरणागतम् का भी ध्यान है, जिसको जीने व मरने का ख्याल नहीं रहता उसको शरणागतम् का भी ख्याल नहीं रहता।

आत्मा में शरणागतम् होना दुनियावी आदमियों का काम नहीं है। इसीलिए आत्मा में केवल वही आदमी शरणागतम् हो सकता है जो शब्द व प्रकाश में रहते हुए किसी वस्तु की खोज में लगा रहता है। जब तक जीवन है सिवाय शरणागतम् होने के और कोई उपाय शान्ति या ठहराव का नहीं है।

जिनको यह ज्ञान हो जाता है कि मन से निकले हुए हर प्रकार के विचार रूप और रंग कल्पित व नाश्वान है और उनको उसपर दृढ़ विश्वास हो जाता है। उनको शरणागतम् होने की जरूरत नहीं है।

सुरत वास्तव में शब्द की चेतन्यता का नाम है। सुमिरन से शरीर के कंवल से निकलकर मन कंवल में मनुष्य शरीर रूपी कंवल से जाता है। ध्यान से मन कंवल से निकलकर आत्मा या प्रकाश कंवल में जाता है। शब्द को सुनने से यानि (भजन से) चौथे पद में जाता है। चौथे पद में आनन्द, उत्साह, साहस, अचिन्तपना और निष्कामता आ जाती है यहां माया अर्थात रचना की पोल खुल जाती है और माया की समझ आ जाती है।

शरीर, मन व आत्मा में रहने वाला आदमी सदा अडोल नहीं रह सकता।

लोक में व्यक्तिगत रहता है अलोक में नहीं रहता जिसका व्यक्तिगत लोक में समाप्त हो जाता है उसका लोक और अलोक एक हो जाता है। निज स्वरूप में पहुंचकर सर्वव्यापक होने का भी ख्याल नहीं रहता।

यदि गुरु क्रियात्मक और पूर्ण है तो शिष्य में भी वह अवस्था आ जावेगी और प्रश्न उत्तर का यह सिलसिला समाप्त हो जाएगा जो मनुष्य अपने अन्तर में गुरु स्वरूप को सत्य मानता है और उसको मौजूद मानता है वह अपने अन्तर में चला जाएगा और उसको वह वस्तु प्राप्त हो जाती है जिसको निज अवस्था कहते है।

जो मनुष्य यह विश्वास करके कि मालिक उसके अन्तर है अभ्यास करेगा उसको अमृत आनन्द तथा परमानन्द अवश्य मिलेगा जिसको ऐसा विश्वास नहीं है वह सर पटक कर मर जावे आनन्द नहीं पावेगा।

जिस आदमी का यह विश्वास है कि ईश्वर उसके अन्दर है उसकी इच्छा या संकल्प बढ़ जाती है उसके Radiation रेडियेशन के कारण उसमें ऋद्धि सिद्धि प्राप्त हो जाती है। मगर मनुष्य को इसमें फंसना नहीं चाहिए।

जब तक मनुष्य की सुरत शब्द व प्रकाश को अपना इष्ट नहीं बनाता तथा स्वयं शब्द व प्रकाश नहीं हो जाती तब तक संसारिक वासनाओं से मुक्ति नहीं होती यह शब्द व प्रकाश दो तरह का है एक तो वह सतलोक में है जो मनुष्य का स्वयंपना है और दूसरा चौदह लोक के ऊपर है जो सबका आधार है। जो मनुष्य शब्द व प्रकाश में वास करता है उसके शरीर छूटने के बाद उसके हर एक तत्व अपने भण्डार में लय हो जाते है।

मनुष्य के अन्दर जो विचार प्रगट होता है उसका रंग, रूप रेखा और वजन उसी तरह का होता है जिस तरह संसार की वस्तुओं का होता है।

जब किसी वस्तु के वास्ते मनुष्य की इच्छा इतनी तीव्र हो जाती है कि उसके पाने के वास्ते आदमी अपनी जान की भी परवाह नहीं करता, तब प्रकृति उसको पूरा करने का प्रबन्ध स्वयं कर लेती है।

कबीर साहब ने जितनी बातें लिखी हैं वह अनुभव आनन्द में आकर लिखी है। आनन्द कई प्रकार के होते हैं। जैसे मन आनन्द, विवेकानन्द, अनुभवानन्द, आत्मानन्द और कामान्द आदि है।

शून्य समाधि में कर्म इन्द्रियां और ज्ञान इन्द्रियां लोप हो जाती हैं।

शब्द की गति यानि कम्पन का नाम प्रकाश है भव सागर मन की कल्पना, जिज्ञासा और आशा है। परोपकार करो जीवन का लक्ष यही है।

सहज समाधि को रहनी कहते हैं। जब इसका अनुभव हो जाता है तब मनुष्य निर्वाण के परे हो जाता है।

जो आदमी सच्चे दिल से मालिक की खोज करता है उसकी सुरत मन के रूप रंग रेखा या भावों के तरफ नहीं जाती इस हालत में जो धुन निकलती है वह मुरली की होती है। जब तक तुमको यह ज्ञान न हो जावे कि मन के विचार रंग व रेखा नाशवान और कल्पित है। तुम मुरली की धुन नहीं सुन सकते।

मन से जो भाव विचार रूप रंग और रेखा निकलते हैं उन को सच मानना ही मन का भान है।

पिण्ड (देह) अण्ड (मन) ब्रह्माण्ड (आत्मा) तीन वस्तुएं हैं।

दूसरों को टेप रेकार्ड सुनाने या मेरी बात कहने में तुम फंस जावोगे, तुम स्वयं मेरी बात सुनो।

सुरत खींचती है रूप, रंगरेखा नहीं बनाती। इनका बनाना मन का काम है। मन के बीच रहकर सुरत मन को रूप, रंग, रेखा बनाने की संचालन करती है। सुरत खिचाव है उसका नाम आनन्द है। आनन्द की अवस्था में तुम कोई रूप नहीं बना सकते।

सुरत नैन का मतलब खिचाव तथा आकर्षण है। जब तक सुरत, रूप, रेखा को छोड़कर अरूप अरंग और अरेखा नहीं हो जाती यानि इनका साथ नहीं छोड़ देती तब तक अपने आदि को प्राप्त नहीं कर सकती।

मालिक का रूप सुरत (आकर्षण) है वह रूप जो कोई गुरु, राम, कृष्ण इत्यादि का अपने अन्तर बनाता है। वह रूप उनके सुरत को उनसे परे की अवस्था में जो रूप, रंग रेखा से न्यारा है, जाने का संकेत नहीं कर सकता यह काम बाह्य पूर्ण पुरुष करेगा।

जो लोग साधक होते हैं महापुरुष उनको काम देते हैं ताकि इस काम से वह अपने मन की गढ़त करते रहें और दूसरों के मन की भी गढ़त होती है।

प्यार छाया से किया, छाया का रूप जाना नहीं।
तुमने अपना और उसका रूप पहचाना नहीं॥

जब तक कि सुरत शब्द में नहीं लगेगी वह अण्ड के पार नहीं जा सकती।

जिस समय यह ज्ञान हो जाता है कि मेरा असली घर मन से परे है और जब मन को छोड़कर सुरत आगे चली जाती है बेहद मैदान आता है। सुरत शान्त होते हुए आगे को बढ़ती है।

१. सर्व साधारण को शिक्षा दी जाती हैं कि जो कुछ है वह तुम्हारे शरीर में है ईश्वर को शरीर में ढूंढो क्योंकि वह शरीर (स्थूल) से ऊपर नहीं जा सकते।

२. जो शरीर में प्रवेश कर जाते हैं उनको यह शिक्षा दी जाती है कि जो कुछ है वह तुम्हारे मन में है इस स्थूल शरीर में कुछ नहीं है।

३. जिनको मन का अनुभव हो जाता है उनसे कहा जाता है कि जो कुछ है सुरत में है. तू सुरत नैन निहार. अंतिम अवस्था तो वड़े भाग्य से मिलती है।

सुन्न का अर्थ भिन्न-भिन्न अनुभवों का आनन्द है, आत्मा के आनन्द की जो तीन पहली अवस्थाएं हैं उनमें काल, माया और आकर्षण साथ रहता है।

मन के बनाए हुए रंग रूप में मत फंसो, तुम्हारे अन्तर से जो वृत्ति निकलती रहती है वह कन्या है और यह वृत्ति जब अन्दर समा जाती है तो ग्रस जाती है उसको महासुन्न कहते हैं। अभ्यास में सुमिरन करते-करते जब तुम्हारे अन्तर में शरीर की समता आ जावे तब तुम को आत्म आनन्द मिलेगा, अभ्यास में जिस को खुशी और मस्ती मिलती है उसका अभ्यास ठीक है और जिसे मस्ती और खुशी नहीं मिलती उसका ठीक नहीं है। प्रसन्नता और आनन्द में अन्तर है।

जिस मनुष्य में कोई वृत्ति नहीं रहती वह अपने आप में ठहरा रहता है। वृत्तियों के समाप्त होने का मतलब अपने आप में लय हो जाना है।

आत्मा अजर अमर नहीं है। इसको रुद्र कहते हैं।

पूर्ण पुरुष का सतसंग करना ही सच्ची गुरु भक्ति है।

आत्मा की समाधि और है, सूरत की समाधि और है उसको विस्माधि कहते हैं। वेदान्ती अपने आप ही को गुरु और अपने आप ही को शिष्य मानते हैं। यह गुरु से द्रोह करने का भाव है।

जब तक सुरत को अपने होने का बोध भान है तब तक वह अंश है।

किसी देहधारी गुरु का गुण तुम गा सकते हो मगर असली ज्ञान रूपी गुरु का गुणगान नहीं कर सकते।

ज्ञान का अंतिम पद अनुभव है। जो लोग इस मार्ग पर चलते हैं सिवाय उन लोगों के दूसरा अनुभव नहीं कर सकता कि हमारा

स्वयं देह, मन और आत्मा के बन्धन में फंसा हुआ था और अब यह बन्धन टूट गए।

जिस मनुष्य ने जीवनमुक्त अवस्था प्राप्त कर ली है वह सच्चा मालिक जो इस रचना का अंतिम सबसे बड़ा ब्रह्माण्ड है उसमें अभी नहीं पहुंचा है जो निर्वाण से एक श्रेणी उपर है।

मनुष्य को शब्द गुरू की भक्ति करनी हैं। जिनको अपने घर की खोज है वह शब्द गुरु को मालिक समझकर अन्तरी साधन करते हैं। शब्द सुनने से प्रकाश पैदा होता है और प्रकाश से ज्ञान पैदा होता है।

सुरत का रूप अपने लोक में श्वेत प्रकाश का है। इसमें सुरत खेल करती फिरती है।

जहां पुरुष है वहां कुछ भी नहीं है। मन में जब तक दुनियां की आशा है तब तक जब तक तुम ध्यान करोगे सतनाम नहीं आ सकता है। जिस मनुष्य को सब कुछ प्राप्त है और उसमें पूर्ण त्याग भी है वह भी नाम सच्च खण्ड या अकाल पुरुष को प्राप्त नहीं कर सकता जब तक उसको पूर्ण ज्ञान न मिले।

जितने सम्प्रदाय हैं वह सब काल व माया में हैं।

सूफी, कर्मी, धर्मी, वेदान्ती, नवी और तपेश्वर सबके आत्मा का अहम् भाव नहीं जाता यानी उसमें दीनता नहीं आती है।

प्रेम व परोपकार करने से मन निर्मल होगा तब सुन्न मण्डल देखोगे जब तक दया व प्रेम का भाव नहीं है दो-दो घण्टे कान में अंगुली लगाकर अभ्यास करते रहो कुछ भी नहीं होगा।

प्रेम, दया, दान और त्याग करना सीखो।

नौ ग्रहों के ऊपर जाने पर शान्ति प्राप्त होती है सुख का साधन अपने आप को अपने में स्थित करना और सहनशील बनाना है।

जब काल ने सृष्टि रची तब वह अपूर्ण था।

आत्मानन्द की दशा वास्तव में इष्ट नहीं उत्पन्न करता बल्कि इष्ट प्रेम से मिलेगा।

जड़ मूर्ति से जड़ भाव और चेतन्य मूर्ति से चेतन्य भाव पैदा होता है।

काल मतवालों के भाग्य में झकौल है, अहंकार व अभिमान है जो काल का असली रूप है उनमें कठोरता रहती है। वह खर दिमाग होते हैं उनमें दूरदर्शिता नहीं रहती और न आ सकती है।

सत्य को जिसने जाना उसका जानना न जानने के समान है। जिसने नहीं जाना उसको तो कुछ कहना ही नहीं है।

ऋषि कहते हैं "वह सब कुछ है।" मुनी कहते हैं "उसकी निसवत कुछ कहा नहीं जाता।" और चुप रहते हैं। यही वजह है कि ऋषियों को (मंत्रद्रष्टा) और सत्त के भेद का जानने वाला और मुनियों को साधन करने वाला कहा जाता है।

मुनियों ने ज्ञान कांड की नीव डाली और ज्ञान ही को उसकी (परमात्मा) के प्राप्ति का साधन ठहराया कर्म (वेद) की स्थिति उनकी दृष्टि में विशेष महत्व की सिद्धि नहीं हुई चूंकि वह सत्त (जात) के विचारों की ओर झुके उनको किसी हद तक हृदय की शान्ति और सुख का स्वाद मिलने लगा।

कर्म व ज्ञान के बाद उपासना काण्ड जारी हुआ, जब तक हमारी संसारी इच्छा की पूर्ति न हो। हमारी सुरत ऊंचे लोकों में प्रवेश नहीं कर सकती।

यदि हम आत्मदर्शी हो जावें तो हममें आत्मा की शक्ति आ जावे। फिर हम जो चाहें अपनी चिन्तन व मनन शक्ति से कर सकते हैं।

अहंकार होने के कारण मनुष्य रजोगुण से ऊपर नहीं जा सकता। अहंकार दूर होने पर आत्मा का दर्शन होता है।

ब्रह्माण्ड में जाने का सरल, सुगम, शीघ्र और निश्चित अस्त्र शब्द है।

शिवजी जगत का संहार इसीलिए करते हैं कि सब लोग सत्तस्वरूप की ओर वापस होकर स्वयं का आनन्द प्राप्त करें।

शिवजी नंग-धिड़ंग इसलिए रहते हैं कि वह स्थूल, सूक्ष्म और कारण तत्वों के खेल में नहीं फंसे हुए हैं।

आकाश एक तत्व है इसमें क्रमशः मथन उत्पन्न होकर वायु अग्नि, जल और मिट्टी पैदा होती हैं।

पहले विचार पैदा होता है उसके बाद प्राकृतिक सामान मिलता है भला बिना किसी विचार के कोई प्रकृति का रूप तो बना ले।

प्रकृति का पहला तत्व बुद्धि है। ईश्वर अपरमित है जीव परिमत है इसी कारण ईश्वर में सुख और जीव में दुःख है।

भली-भान्ति अभ्यास करो। जो कमी रह जावे उसको दान से पूरा करो। जो कमी अनातित तथा अन्य भाव के कारण उत्पन्न हुई है वह दूर हो जावेगी। जब कुछ दिनों तक इस प्रकार का अभ्यास हो जावेगा और तुम क्रियात्मिक विशाल हो जावोगे फिर तुम में नाम के लिए नेकी की कमी बेशी का विचार उत्पन्न न होगा। उपकार व दान तुम्हारा रूप बन जावेगा। उस समय तुम एक से जो सर्वब्यापक और पूर्ण है उससे मिलकर एक हो जाओगे यही असली मोक्ष है पर उपकार वास्तव में निज उपकार है चित्त लगाने से हित और चित्त न लगाने से अहित होता है। अगर तुम निष्काम होकर भूखे को रोटी, प्यासे को पानी, नंगे को वस्त्र, रोगी को दवा, अज्ञानी को ज्ञान देते हो तो यह काम तुम्हारा महा कल्याणकारी है।

जो कुछ दृष्टि में आता है और जो कुछ दृष्टि में नहीं आता जिसको हम लोग सोच सकते हैं और जिसको सोच नहीं सकते वह सब ही प्रकृति है।

पहले मालिके कुल का दामन पकड़ लो और तुम को कुल मिल जावेगा, मगर किसी महात्मा की सेवा व सतसंग में रहो।

कुछ दिनों पीछे अपने आकर्षण की भावनाओं के अनुसार अपनी अवस्था में परिवर्तन देखोगे।

सत्त प्रकाश का रूप है।

चार्वाक (नास्तिक) जगत को मिथ्या नहीं कहता, क्योंकि जगत को वह प्रत्यक्ष देखता है मगर वेदान्त जगत को मिथ्या कहता है।

बिना भोग (राग) के वैराग नहीं आता। जब राग अवस्था (सीमा) समाप्त हो जाती है तब वैराग उत्पन्न होता है। वैराग्य उत्पन्न होते ही मुक्ति झलकने लगती है। जो लोग राग नहीं भोगते वह वैराग के अधिकारी नहीं हैं।

प्रेम व प्रतित सच्चाई है, घृणा व द्वेष झूठ है, मन की बैठक आत्मा और देह के बीच है।

आत्मानन्द के प्राप्त करने में परिश्रम और उसके स्थिर रखने में भी परिश्रम करना पड़ता है, इस पर भी वह अपने अधिकार में नहीं रहता।

इस दुनियां का बनाने वाला प्रकाश का एक महान भण्डार है, जिसके अन्दर से विचार तथा माया निकलती है। प्रकाश का गुण फैलना और रचना करना है।

दुनियां के बनाने वाले ने दुनियां बनाई, यह उसका स्वाभाविक गुण है।

रचना का करने वाला एक महान पुरुष है उसको हिरण्यगर्भ अव्याकृत तथा विराट कहते हैं।

जब तक कोई मनुष्य प्रकाश स्वरूप ईश्वर और कर्ता पुरुष का दर्शन नहीं कर लेता तथा नहीं जानता वह नाम की प्राप्ति नहीं कर सकता है।

नाम के सुनते समय जो आनन्द मिलता है वह नाम का बोझ है।

जब असली व सच्चे नाम की प्राप्ति हो जाती है तब कोई भार नहीं रहता, वह अवस्था सूक्ष्म से सूक्ष्म है।

एक त्रिवेणी तो हमारी शारीरिक, मानसिक और आत्मिक या रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण के एकत्रित की अवस्था है जो त्रिकुटी कहलाती है, दूसरी त्रिवेनी वह अवस्था है जहां सुरत के ऊपर कोई भार नहीं रहता।

आध्यात्मिक अवस्था प्राप्त करने के लिए देह और मन के बोधभान को भुलाना होगा।

सूक्ष्म प्रकृति के प्रकाश व शब्द की सहायता लेने वालों का मानसिक जीवन सुखी व आनन्दमय होता है।

अच्छे विचारों के लिए अच्छे भोजन की भी जरूरत है।

जिस मनुष्य में जिस प्रकार का प्रकाश पैदा होगा उसकी दशा उसी प्रकार की होगी। जैसा सुभाव होता है वैसा साथी भी मिल जाता है।

गुरु ज्ञान ही का नाम, नाम की प्राप्ति है।

जो आदमी अपने मन के अन्दर शब्द व प्रकाश प्रगट कर लेता है उसको साहस निर्भयता अचिन्तपना प्राप्त होता है, उसकी मनोकामनाएं पूरी होती हैं, उसके विचार की शक्ति से दूसरों को साहस निर्भयता मिलती है और उनकी भी मनोकामना पूरी होती है। परन्तु केवल उन लोगों की मनोकामना पूरी होती हैं जो शब्द व प्रकाश के साधन करने वाले नियम का पालन करते हैं। जो मन के अन्दर शब्द व प्रकाश का साधन करते हैं उनसे लाभ उठाने के लिए और शान्ति प्राप्त करने के लिए कुछ न कुछ तुमको साधन करना पड़ेगा, जिससे उनकी विचारधारा तुम तक पहुंच जावे। इसलिए उस वस्तु की प्रबल इच्छा रखना और उस साधु से सम्बन्ध रखना जरूरी है जब तक सम्बन्ध नहीं जुड़ेगा तब तक सूक्ष्म या कारण प्रकृति के अनुभवी पुरुषों से कोई लाभ नहीं होता।

जब तक मनुष्य हार्दिक और मानसिक शक्तियों के अभ्यास के योग्य न हो जावे तब तक उसको कर्म करना अनिवार्य है।

पतीत वह है जो सूक्ष्म अवस्था से गिरकर स्थूल अवस्था में आया हो।

बुद्धि एक सूक्ष्म तत्व है जो मन तत्त्व से दूर और आत्मा तत्त्व से निकट है. बुद्धि तत्व मन और आत्मा के बीच है. इसको सात्विक प्रकाश की अवस्था कहते हैं. आत्मिक प्रकाश की अवस्था उससे दूर है।

शारीरिक. हार्दिक और मानसिक शक्तियों की उन्नति जीवन के दैनिक संघर्ष और आस पास के वातावरण और घटनाओं के साथ मुठभेड़ करने से होती है।

अपने को अपने अन्तर मिलो, अपने को अपने अन्तर देखो। अपने को अपने अन्तर करो तब तुमको अपने अन्तर असली जीवन प्राप्त होगा।

सुख ज्ञान और जीवन एक ही वस्तु है, धर्म का यही उपदेश है, धर्म इन्हीं की प्राप्ति का साधन बताता है।

सुख के भोगने वाली वस्तु केवल आत्मा है, आत्मा मन की सहायता से सब कुछ उत्पन्न कर लेता है।

जो सुरत हममें और हमारे अन्दर रहती है, अपने भण्डार में से केवल एक कण है तथा समुन्द्र की बून्द व सूरज की किरण के समान है।

ब्रह्माण्ड स्वयं माया और मन की मिलनी से प्रगट हुआ है।

शरीर के छः भाग हैं जिनको कंवल या चक्र कहते हैं, यह नसनाड़ियों के गोले हैं। जो अपनी जगह से अपनी धार नीचे ऊपर फेंकते हैं।

१. पहिला कंवल दोनों भांवों के बीच और नाक से तनिक ऊपर है, इसको तीसरा तिल शिव नेत्र, ज्ञान नेत्र और आत्मनेत्र आदि कहते हैं इससे नीचे के पांच चक्रों को शक्ति मिलती है।

२. दूसरा कंवल कंढ़चक्र है जो शरीर में आकाश तत्व के ब्रह्माण्डी मण्डल का प्रतिबिम्ब है और सांस को नियमित रूप से चलाने वाला है।

३. तीसरा हृदय कंवल है यह ब्रह्माण्ड के वायु मण्डल का प्रतिबिम्ब या नकल है. यह वायु का स्थान है. इससे नीचे के तीन कंवलों को मदद मिलती है।

४. चौथा नाभी कंवल है जो शरीर में अग्निमण्डल का प्रतिबिम्ब है। इसको जठराग्नि कहते हैं। इससे शरीर के कुल अंगों को गर्मी पहुंचती है।

५. पांचवां कंवल लिंग है जो ब्रह्माण्ड के जल मण्डल का प्रतिबिम्ब है. यह जीवन की रचना में सबसे पहला तत्व है।

६. छठवां कंवल गुदा है जो पृथ्वी के मण्डल का स्थूल शरीर में स्थान है।

रचना नीचे के मण्डल में भी है मगर इसमें आत्मिकता इतनी कम है जिसको लगभग जड़ ही का स्थूल रूप कहा जा सकता है।

ब्रह्माण्ड का धनी महासुन्न नाभी स्थान में रहता है और वही ब्रह्माण्डी मन को ताकत तथा गति देता है और जो चेतन्यता ऊपर के स्थानों (लोकों) के योग्य नहीं है, उनको नीचे की ओर गिराया करता है।

दूसरा स्थान सुन्न है जो हमारे कंठ कंवल के समान है।

ब्रह्माण्ड के कंवल	शरीर के कंवल
१. महासुन्न	१. तीसरा तिल
२. सुन्न	२. कंठ कंवल
३. त्रिकुटी	३. हृदय ,,
४. ,,	४. नाभी ,,
५. ,,	५. लिंग ,,
६. सहसदल कंवल	६. गुदा ,,

जिसको पुरुष और प्रकृति कहा जाता है उसका इजहार सुन्न के स्थान से होता है।

त्रिकुटी में असली ब्रह्मा, विष्णु और शिव हैं। मन, चित्त, बुद्धि व अहंकार का स्थान हृदय चक्र है।

भंवरगुफा से वह आत्मिक धार नीचे आती रहती है जो ब्रह्माण्ड तथा शरीर के लिए जरूरी है।

दयाल कंवल	ब्रह्माण्ड कंवल	पिंड या माया कंवल
(१) राधास्वामी धाम	(१) महासुन्न	(१) तीसरा तिल
(२) अगम लोक	(२) सुन्न	(२) कंठ
(३) अलख लोक	(३) त्रिकुटी	(३) हृदय
(४) अनामी लोक	(४) ,,	(४) नाभी
(५) सत्त लोक	(५) ,,	(५) लिंग
(६) भंवर गुफा	(६) ,,	(६) गुदा चक्र

मनुष्य के दिमाग में बारह कोठरियां हैं इनमें से छः पीले रंग के पदार्थ और छः बिल्कुल सफेद रंग के पदार्थ हैं पीले रंग के पदार्थ की कोठरियां ब्रह्माण्ड के छः भागों से निकलते हैं और श्वेत रंग की कोठरियां आत्मिक मंडल के प्रतिबिम्ब रूप हैं इनके अन्दर सुरत केवल अपनी सहायता से एक के बाद दूसरे में आ जा सकती हैं।

चित की वृत्तियों द्वारा जो धार निकलती है वह शब्द है। जिसको प्रकाश कहा जाता है वह शब्द के पेट से ही निकलता है और शब्द ही है।

जितना अभ्यास में चित लगाया जायेगा उतना ही लाभ होगा।

जिन्होंने अपने अन्दर साक्षातकार नहीं कर लिया है उनका भरोसा नहीं।

नाम वास्तव में नियम है जिसके सहारे बह्मान्ड और सृष्टि का काम हो रहा है।

मन जितना ही सूक्ष्म होगा उतना ही बलवान होगा। सूक्ष्म मन वाला मनुष्य यदि हाथ पांव के काम का अभ्यास करता रहे तो वह बलवान हो जावेगा।

जब धार का रुख बाहर की ओर है तब रचना या सृष्टि होती है और जब अन्दर की ओर जाती है तो प्रलय होता है।

आत्मसत्ता की धार सत्तलोक से उतर कर भंवरगुफा में आई, इसने महासुन्न के स्थान पर ठहर कर ब्रह्माण्ड को रचा जिसमें ब्रह्म के सहारे कुल कार्य होता है।

सुरत का रंग श्वेत, मन का रंग पीला और माया का रंग काला होता है।

खुश रहने का सुगम तरीका यह है कि आदमी काम में लगा रहे और अपने काम को काम करने के हेतु करे।

यदि मनुष्य अपने ही विचारों से काम ले तो साधारण रोग केवल विचार शक्ति से दूर हो सकते हैं। आगर आदमी अपनी बिमारी दूर करना चाहता है तो चित्त की कुल वृत्तियों को समेटकर उसको ओर लगा दे वह अवश्य अच्छा हो जायेगा। अगर यह विचार पक गया है कि रोग दूर नहीं होगा तो इसका झगड़ा छोड़ दे। जो होना है होकर रहेगा और जो नहीं होना है वह कभी नहीं होगा।

प्रकृति के अटल नियम में स्वार्थ का प्रश्न कभी भी नहीं है।

नियम और बन्धन शरीर के लिए हैं। आत्मा का कोई कायदा कानून नहीं है।

हिन्दु विचार को एकाग्र करने का भेद जानते थे।

संकीर्ण विचार और तंग खयाल मनुष्य को ऊंचा नहीं होने देता।

सतसंग करो और मन पर विजय पाने का रहस्य सीखो।

अंतिम अवस्था की कोशिश मत करो, अधिकता और न्यूनता में खतरा है।

समता के मार्ग पर चलने वालों को संसारी दुःख सुख दबा नहीं सकता।

मौत का ख्याल भूल कर भी न आने दो। संतोष और मुस्तैदी एक ही बात नहीं है।

प्रकृति परिवर्तन चाहती है और भलाई इसी बात में है कि तुम परिवर्तित होते रहो।

नम्रता और दीनता की आदत डालो।

एक के निकल जाने से समुद्र, समुद्र नहीं रहेगा।

जिसमें ममता व अहंकार का दोष है, वह आत्मिक अवस्था प्राप्त नहीं कर सकता।

अपने रूप का ज्ञान प्राप्त करके अपने रूप में स्थिर रहना निर्वाण है।

स्थूल, कारण और सूक्ष्म को त्रिलोक कहते हैं।

अमन कहते हैं मन से अलग हो जाने को और मन के प्रभाव से खाली हो जाने को।

सुरत का शब्द में समा जाना वास्तव में सहज समाधी है। अन्तरमुखी साधन करने वाला हर समय प्रसन्न चित और चुस्त होगा।

जीवन की गति स्थूल मण्डल से शुरु होती है और अन्तिम मंजिल सत्तलोक में जाकर पूर्ण होती है। इस प्रकार का आदमी जानता हुआ अनजान और ज्ञान रखता हुआ अज्ञानी बना रहता है।

अन्तरमुखी आदमी स्वयं का साक्षातकार कर लेने पर उसे प्रगट नहीं करता, किन्तु उसके चलन, व्यवहार, वचन-विलास और रंग ढंग को देख कर ज्ञानी पता लगा लेता है कि वह सच्चा मनुष्य है।

निष्कामकर्म मनुष्य के मन और मानसिक भावों को शुद्ध करता है, किन्तु मुक्त पुरुष के काम में स्वार्थ और निस्वार्थ दोनों नहीं रहते उसका कर्म स्वभावतः होता है।

ब्रह्म में न गति है न गतिहीनता है वह न चल है और न अचल है, वह न किसी के सहारे है और न कोई उसके सहारे है।

वायु का गुण स्पर्श, अग्नि का गुण रूप, जल का गुण रस और पृथ्वी का गुण गन्ध है।

मानसिक सृष्टि में भी रूप बनते हैं।

श्राद्ध का अर्थ श्रद्धा के साथ अपने शुभ भावों को पित्रों को देना है, यही सच्चा श्राद्ध है।

गुरु के साथ केवल आज्ञा का पालन करना और अनुकूलता करने की जरूरत है, यदि दोनों का मेल मिल जाता है तो गुरु का वचन ही शास्त्र है।

संसार भ्रम, संशय, शंका और सोच का नाम है। गुरु और शिष्य का सम्बन्ध पानी और मिश्री के समान है।

मनुष्य हर जगह चोरी, मक्कारी और धोखे-बाजी से काम ले मगर गुरु के दरबार में इस से वंचित रहे। गुरु रक्षा या शरण का स्थान है, वह किसी का भांडा नहीं फोड़ता।

अगर शिष्य गुरु की आज्ञा का पालन करता है और सच्चा है तो गुरु पहले से ही इसके वास्ते सूली पर चढ़ा हुआ है यानी *Crucified* है। यदि गुरु ऐसा नहीं है तो वह असली गुरु नहीं है।

समझने की असल वस्तु मन है। देह इस पार है, आत्मा उस पार है, मन दोनों के बीच पुल के समान है। यह देह और आत्मा दोनों पर प्रभावशाली है।

इन्द्रियों का मण्डल जाग्रत मन का मण्डल, स्वप्न और सुरत का मण्डल सुषुप्ति है।

जीव संकीर्ण और ईश्वर विस्तृत है. जहां स्थूलता व सूक्ष्मता का प्रश्न छोटाई बड़ाई का विचार, नाम व रूप का ज्ञान मिट गया वहां केवल चैतन्य रहता है और इसी को चौथी अवस्था कहते हैं।

प्रकृति में देने का सवाल अधिक है और लेने का सवाल कम है। तुम को इसका अभ्यास करना चाहिए। जो कुछ दो स्वतंत्रता व उदारता के साथ दो। जो इस प्रकार देते हैं उनके भण्डार में लक्ष्मी निवास करने लगती है इससे तुम आजाद व दूरदर्शी हो जाओगे।

प्रकृति ने मनुष्य को सामग्रीहीन पैदा किया है. इसका मतलव यह है कि वह सोच समझ कर अपने लिए आवश्यक साधनों की खोज करे।

अगर किसी को यह शक्ति हो जावे कि वह मनुष्य के मन के पर्दों को चीर कर देख सके तो उसको सुगमता से पता लग जावेगा कि यह साढ़े तीन हाथ का खाली पुतला सीमित अवस्था में पैदा किए जाने पर भी अपरमीत के साथ सीमित और संनिकट होना चाहता है।

जहां गुरु, वेद और अपना अनुभव मिल जावे वहीं ठीक है।

मन में आकर्षण की दो शक्तियां हैं राग और द्वेष। जिस समय इन दोनों शक्तियों से काम लेने की योग्यता आ जाती है उस समय मनुष्य हर प्रकार की शक्तियों का भण्डार हो जाता है।

विष्णु अगर अथाह सागर में बसते हैं तो शिवजी हिमालय की सबसे ऊंची चोटी पर निवास करते हैं, परन्तु सरस्वती

प्रसन्नता से मुस्कराती हुई आकाश में उड़ने वाले पक्षी पर सवार हो कर तुमको असली हैसीयत प्रदान करती है।

पारवती का भण्डार अपेक्षित रूप से इतना म्बा चौड़ा नहीं है परन्तु सरस्वती के भण्डार का पारावार नहीं है।

हम लक्ष्मी भण्डार से आहार प्राप्त करते हैं, पारवती भण्डार से हाथ पांव में शक्ति पाते हैं और सरस्वती भण्डार से ध्यान व विचार की योग्यता प्राप्त करते हैं।

कर्म. ज्ञान व भक्ति इन तीनों का आदर्श एक ही है मगर उनके साधन के रास्ते अलग हैं।

स्वास्थ्य. न्याय और सुन्दरता इन्हीं को ईश्वर कहते हैं। ब्रह्मा रज है. रज में खिचतान. सुख दुःख सोच और फिक्र है। जिन में ब्रह्मा का प्रभाव है वह काल व कर्म के ऋणी हैं।

विष्णु सत्य है, सत्य में प्रकाश और आनन्द है। शिव तम है जिनमें स्वतंत्रता का अस्तिव है और कुछ नहीं है। इसी को निज स्वरूप कहते हैं।

दु खी सब हैं इससे छुटकारा पाना सभी चाहते हैं परन्तु देश काल और वस्तु ने विवश कर रखा है।

बुरी संगत और बुरी जगह को छोड़ देना यम, और अच्छी संगत और अच्छी जगह को ग्रहण करना नियम है।

ब्रह्म में तीन हालतों का होना पाया जाता है। पहला बढ़ना दूसरा सोचना और तीसरा ज्ञान।

आस. गर्ज और स्वार्थ वासना है. मांगना. अपमान और अपूर्णता का चिन्ह है।

स्थूल सूक्ष्म और कारण यह मन के तीन रूप हैं। जैसे प्रत्येक कार्य. प्रत्येक मनुष्य नहीं कर सकता वैसे ही प्रत्येक नियम प्रत्येक जगह काम नहीं कर सकता।

हथियार रखने का अभिप्राय: खून बहाने से नहीं है, यह रोब दाब और शारीरिक बाहुबल का चिन्ह है।

छह देह के चक्र, छह मन के चक्र=१२, पांच ज्ञान इन्द्रियां +आत्मा व बुद्धि=७ इनको १२ से गुणा करो तो १२×७=८४ हुआ। इसी को चौरासी का चक्र कहते हैं जिस में मनुष्य की सुरत फंसी रहती है।

मरते समय किसी भाग्यवान हो को प्रकाश दिखाई देता है वरना किसी को जन, किसी को जमीन और किसी को जर दिखाई देती है, जो माया का रूप है।

धन चाहते हो धन दो। आदर चाहते हो तो मान करो। अपमान चाहते हो तो अपमान करो।

जब तुम्हारी बुद्धि ४० दिन के बच्चे के समान हो जावेगी तब तुम निज घर जावोगे।

कभी दिल न मुरझाओ सदैव आशावादी रहो उस मालिक को हमेशा अपने साथ समझो। यदि तुम को यह समझ आ गई तो तुम्हारी रक्षा होती रहेगी।

सुखी होना पुण्य का फल है और दुखी होना पाप का फल है।

यदि तुम अपनी इच्छा मालिक की इच्छा के अधीन कर दो तो फांसी का दुःख कांटे के दुःख के बराबर हो जावेगा। सिवाय शब्द व प्रकाश के और कोई माता पिता यानि रक्षक नहीं।

इस समय देश में जितनी अशान्ति है उसका मुख्य कारण सिनेमा है।

स्वाभाविक रूप से विदेहपुरुष भी प्रयत्न करता है मगर उस के प्रयत्न में कोई खींच-तान नहीं होती है।

उस परमतत्व से शब्द व प्रकाश स्वाभाविक ही पैदा होते रहते हैं और यह रचना होती रहती है।

मन के विचारों व स्वभावों में विक्षेप न होना "शान्ति" है। साधन नाम है शारीरिक, मानसिक और आत्मिक अवस्थाओं का अनुभव करना, और सतसंग नाम है अपने अनुभवों का समर्थन हो जाना।

वेदान्तियों की तरह मुंह से कहने से अभय अवस्था प्राप्त नहीं होती बल्कि साधन करने से होती है। अभय अवस्था मनुष्य के अन्दर एक अवस्था या केन्द्र है जहां पर पहुंच कर इस संसार के भय, डर, दुःख और सुख से छुटकारा होता है।

जीवन जब बढ़ते-२ समाप्त की अवस्था प्राप्त कर लेता है तो मोक्ष की दशा प्राप्त कर लेता है।

संकल्प-विकल्प में फंसना भोग है और उसमें न फंसना मोक्ष है।

जो वस्तु मनुष्य के मन से उत्पन्न होती है और वह उसको सत्य मान कर उससे प्रेम करता है वह मनमुख है। जब तक कोई गुरु की मूर्ति को पूजता है वह मनमुख है। गुरुमुख वह है जो उस अकह, अपार व अगाध का इष्ट अपने मन के गुरु के रूप के द्वारा रखता है।

विकल्प व निर्विकल्प समाधी वाला इस जन्म मरण से बच नहीं सकता।

जब तुम ज्योति फाड़ कर शब्द के अन्दर चले जावोगे तब काल कर्म व आवागवम से पार हो जावोगे।

शारीरिक चेतना का न रहना अधियास है।

जिस प्रकार काम भोगने से तुम्हारा मन शिथिल हो जाता है उसी प्रकार महासुन्न में पहुंचने पर मन, चित्त, बुद्धि और अहंकार शिथिल होकर अपना प्रभाव भूल जाते हैं।

जो गुरु केवल निर्वाण पद की शिक्षा देता है वह पूर्ण नहीं।

यदि किसी को पूर्ण पुरुष से प्रेम है तो उसकी शरीरिक और आत्मिक अवस्थाएं जरूर ठीक हो जावेगी।

जो लोग धन, मान, पुत्र, स्त्री, सम्पत्ति से गहरा प्रेम रखते हैं जो असत्य हैं वह सत्य को प्राप्त नहीं कर सकते।

मुक्त पुरुष अनुभव और ज्ञान है। यह शब्द व प्रकाश है और निर्वान पद है।

जो मनुष्य शब्द व प्रकाश की ओर चला जाता है उसको हकीकत या सतपद का पता चल जाता है।

सर्व आधार वह नहीं है जो इस सृष्टि को उत्पन्न करता है। जिसने यह सृष्टि बनाई है वह काल है और बड़ा निर्दयी है इसने हम को थोड़ा सुख विषयों के रूप में दिखा दिया और हम को दुख व अशान्ति से भर दिया।

यदि हमको पूर्ण विश्वास हो जावे कि हम जहां से आये हैं। वहीं हमको वापस जाना है, हम उस सर्व आधार के अंश हैं. यह दुनियां स्वप्न है तो हम को ज्यादा अभ्यास करनें की आवश्यकता नहीं है मगर इस विश्वास के वास्ते पहले पूरा अभ्यास करना पड़ता है।

जब देह मन और आत्मा तीनों समता की अवस्था में आकर शान्ति प्राप्त कर लेती है तब जीव अपने घर यानि शब्द ब्रह्म जो असली ब्रह्म है उसको पा सकता है।

जब तक दिमाग से गुरू का भाव भी नहीं छूटता तब तक मनुष्य अपने निज घर में नहीं जा सकता।

गुरू की दया मनुष्य को निर्भय बनाती है। जिस के दिल में संसार की वासना है वह मालिक को अपना रूप नहीं कहता बल्कि अपने से उसको जुदा समझ कर मालिक कहता है और जिस के दिल से संसार की वासना हट गई है वह मालिक को अपना रूप समझता है।

संकल्प हमारी माया और संकल्प को पूरा करने की धुन काया है।

सन्तों की रक्षा के लिए काल का अवतार होता है वह यह है कि जब काल देखता है कि जीव सन्त की बात नहीं मानते तो उसको मनवाने के लिए आता है।

साधन से सन्तुष्टी नहीं आनी चाहिए।

जब प्रेम का अन्त होकर उसकी खेंचातानी खत्म हो जाती है, उस अवस्था का नाम मुक्ति है। प्रेम का अन्त होने पर शांति आती है वही मुक्ति है। प्रेम भूल जाना ही भोलापन है। भोला वह है जिसको चिन्ता नहीं होती और स्वभाविक कर्म करता रहता है।

संसार की प्रत्येक वस्तु से अपनी सुरत को हटा लेना ही नौ द्वार से निकलना है।

जब अंश (जीव) पूर्ण (ब्रह्म) में मिल जाता है तब कहना, सुनना समझना समाप्त हो जाता है।

जब मनुष्य को विश्वास हो जाता है कि गुरु हमारे अन्तर है हम से अलग नहीं हैं तो उसके लिए आगे जाना बहुत सुगम हो जाता हैं।

जब तक माया नहीं मिटती तब तक आवागवन का चक्र समाप्त नहीं होता।

मिलने की अपेक्षा प्रतीक्षा में आनन्द है मिलने के बाद शांति आ जाती है।

जिनको अपने निजरूप का ज्ञान हो जाता है वह सफलता और संस्कृति की चोटी पर चढ़ जाते हैं।

शूद्र वह है जिसकी बुद्धि मलीन हो।

कोई व्यक्ति लाख सुमिरन ध्यान और भजन करे, जब तक उसके हृदय से ईर्षा वो द्वेष नहीं जायेगा शुभ संकल्प मस्तू का अनुयाई नहीं होगा और शारीरिक व मानसिक ब्रह्मचर्य का पालन करते हुये सत्तगुरू के आदेशाअनुसार अपने अन्तर में शब्द व प्रकाश पैदा नहीं कर लेगा उसका जीवन सुखमय व शान्तिमय नहीं व्यतीत हो सकता।

सफलता पर प्रसन्नता प्रगट न करना और असुफलता पर दुःखी न होना ही जीवनमुक्त अवस्था की पहिचान है।

जो मनुष्य इस रचना के आधार को समझ लेता है वह इतना अनुभवी होता है कि वह सब जानता है मगर सब जानते हुये भी सर्वाधार ही को सब कुछ समझता है।

सच्चा गुरु अपने शिष्य के दोष को दृष्टि में न रखते हुए उसको सभी चक्करों से मुक्त करा देता है।

जिस शक्ति को मनुष्य कर्ता समझता है वह उसका विश्वास श्रद्धा और कर्म है उसके अन्तर हरी उसका मन ही है।

पहिले पहिल सात ही ग्रहों का पता लगा उसके बाद नौ ग्रहों का और अब बारह ग्रहों का पता लगा है।

जितने महात्मा हो गये हैं उनमें से शायद ही कोई हरी यानी मन के उपर गया हो।

दस दरवाजों का मतलब पांच कर्म इन्द्रियां व पांच ज्ञान इन्द्रियां हैं जो मनुष्य अपने को शब्द व प्रकाश में लीन कर सकता है वह दस दरवाजों से बाहर चला जाता है। सुरत को शब्द में लीन करने की अवस्था को नाम कहते है। इस अवस्था में दूसरे का सहारा छूट जाता है—मनुष्य को शब्द रूपी गुरु का ही सहारा लेना चाहिये जिसको पारब्रह्म व शब्दब्रह्म भी कहते हैं जब तक मनुष्य शब्द गुरु का सहारा नहीं लेगा तब तक उसका बेड़ा पार नहीं होगा।

काल मनुष्य का अपना मन है जिसका आदर्श मन से ऊंचे मंडल यानी शब्द व प्रकाश है वह कर्म इन्द्रियां और ज्ञान इन्द्रियों से प्रभावित नहीं हो सकता। सुरत के ऊपर बुद्धि, ज्ञान व आत्मा का पर्दा पड़ा हुआ है—जो सुरत को शब्द व प्रकाश में प्रवेश नहीं होने देते।

अनामी व अवगत वह अवस्था है जहां गत नहीं है मगर उसको गति हीन नहीं कह सकते।

जिस मनुष्य को अपने आदी व अंत का अनुभव हो जाता है वह दूसरा जन्म नहीं लेता है।

जब तक आदमी देह के मंडल को छोड़ कर मन के मंडल में नहीं जाता, व मन के मंडल को छोड़ कर शब्द व प्रकाश के मंडल में नहीं जाता, व शब्द व प्रकाश के मंडल को छोड़ कर अशब्द व अप्रकाश जो आदी शब्द है में नहीं जाता तब तक उसको अपने स्वयं का ज्ञान प्राप्त नहीं होता।

मोह व प्रेम दो वस्तु हैं—मोह में अपना स्वार्थ होता है प्रेम में अपना स्वार्थ नहीं होता वह प्रीतम के स्वार्थ के लिए होता है।

सोहंग नारी का मतलब अपने सोयंपने से है।

जो आदमी किसी भी प्रकार से अपनी सुरत को अपने देह से पृथक करके देह के बोध भान को भूल जाता है उसका ध्यान पहिले स्थान पर थिर हो जाता है जो सिद्धि शक्ति का स्थान है, यहां इच्छा शक्ति प्रबल हो जाती है, नी विचार में शक्ति आ जाती है अगर पूर्ण गुरु का सतसंग उसको प्राप्त हो गया तो उसका काम बन जाता है, वो माया जाल से निकल जाता है नहीं तो ज़न ज़मीन व ज़र ही के फेर में पड़ा रहता है और आवागमन से छुटकारा नहीं पाता है।

मन के मंडल से ऊपर जाने के लिए द्वेष ईर्षा व मत्सर को त्याग करना, शुभ संकल्प का अनुयाई होना निष्काम कर्म करना और त्याग वैराग का होना जरूरी है।

जिस जगह नित प्रति सतसंग होता है व इसका विचार-धारा व वातावरण चलता है उस जगह पवित्रता रहती है व लक्ष्मी निवास करती है और बरकत रहती है।

जो आदमी अपने स्वयं का ज्ञान प्राप्त कर लेता है उसको किसी से कुछ पूछताछ की जरूरत नहीं रहती वह अपने स्वयं में आनन्द लिया करता है व निर्द्वन्दि रहता है।

निष्काम कर्म का प्रभाव मन पर नहीं पड़ता—मगर इससे प्रसन्नता अवश्य मिलती है। निष्काम सेवा का फल अवश्य मिलता है इससे मनुष्य की लालसा पुरी हो जाती है। निष्काम प्रेम करने वाला आदमी अपना जीवन हर्षपूर्वक व्यतीत करता है।

संसार का कार्य करते हुये उससे प्रभावित न होना ही स्वयं को जानना है।

नर देही गंवाना से मतलब अपने आपका आनन्द मय जीवन व्यतीत नहीं करना है।

जिस मनुष्य को यह विश्वास हो जाता है और इसका अनुभव हो जाता है कि मेरा स्वयं और वस्तू है और यह विराट पूर्ण (स्थूल) (प्रकृति) अव्याकृत (सूक्षम प्रकृति) व हिरण्य गर्भ (कारण) (प्रकृति) और शब्द व प्रकाश हमारा स्वयं नहीं है वह इनसे परे है उसको अपने स्वयं का ज्ञान हो जाता है।

जो मनुष्य साधन व अभ्यास करता है वह सुख व दुख से प्रभावित नहीं होता है।

हमारी आदि व अंत अवस्था मौन की है जहां शब्द अशब्द व प्रकाश व अप्रकाश है मगर इसकी समझ बिना शब्द व प्रकाश प्राप्त किये नहीं आती है।

मालिकेकुल्ल का भेद कोई पूरे तौर से ज्यों का त्यों नहीं पा सकता, जिसने जिस अंश में समझा उतना कहा वह जाग्रत, स्वप्न सुषुप्ती तुरीया और तुरियातीत से परे की अवस्था है जो हमारी आदि अवस्था है। जो मनुष्य हद बेहद के परे का वासी है वह उसको लख सकता है कह नहीं सकता।

जिसको गुरु की प्राप्ती हो जाती है उसकी सुरत, देह मन व आत्मा से परे हो जाती है वह प्रचार का काम अपने उपर दबाव डालकर ऊपर के मंडल से नीचे देह के मंडल में आकर करता है।

परिवार त्याग करने का अभिप्राय यह नहीं है कि कोई माता पिता कुटुम्बी आदि से अपना सम्बन्ध तोड़ दे इसका अभिप्राय यह है कि कोई पांच कर्म इन्द्रियों और पांच ज्ञान इन्द्रियों से प्रभावित न हो।

आत्मा शरीर छोड़ने के बाद कुछ दिनों सुक्षम रूप में भ्रमण करने बाद अपने तिव्र इच्छानुसार शरीर धारण करता है।

आंख में प्रत्येक प्रकार के तत्व विध्यमान है यह शरीर में विचित्र प्रकार की इन्द्री है।

सुख के दिन जाते देर नहीं लगती मगर दुख के दिन पहाड़ मालूम होते हैं।

दुनियां में अत्याचार करने वाले कम व अत्याचार सहने वाले अधिक पैदा होते हैं। शेर व चीते कम हैं और दूसरे जानवर अधिक हैं. यह रहस्य अनुभवी आदमी समझ सकता है।

जो वस्तु दिखाई देती है उसका जोड़ा है, यहां तक कि तारागण और लोक लोकांतर का भी जोड़ा है।

पहिले माया दिखाई देती है उसके बाद ब्रह्म प्रकट होता है जैसे पहिले धुंवा दिखाई पड़ता है उसके बाद प्रकाश होता है।

देह, मन व आत्मा के बोध भान की मिली-जुली अवस्था को जीवन कहते हैं।

सत्त, चित्त, आनन्द व पिंड, अंड, ब्रह्मंड दोनों का मतव्य एक ही है।

संतमत, सनातन धर्म व इसलाम एक ही शिक्षा देते है हां इनके शब्द भिन्न हैं।

	संतमत	सनातन धर्म	इस्लाम
(१)	तीसरा तिल	ओम भुवर	तलव
(२)	सहस दल कंवल	,, भुवह	इशतयाक
(३)	त्रिकुटी	,, स्वह	मारफत
(४)	सुन्न	,, महः	तौवहीद
(५)	महासुन्न	,, जनहः	इस्तगना
(६)	भंवर गुफा	,, तपहः	फैना
(७)	सत्त लोक	,, सत्यमः	वका
(८)	अलख	अलख	वेशक्ल
(९)	अगम	अगम	वेनिशां
(१०)	अनाम	अनाम	वेनाम

शान्ति की अवश्था जिसमें कोई प्रश्न व उत्तर नहीं उठता गुरु, व शिष्य का मिलाप है।

पांच कर्म इन्द्रियां पांच ज्ञान इन्द्रियां और चार मन चित्त वुद्धि व अहंकार इन चोदह के प्रभाव में न आना ही चौदह लोक से ऊपर जाना हैं।

यदि तुम्हारा हृदय शुद्ध व विमल है तो जो गुरु तुम्हारे अन्तर में प्रगट होता है वह तुमको श्रेष्ट बनावेगा यदि दशा प्रतिकूल है तो नष्ट भ्रष्ट हो जावेगी।

तीव्र इच्छा व सच्ची लगन वाले मनुष्य की मनोकामना अवश्य पूरी होती है।

यम विचारों का बाहर निकलना है, नियम विचारो का एकत्रित होना है। चेतन प्रकाश रूपी आत्मा है जड़ देह है।

पहिले पांच नाम का भेद लो फिर निज नाम जपो तब भेद मिटेगा। रारंग सारंग व बीन का सुनने वाला भी खेद नहीं मिटा सकता।

अपने स्वयं को अपने स्वयं में ठहराने का प्रयत्न करो।

अपने निज स्वार्थ के लिए हेरा फेरी मत करो दूसरों को लाभ पहुंचाने के लिये करते हो तो कोई बात नहीं है।

आदि व अंत का प्रकाश तुम्हारी जात है। जब तक मन निर्मल नहीं होगा तुम अपने आप में ठहर नहीं सकते। मन को निर्मल करने के लिए बलिदान व त्याग चाहिए। जब प्रेम घना हो जाता है तो मन साफ हो जाता है। जिस प्रकाश से तुम को शान्ति मिलती है वह प्रकाश नहीं है बल्कि यह ज्ञान है कि तुम समझ जाओ कि मैं कौन हूं ? अपने रूप का ज्ञान प्राप्त करना ही प्रकाश, ज्ञान या नाम है।

जब तक कोई रूप व नाम से परे नहीं जावेगा वह राधास्वामी नाम या अनाम गती प्राप्त नहीं कर सकता।

जो शक्ति अपने अन्तर में सब की साक्षी है वही आदि अनादि वो जुगादि है।

अपने अकेले में ही परमसुख है-इस दशा का नाम चौथा पद है। असली शब्द तो अटूट शब्द unbreakable sound है वही निज नाम या राधास्वामी नाम है।

काम, वायु, क्रोध, अगनि, लोभ, पानी, मोह, पृथ्वी, अहंकार, आकाश है।

मनुष्य

(१) सन्तान—सन्तान के विचार से पैदा की जावे काम के विचार से नहीं।

(२) मनुष्य वह है जो पूर्ण हो, जो केवल रुहानी हो वह भी पूर्ण नहीं है, जो केवल अभ्यासी हो वह भी पूर्ण नहीं है। कहने का मतलब यह है कि मनुष्य वह है जो अठारह कला संपूर्ण हो।

(३) मनुष्य में अदब, जब्त, संयम, नियम और कन्ट्रोल की सख्त ज़रूरत है।

(४) अपनी सन्तान के इस विचार को कि वह किस प्रकृति का है पहले देख भाल कर लो, और उसी के अनुकूल उसके साथ सलूक करो तथा जीवन में उसकी सहायता करो।

मनुष्य काम इच्छा का भोग देखने, सूंघने और छूने से भी करता है।

न स्वामी बनो न सेवक, न उपासक बनो, न उपास्थ-देव, न आबिद बनो न माबुद बल्कि मनुष्य बनो।

अमेरिका व पाकिस्तान में जो मिलिट्री पेक्ट (Pact) है उस सेनिश्चय है कि मनुष्य जाति की दुर्दशा होगी।

स्वस्थ रहने के लिए ब्रह्मचर्य और हाज़में का ख्याल रखो। शुभ संकल्प रखो और बांट कर खाओ।

जो मनुष्य अपने इष्ट से सच्चा प्रेम रखता है उस को कोई शक्ति सत्पद या शान्ति के प्राप्त करने से रोक नहीं सकती।

अगर ब्रह्मचारी आज्ञाकारी नहीं है तो समझ लो कि उस में ब्रह्मचर्य नहीं होगा वह अपने स्थान से गिरा हुआ है।

उन्नति के लिए आन्तरिक अनुभव, हार्दिक विशालता, दृढ़ संकल्प और दूरदर्शिता की जरूरत है, जिस में यह गुण हैं वह नीचे के मण्डल में कभी नहीं रह सकता।

उत्तम मनुष्य की पहिचान उसकी तत्परता व बुरे मनुष्य की पहिचान उसकी काहली है।

जो मनुष्य बराबर काम में लगा रहता है चाहे वह बुरा ही क्यों न हो मगर वह सच्चा धर्मात्मा है, क्योंकि वह प्राकृतिक नियमों के अनुसार संलग्न होकर चलता है।

मनुष्य अगर मुंह से मौन रहता है तो मन से भी मौन रहे।

जो मनुष्य अपने कुल विचारों भावों इत्यादि से अपने को अलग कर लेने की शक्ति प्राप्त कर लेता है वह इस अवस्था से उठने के बाद अपने शरीर मन में नई शक्ति का अनुभव करता है साथ ही जागृत अवस्था में विचार और भावों के त्याग द्वारा शक्ति प्राप्त कर लेने पर मनुष्य तमाम रचना में अपने आपको व्यापक समझता है।

हर एक आदमी को सुख और शान्ति मिलना अनिवार्य है, प्रतिबन्ध यह है कि हर आदमी के दिल में सुख व शान्ति के लिए तीव्र इच्छा हो।

जिस की बात में चुम्बक की तरह आकर्षण शक्ति हो, जो सबको अपनी तर्फ खींच सके, समझ लो कि उस में ओजस काफी मात्रा में मौजूद है।

जो वीर्य को सुरक्षित रखता है और अपने अन्तर में किसी प्रकार का अभ्यास भी करता है उसमें अधिक वीर्य पैदा होगा।

ओजस कुंवारी लड़कियों में अधिक होता है। स्त्री में ओजस की मात्रा अधिक होती है।

विचारों को पवित्र रखो। मन वचन और कर्म शुद्ध रखो। मानसिक ब्रह्मचर्य का ध्यान रहे तब तुम में और अधिक ओजस उत्पन्न होगा। इससे तुम्हारे विचार और भाव उच्च होंगे और ऊंचे स्थानों का आनन्द तुम्हारी आत्मा को मिलेगा।

जो मनुष्य अपने अन्तर में प्रकाश एकत्रित कर सकता है वह बाह्य प्रकाश से मिलकर एक हो जाता है उसी को ब्राह्मण या साधु कहते हैं। जो प्राणी ऐसे होते हैं वह दूसरों का भला कर जाते हैं और अन्त में प्रकाश में ब्रह्म रूप हो जाते हैं।

रूस के आदमी तमोगुण भाव को छोड़कर राजोगुण भाव में आ रहे हैं। भारत के आदमी रजोगुण को छोड़कर सतोगुण की ओर आ रहे हैं। अतः रूस का क्रान्तिकारी साहित्य भारत को हानिकारक है।

जिस मनुष्य में संसार की आस बाकी है उसमें कमी है बे-आस का मतलब (Detached) अलिप्त है।

मनुष्य में पूर्व जन्म के संस्कार दबे पड़े रहते हैं। जब पहले जन्म के संस्कारों का काम करते करते मनुष्य थक जाता है और वह संस्कार समाप्त हो जाते हैं तो दूसरे संस्कार उठ खड़े हो जाते हैं ने अनुकूल अवसर पाकर शक्तिशाली हो जाते हैं और मनुष्य को कुछ का कुछ बना देते हैं।

मनुष्य में जिस प्रकार के भाव प्रबल होते हैं वही उसकी सन्तान में आते हैं।

दूसरे की स्त्री को माता के समान देखो। इस नियम के पालन करने से तुम चारित्रिक पतन से बच जाओगे।

जिन्दगी और हस्ती दो वस्तु हैं। जिन्दगी में सूख व दुःख है। हस्ती सुख दुःख से परे है।

मनुष्य को जीवन व्यतीत करने का रहस्य नहीं मालूम है। इस रहस्य को जानने का केवल यही उपाय है कि मनुष्य मानसिक ब्रह्मचर्य रखे और मति प्रगट करे।

चूंकी मनुष्य पूर्ण होते हुए भी अपने को अन्य के आश्रित समझता है इस कारण वह काल माया के चपेट में है।

अगर मुसलमानों ने यह समझ लिया है कि हिन्दु अन्य हैं तो हिन्दु लाख कोशिश करें कि मुसलमानों का भला हो तो भी उनका भला नहीं हो सकता।

जो मनुष्य हृदय का भला है और उसके विचार शुद्ध हैं उसको जरूर सुख व शान्ति प्राप्त होगी।

यदि स्त्री व पुरुष में परस्पर प्रेम नहीं है तो उनकी सन्तान निकम्मी होगी। जहां पति व पत्नि में द्वेष भाव आ जाता है वहाँ सन्तान सभ्य नहीं हो सकती है। इसी प्रकार अगर किसी को अपने इष्ट में पूरा विश्वास नहीं है तो उसको पूर्ण शान्ति नहीं मिल सकती है।

जिन सौभाग्यवान माता-पिता के पुत्र एकान्त प्रिय हैं, उनको चाहिए कि वह अपने पुत्र को दूसरे से मिलने के लिए विवश न करें।

राम और कृष्ण ने चूंकि युद्ध करके राक्षस वृति वालो को नष्ट किया था उनके अनुयायी शान्ति स्थापित करने के वास्ते युद्ध से काम लेगें और हजरत मुहम्मद ने मूर्ति पूजा के विरूद्ध पुकार की थी और तलवार से काम लिया उनके अनुयायी भी ऐसा ही करेंगे।

यदि तुम सूक्ष्म बन गए हो तो प्रकृति को अवश्य तुम को सूक्षम स्थान देना पड़ेगा।

अपने कर्म से स्वयं लाभ उठाओ और दूसरों को लाभ पहुंचाओ यह आत्मिक उन्नति की प्रथम सीढ़ी है।

विशेष प्रकृति वाले मनुष्य अन्य काम में साधारण होते हैं। क्योंकि वह एक विशेष धुन में इतना लग जाते हैं कि दूसरे प्रकार के कार्य की ओर ध्यान नहीं देते इस कारण अन्य विचार उनको आकर्षित नहीं करते।

सच्चा सुख तो केवल अनुभवी पुरुषों को जो विवेक से त्यागी होते हैं मिलता है वह मौज पर रहते हैं।

राम बारह कला से पूर्ण थे। कृष्ण सोलह कला से पूर्ण थे और पूर्ण पुरुष अठारह कला से पूर्ण होता है। सोलह कलायें पाँच कर्म इन्द्रियां, पांच ज्ञान इन्द्रियां, छः देह, मन, चित्त, बुद्धि, अहंकार और आत्मा हैं। जो व्यक्ति इस सोलह प्रकार के भावों पर अधिकार रखता है वह सोलह कला पूर्ण कहलाता है कृष्ण भगवान ने जहां युद्ध से काम लेना आवश्यक समझा वहां युद्ध से काम लिया, जहां नीति से काम लेना उचित समझा वहां नीति से काम लिया।

कलियुग में सत प्रगट हुए उनमें दो कलायें बढ़ीं, पहली दया, दूसरी प्रेम किन्तु दया और प्रेम इस सिद्धान्त पर हैं कि मैं कौन हूं जिस मनुष्य में अठारह कला पूर्ण हैं वह युद्ध नहीं करेगा।

माता पिता का धर्म है कि वह अपनी सन्तान को प्रेम, दया और उदारता की शिक्षा दें।

कम सम्पत्ति और कम भूमि वाले लोगों में लोभ व लालच के भाव को उत्पन्न करना, धनी व भूमि वाले लोगों के विरूद्ध ईर्ष्या, द्वेष और घृणा उत्पन्न करना है, इसका नतीजा बुरा होगा।

सब से बड़ी योजना यह है कि सन्तान कम पैदा की जावे।

मनुष्य की उत्पत्ति सोहं पुरुष के संकल्प से हुई। सोहं पुरुष जिस से मनुष्य की उत्पत्ति हुई नाशवान है, अतः मनुष्य उसके मण्डल में अनादि नहीं हो सकता, उसका शरीर नाशवान है।

सब पुरुष अनुभवी नहीं होते, केवल वही अनुभवी होते हैं जो लड़कपन में व जवानी में अनुचित इच्छाओं में ग्रसित न रहे हों वरना जो जिस विचार का है उसको अपने ही विचारों व संस्कारों के कारण उसी ओर झुकाव होगा।

जो आदमी किसी भी पार्टी का नहीं है वह सुखी है। जनता को सन्तमत अर्थात मनुष्यबनो की थ्योरी अपनानी पड़ेगी, बिना इसके शासन को भी गुजारा नहीं है।

जिस मनुष्य का मन निर्मल, निश्चल और शुद्ध हो गया है उसके मस्तिष्क में अधिकतर भविष्य का दृष्य आ जाता है। उसके मुख से दूसरों के वृतान्त के अनुसार अथवा ब्रह्माण्ड के प्रभाव के अनुसार ही वचन निकलते हैं।

मनुष्य अगर अपने भाव विचार और आशा को श्रेष्ट बनावे तो उसकी रक्षा जरूर होगी मगर इसके अधिकारी बहुत कम हैं।

मनुष्य अपने मन पर काबू न रखने की वजह से दौड़ धूप करता हैं। अपनी सुरत को अपने आप में ठहराना ही वास्तविक रहस्य हैं।

जब तक शरीर मौजूद है मनुष्य किसी न किसी वस्तु से सम्बन्ध रखने के लिए मजबूर है। जब तक हमारी आत्मा (शब्द व प्रकाश) मौजूद है हम शब्द व प्रकाश के समुद्र में सैर करने के लिए विवश हैं। जब तक सुरत मौजूद है हम किसी न किसी ओर जाने के लिए मजबूर हैं।

जो तुम स्वयं हो, वह मन व आत्मा से परे है, उसका वर्णन करना कठिन है।

जो कुछ तुम कर रहे हो वह तुम नहीं कर रहे हो, वह तुम से क्रियावान शक्ति करा रही है। इसको समझ कर तुम अपने कर्तापने के अहम्भाव को भूल जाओ और अपने रूप का ज्ञान प्राप्त करो।

जो व्यक्ति अन्तरी साधन भी करता है और विषय विकार में फंसा रहता है उसका दिमाग समता में नहीं रह सकता।

अगर तुम्हारे साथ कोई दुर्व्यवहार करे तो तुम उदासीन बन जाओ और निर्बन्ध हो जाओ, उसको मालिक को अर्पण कर दो, मालिक उसका स्वयं प्रबन्ध करेगा।

जिस में जिस प्रकार के उच्च विचार होंगे। जिसका मन जितना उदार होगा वह सूक्षम बन कर अधिक शक्तिशाली होगा, अधिक फैलेगा और अधिक काल तक ठहरेगा।

संसारिक पदार्थों की चाह छोड़कर भगवत इच्छा पर रहता हुआ ही पुरुष ऊपर के लोकों की सैर कर सकता है।

अपनी ज़ात यानि मालिक या सतगुरु के रूप में रहते हुए शरीर, मन और आत्मा से जब तक सम्बन्ध है सब का कल्याण करते रहो।

जब तक तुम्हारा चित्त कोमल नहीं है और दया भाव नहीं है. तुम परमार्थ का सपना भी नहीं देख सकते। नेहरू को आत्मिक व मानसिक साइकालोजी का ज्ञान नहीं था अगर होता तो जो कार्य उन्होंने किया वह नहीं कर सकते थे, इसी कारण दूसरे विचार वाले मनुष्य उनके विरुद्ध रहते थे।

किसी को अपनी विद्या, बुद्धि और ज्ञान का घमण्ड नहीं होना चाहिए। प्रकृति के रहस्य को जानना कठिन है।

जो आदमी जैसा होता है उसके अन्दर में वैसी ही धार निकलती रहती है उसको ग्रहण करने का जिस में जितना अधिकार होता है। उसको उतना ही फ़ायदा पहुंचता है।

मनुष्य के अन्दर से जब तक किसी प्रकार का भाव निकलता रहेगा तब तक वह जीव बना रहेगा।

सभ्य रहो और सहनशील बनो।

सत्यपुरुष का ही नहीं बल्कि हर प्रकार के मनुष्य का रेडियेशन प्रभावित होता है।

"मनुष्य बनो" से मेरा यह मतलब नहीं है कि तुम चूड़ियां पहन कर युद्ध के समय घर बैठे रहो। युद्ध के समय अगर लड़ना जरूरी है तो लड़कर मर जाना शानेफकीरी है।

जन साधारण के ध्यान को किसी विशेष ओर दिलाने के लिए भावुकता का रंग दिए बिना काम नहीं चलता है। अगर

तुम्हारे सुख में बाधा डालने के लिए कोई अनुचित व्यवहार करता है तो उसको रोकने के लिए लड़ाई करना मानवता की शान है।

सत्यता व मानवता से ही मनुष्य बड़ा कहा जा सकता है। मानव जाति की सेवा असली पूजा है। भजन व प्रार्थना, पूजा पाठ नहीं है।

जब तक मानव का मन थिर नहीं हो जाता शान्ति का पाना ग़ैर मुमकिन है।

(१) शारीरिक प्रिय जीवों के विश्राम का स्थान घोर नींद है।

(२) मानसिक प्रिय जीवों के विश्राम का स्थान तुरिया महासुन्न निर्विकल्प समाधि है।

(३) आत्मिक प्रिय जीवों के विश्राम का स्थान अलख, अगम व अनामी है।

धन्य है वह सज्जन जो शारीरिक, मानसिक और आत्मिक रूप से संसार की भलाई में लगे रहते हैं।

मनुष्य को शान्ति उस समय मिलती है जब उसका विचार पूरा हो जाता है या ठोकर खाकर छूट जाता है।

मानव सुरत का किसी विचार में भूलना ही व्यभिचार है।

सहज-समाधि या सहज-वृत्ति वाला वह मनुष्य है जिस को शरीर, मन व आत्मा के काम का प्रभाव नहीं होता। जब जीवन की कुल दशाओं का अनुभव हो जाता है तो यह दशा प्रगट होती है इसके पहले हरगिज नहीं हो सकती है। ऐसे मनुष्य सम्भव है कि शिक्षा या सुधार का काम करें, किन्तु ऐसे निःस्वार्थ सच्चे और योग्य महापुरुष ईश्वर के दूत होते हैं। यदि भारत में ऐसे महापुरुष अधिक होते तो उनकी शान्ति की लहरें अधिक सुख व शान्ति लातीं।

क्रियात्मिक जीवन केवल उनके भाग में आता है जो संसार

के दुःखों और सुखों से बचना चाहते हैं। सतसंग से लाभ उनको होता है जो अपने कल्याण के लिए आते हैं।

जो मन के ऊपर रहते हैं और मन के विचारों में नहीं फंसते उनका सांसारिक व मानसिक जीवन आनन्दमय नहीं रहता है उनको अपने ही अन्तर में सुख शान्ति और आनन्द रहता है।

जीवन की खींचातानी के बाद मनुष्य को शान्तिदायक अनुभव यही प्राप्त होता है कि मनुष्य मौज पर रहे और जीवन निर्भय अचिन्त और प्रसन्नता पूर्वक व्यतीत करें।

जिस आदमी में मान का भान नहीं है उसमें अभिमान नहीं रहेगा और दीनता आ जावेगी, इसलिए हनुमान दीनता का अंग है। जो कोई सच्ची बात मानने के लिए दीनता धारण करेगा वह दीनता उसको सफल बना देगी। हनुमान मानरहित अवस्था को कहते हैं। इसके प्राप्त होने पर मनुष्य को ठीक रास्ता मिल जाता है। दीनता एक बहुत बड़ी शक्ति है।

मानव को ऐसे संस्कारों की ज़रूरत है जिससे उसका घमण्ड दूर हो जावे।

जब तक मनुष्य के मन, चित्त, बुद्धि और अहंकार सम अवस्था में नहीं आते वह अपने को प्रकाश स्वरूप में एकत्रित नहीं रख सकता और अगर किसी प्रकार टिक भी गया तो वहां से गिर जाएगा वह शान्त नहीं रह सकता।

समअवस्था में रहना ही मानवता है। जब मानव आत्मा और आत्मा से परे की अवस्था का साधक हो जाता है तो उसको यह संसार नहीं भासता।

जब तक मनुष्य से कौवे की बुद्धि नहीं जाती और हंस की बुद्धि नहीं आती तब तक उसका कल्याण नहीं हो सकता। जब तक

जीवन है मनुष्य अन्तिम अवस्था में जाने की कोशिश न करे इसके लिए किसी विदेह पुरुष की संगत अनिवार्य है।

हर एक आदमी मनके चक्कर से नहीं निकल सकता। जब तक सुरत मन के भूरे रंग की नाड़ी (दिमागी हिस्से) को छोड़ कर सफेद रंग के दमागी हिस्से में नहीं जावेगी, कोई आदमी तब तक मन के चक्कर से बाहर नहीं जा सकता।

विरही मनुष्य का हाज़मा कमज़ोर होता है। लोभी और लालची मनुष्य दिल की बीमारी में ग्रसित रहते हैं। कामी पुरुष जिनको भोग का मौका कम मिलता है फेफड़े की विमारी का रोगी होता है जो अधिक भोग विलास करते हैं वह टी० बी के रोगी हो जाते हैं।

क्रोधी मनुष्य को पागलपन की बिमारी हो जाती है। अगर क्रोध के आवेश को निकलने का मौक़ा नहीं मिला तो बदन दुबला हो जाता है।

अहंकारी मनुष्य में हौसला ज़रूर बढ़ जाता है मगर जब देर के बाद उसका अहंकार टूटता है तो उसके बदन पर उसका प्रभाव पड़ता है।

जो मनुष्य भयभीत रहता हैं वह Nervous होता है। उसमें खुददारी नहीं रहती वह चापलूस, दीन, अधीन और हृदय का कमज़ोर होता है।

मानसिक बलवान प्रकृति वाले मनुष्य पर छूत छात की बीमारी का प्रभाव कम पड़ता है।

मनुष्य की उदासी का कारण विषयविकार का जीवन और शारीरिक कमज़ोरी है। इसके दूर करने का उपाय मानसिक ब्रह्मचर्य और हाज़मे का ध्यान रखना है।

याद रखो ! हर एक आदमी स्वयं पूर्ण है लेकिन इस पूर्णता को दे मन और आत्महा की चादर ने ढक रखा है। यह पर्दा किसी

पूर्ण पुरुष के सतसंग और संस्कार से दूर होता है केवल अभ्यास से दूर नहीं हो सकता। अभ्यास तो केवल अनुभव के लिए कराया जाता है।

मनुष्य वह हैं जो सोच विचार का गुण रखता है। उसमें अहंकार नहीं होना चाहिए, उसको उदासीन वृत्ति का होना चाहिए। मनुष्य भूत, भविष्य, वर्तमान काल की सम्मिलित अवस्था से बना है। वह अपने अन्दर बीते हुए समय के संस्कार का बीज रखता है जो वर्तमान काल में अंखुवाते और बढ़ते हैं अगर गुरु हाथ आ गया तो कमी दूर हो जाती है और भविष्य की उन्नति के सारे संस्कार उसमें उत्पन्न हो जाते हैं। पूर्ण कला के मनुष्य का नाम ईश्वर है। जो अपनी भूल को मान कर हठ न करे वह सच्चा मनुष्य है। स्त्री में अगर पुरुष का भाव हो तो सुन्दर जंचती है। मनुष्य को हृदय का विशाल और चित्त का उदार होना चाहिए। जो मनुष्य क्रोध से कोई बात नहीं करता, वह सहनशील होता है। जो मनुष्य नेक है, वह बलवान, वीर्यवान पुरुषार्थी, प्रसन्नचित्त, सुशील और सहनशीन होगा। आदि वो अन्त के बीच की अवस्था में समता के साथ रहना मनुष्यता है।

जब तक मानवता व राजनीति एक नहीं होंगे मानव को शान्ति नहीं मिलेगी।

जब तक किसी मनुष्य के दिल में यह खैयाल है कि कोई उसका सम्बन्धी है तब तक वह अगम देश को नहीं पहुंच सकता। क्योंकि जिस समय वह अभ्यास में बैठेगा उसको सम्बन्धियों के दृष्य दिखाई देंगे।

मनुष्य के शरीर व मन के अन्दर जो कुछ भी भूरे रंग के दिमाग के पदार्थ से बनता है वह श्वेत रंप के दिमाग की छाया है। मनुष्य के बस में कोई वस्तु नहीं है। सब कुछ उस शक्ति के बस में है, जो श्वेत रंग के दिमाग का संचालन करती है। श्वेत रंग के दिमाग की शक्ति ऊपर से आती है और भूरे रंग के दिमाग

व नाड़ी को गति देकर संचालित करती है। इस कारण अगर मनुष्य अपने शरीर को ठीक रखना चाहता है तो शरीर को चलाने वाला श्वेत रंग का जो दिमाग है उसकी गति को ठीक रखे।

अगर मनुष्य अपने मस्तष्कि को ठीक रखना चाहता है तो अपने संकल्प को शुभ रखे।

शरीर को रक्त से ही शक्ति पैदा होती है और शरीर तथा मस्तिष्क को ठीक रखने के लिए शब्द है जो कि श्वेत रंग के दिमाग में व्यापक है। यदि मनुष्य श्वेत रंग के दिमाग की नाड़ी के शब्द को सुनता रहे तो उसका दिमाग और शरीर दोनों सम अवस्था में रहेंगे। अगर मनुष्य श्वेत रंग के दिमाग की नाड़ी में स्थित हो जावे अथवा काबू पा जावे तो जिन शक्तियों के आधार पर यह शब्द निर्भर है उन सब शक्तियों पर वह विजय प्राप्त कर लेगा। इसको शान्ति अवस्था कहते हैं। ऐसे मनुष्य की अपनी मनोकामनायें शारीरिक तथा आत्मिक स्वतः पूर्ण होती हैं। पूर्ण पुरुष ऐसी अवस्था में रहता है। प्रथम तो उसको कोई इच्छा नहीं होती और काश अगर उसको कोई इच्छा, देह, मन तथा आत्मा के हेतु हुई तो प्रकृति स्वयं उसका प्रबन्ध करती रहती है। प्रकृति से मतलब उस शक्ति से है जो इस ब्रह्माण्ड को रचती है इसका दूसरा नाम शब्द व प्रकाश तथा गति है पूर्ण पुरुष की सुरत सत, चित्त आन्नद के मण्डल में चक्कर नहीं काटती रहती।

जब मनुष्य को यह ज्ञान हो जाता है कि वह भूरे और श्वेत प्रकाश के दिमाग के प्रभाव से सत चित्त आनन्द के मण्डल में भ्रमण करता रहता है और इस कारण सुख, दुःख प्रेम विछोह अज्ञान यानि द्वन्द अवस्था का भान करता है तब वह सत चित्त आनन्द के प्रभाव से बच जाता है। वह नाड़ी जिस में भूरा रंग रहता है आंखों के बीच जिस को भ्रूमध्य कहते हैं स्थित है। यहीं

से किरणें निकलती हैं जो कि देह की इन्द्रियों को चलायमान रखती हैं।

मालिक की किरण सुरत रूप में प्रत्येक व्यक्ति में व्यापक है अतः मालिक की सबसे बड़ी सेवा यह है कि एक मनुष्य दूसरे मनुष्य को सुख पहुंचावे।

मनुष्य वही है जो दूसरों को अपनी शक्ति के अनुसार सुख पहुंचावे या पहुंचाने की अभिलाषा रखता हो।

पुरुष आम तौर पर सोच समझ वाले होते हैं। वह मुश्किल से एक ओर होते हैं उनके शरीर में दो अंग होते हैं दायें और बांये। स्त्री में केवल एक दाहिना ही अंग होता है।

जब मनुष्य किसी जिम्मेदारी के काम को अपने हाथ में लेता है तो उसको अपनी सारी शक्ति व योजना उस काम में लगा देना चाहिए वरना वह पापी है। इस कारण वह केवल अपनी ही हानि नहीं करता है बल्कि वह दूसरों की भी हानि करता है जो काम करो पूरा-पूरा करो वरना बर्बाद हो जावोगे।

जिस समय आदमी दुखी होता है सारा जगत उसके प्रभाव से प्रभावित हो जाता है।

मनुष्य की विशेषता यह है कि उसकी मानसिकशक्ति अधिक हो और हृदय विशाल हो।

मनुष्य को अल्पदर्शी और संकीर्ण नहीं होना चाहिए। उसको दूरदर्शी और तत्ववेत्ता होना चाहिए।

जिस आदमी के विचार अच्छे हैं उसको मरते समय सुख होता है और अगर उसके विचार बुरे हैं तो आंखों तक पहुंचने तक उसको अवश्य दुःख होता है।

मनुष्य जिस दशा में रहे उसमें सन्तुष्ट रहे। जो लोग अच्छी और बुरी दशा दोनों के बीच चलते हैं जीवन का अधिकार कुछ उन्हीं के हिस्से में आता है।

वही मनुष्य कामयाब होता है जो अपनी सारी ताकत खर्च कर देता है। उसमें हद दर्जे की सच्चाई व साहस होती है। जब मनुष्य निष्काम हो जाता है वह अद्वैत पद का वाच व लक्ष दोनों बन जाता है।

मनुष्य जितना ही निष्काम होगा उसका जीवन उतना ही कामयाब होगा।

तुमको चाहिए कि सहानुभूति के हृदय से सबको अपने प्रभाव में लावो दूसरों के प्रभाव में मत पड़ो।

मनुष्य को वही काम करना चाहिए जो ब्रह्म से सम्बन्ध रखता है उसको उदार चित्त, उद्योगी, पराक्रमी और शूर वीर बनना चाहिए।

मनुष्य का जीवन नये और पुराने विचारों का ईत्र होना चाहिए।

जो मनुष्य संसार में विजय प्राप्त करने के लिए आते हैं वह हंसते खेलते हुए लोग होते हैं।

मनुष्य दास की हैसियत में काम न करे, बल्कि मालिक की हैसियत में काम करे, कोई विरोधी-विरोध को अपना आदर्श नहीं बना सकता है।।

जो आदमी उत्साह से अपने सांसारिक जीवन को सुखमय नहीं बना सकता वह परमार्थ प्राप्त करने के योग्य नहीं हो सकता।

मनुष्य को बाह्य प्रभाव जो उस पर पड़ते हैं उनको ग्रहण नहीं करना चाहिए जितना ही मेल और प्रेम अधिक होगा उतना ही आपत्ति और अशान्ति का कारण होगा।

जब तक मनुष्य को संसार से वैराग होकर संसारी इच्छाओं से त्याग न हो जावे उसको अपने निज घर का पता नहीं चलेगा।

मनुष्य को कभी काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार में नहीं आना चाहिए ऐसा करने से इसके अन्तर में जो वस्तू रम रही है या यात्रा कर रही है बजाय यात्रा करके आगे बढ़ने के इनमें अटक कर लंपट होकर रुक जाती है। जो शक्ति रमती या यात्रा करती है स्वयं है जिसको संत सुरत कहते हैं।

मनुष्य बुद्धि के आधार पर जो कुछ कहता है वह बिलकुल व्यर्थ है। जब तक वह साधन करके पहिले देह, दूसरे मन (विचार) तीसरे आत्मा (शब्द व प्रकाश) के बोध भान को नहीं भूल जावे वह स्वयं का ज्ञान नहीं प्राप्त कर सकता। इनके अतिरिक्त जिस को पूरा गुरु नहीं मिला है वह इन तीनों के बोध भान को नहीं भुला सकता है, अगर किसी तरह भूल भी जावे तो भी उसको स्वयं का ज्ञान नहीं प्राप्त होगा। इसलिये अभ्यास के साथ-साथ पूरे गुरु का सतसंग भी अनिवार्य है।

अमीर व गरीब दोनों की खुशी बराबर है। जितनी खुशी अमीर को अपने महल में है, उतनी ही खुशी गरीब को अपने झोंपड़े में है। अमीर व गरीब अपने-अपने हाल में मस्त रहें एक को दूसरे से द्वेष रखना दुःख पैदा करेगा।

अमेरिका में एक लड़की को बिना संमभोग किये हुये बच्चा पैदा हुआ। उसने यह बात कही तो डाक्टरों ने इसकी जांच की व उसकी बात को ठीक बताया, जिसका समर्थन दूसरी औरतों ने भी किया। इससे स्पष्ट है कि वीर्य के किटाणु को प्रकाश स्वभावतः किसी के अन्दर पैदा करता है। चूंकि रचना प्रकाश से होती है किसी की तीव्र वासना सूक्ष्म रूप धारण करके अन्दर के प्रकाश से मिल जाती है और उसके अनुसार स्थूल रूप धारण कर लेती है, इसी नियम के अनुसार हनुमान जी इत्यादि का जन्म कुंवारी लड़कियों से बिना वर के हुआ। संतों को इस विद्या का ज्ञान है। इसी विद्या द्वारा अधीकारी स्त्रियों को वह बच्चा पैदा होने का बर देते हैं।

जो कोई शुभ ग्रहों के प्रभाव में जन्म लेता है उसका स्वभाव अच्छा होता है। और जो अशुभ ग्रहों के प्रभाव में जन्म लेता है उसका स्वभाव बुरा होता है।

मन के मलीन विचारों की रोक थाम के लिये सतोगुणी भोजन, शुद्धजल, अच्छीसंगत व पूर्णपुरुष का सतसंग अनिवार्य है।

विधवा स्त्री का बनाया हुआ भोजन खाना वर्जित है, क्योंकि उसका हृदय सन्ताप से भरा रहता है। मगर विधवा मां के हाथ का बनाया हुआ खाना वर्जित नहीं है क्योंकि मां की सहानुभूति अपनी संतान के साथ रहती है।

जो मनुष्य कड़े स्वभाव का हो और अपने नियम पर आरुढ़ रहे, उसके लिए समझ लेना चाहिए कि प्रकृति उस पर दयावान है।

जब कोई स्त्री देखती है कि कोई स्त्री किसी गुण में पुरुष से बढ़ी चढ़ी है तब ही उस स्त्री के गुण पर विशेष रूप से आकृषित होती है, वरना कोई स्त्री किसी स्त्री पर आक्रषित नहीं होती।

हिन्दूओं के प्रत्येक वर्ग में स्त्रियों को पुरुषों के सनमान से वंचित रखा गया है और वे उनसे ऊंची मानी जाती हैं।

पुरुष में गर्मी वो निकलने वाली शक्ति है स्त्री में तरी व ग्रहण करने वाली शक्ति है।

✝ नीति ✝

व्यवहार (दैहिक) प्रतिहार (मानसिक) और परमार्थ (आत्मिक) में सफलता केवल उनके भाग्य में आती है जिनका भाग्य अच्छा होता है या जिनका चित्त किसी वस्तु को प्राप्त कर लेने का दृढ़ संकल्प कर लेता है।

अधिकार व सम्मान मनुष्य को कायर बना देता है। मनुष्य जो काम परिश्रम साहस और धैर्य से करता है उसके फल का नाम भाग्य है।

जो आदि से अन्त तक अपना कर्म शान्त चित से नहीं करते वह दुर्भागी है।

कुकर्मियों के साथ नेकी करना अपने साथ बदी करना है। स्त्री व प्रकृति केवल उस आदमी की जायदाद है जो अपनी जान पर खेलता है। प्रकृति पर वह काबू पाता है जो पुरुष बन कर उसको बश में कर लेता है।

दुनिया ऐसी है कि जब उसका दाव चल जाता हैं तो मनुष्य को अपमानित कर देती है और जब दाव नहीं चलता तो उसका गुण गाती है।

दुनिया कहते हैं ईश्वर को भूल कर हर बात में टांग अड़ा देना और अपने को हर काम का कर्ता मानकर ईश्वर को कर्ता मानने के ख्याल को भूला देना।

जो मनुष्य हर वस्तु की भलाई-बुराई को जानने और उससे काम निकालने की योग्यता रखता है वह दूसरों पर शासन कर सकता है। ऐसे मनुष्य संसार में बहुत कम देखने को मिलते हैं।

औरंगजेब दूरदर्शी बादशाह था मगर वह संयम के गुण से रहित था।

जिन गुणों की जरूरत शासन करने में है, उन्हीं गुणों की जरूरत छोटी हालत से बड़ी हालत में जाने में है।

देश जाति व भाईयों से गद्दारी या नमक हरामी करना घोर पाप है।

स्त्री की सुरत पुरुष के लिए जादू है और पुरुष की शकल स्त्री के लिए क्या है यह स्त्री स्वयं समझ ले।

अपनी असलियत छिपाना नीचता है।

गुप्त विद्या सीखने का अधिकारी केवल शिष्य और पुत्र है। जो शिष्य गुरु का मान नहीं करता उसे विद्या में पूर्णता प्राप्त नहीं होती।

कम बोलो, जो लोग अधिक बोलते हैं उनके मानसिक भाव में निर्बलता आ जाती है।

स्त्री हजार किसी पर आसक्त हो मगर उसको प्रगट करने में लज्जा रखती है। जब तक पुरुष उसके वशीभूत होने को प्रगट न करे तब तक वह मुख नहीं खोल सकती।

हमारी इन्द्रियां मन के वशीभूत होकर क्या क्या नहीं करतीं, समय ऐसा भी आता है जब वे जबाब दे जाती हैं।

प्रकृति के न्याय के पल्ले बराबर रहते हैं, एक की अधिकता दूसरे की कमो पूर्ति करती हैं।

समता के मार्ग का परिणाम ठीक होता है। साधक को कोई बात किसी से पूर्ण रूप से नहीं करनी चाहिए, सदा टाल देना चाहिए।

आदमी ईश्वर तक की आज्ञा न माने मगर शिष्य को गुरु की आज्ञा को कभी नहीं टालना चाहिए।

जो वस्तु चींटी देख सकती है वह मनुष्य नहीं देख सकता। स्त्रियों के मेलमिलाप से दूर रहो, मगर इनसे घृणा मत करो। स्त्री, घोड़ा और तलवार का विश्वास नहीं किया जा सकता।

लड़कों के रोने, मृत्यु का आगमन, बिजली की कड़क, स्त्री की बफादारी और राजा के स्वाभाव के परिवर्तन का कोई नियम नहीं है।

स्त्री के पाप का भागी उसका पति है, और शिष्य के पाप का भागी उसका गुरु है। स्त्री से काम उतपन्न होता है इसी से उसको कामीनी कहते है।

गर्भवती स्त्री का साया पड़ते ही सांप अन्धा हो जाता है।

जिस दवा की याद समय पर आ जाती है वह अमृत का काम कर जाती है।

खोई हुई वस्तु बड़ी कठिनाई से मिलती है।

राजा योगी, कवि जौहरी और गाने वाले ये सब के सब पैदायशी होते हैं।

बादशाह की सुरत, सुरतों की बादशाह होती है।

स्त्रियों की सुन्दरता :—सभ्यता, सहन-शीलता, विद्या और प्रिय भाषण है पुरुषों की सुन्दरता :—निर्भयता, साहस, उत्साह, पराक्रम और वीरता है।

विद्या, स्त्री, धन और बल प्रारब्ध से मिलता है, यहां किसी का बस नहीं चलता, परन्तु तप साहस और दृढ़ संकल्प से सफलता की आशा हो सकती है।

अभय व शान्त पुरुष साहसी और उत्साही होते हैं।

किसी के पीछे पड़ना भी धैर्य और शान्ति का चिन्ह नहीं है।

जो जिस वस्तु को चाहता है वह वस्तु उससे भागती है, इस चाह को रोको और दबाओ फिर वह वस्तु मिली हुई है। यह

प्रकृति का रहस्य है कि जिसको तुम हृदय से चाहो वह अपने पास ही मिलता है। शान्ति और शक्ति शीघ्र नहीं मिलते, शान्ति को कायम रखने के लिए शक्ति की जरूरत है।

जब हृदय में किसी विशेष वस्तु की सच्ची मांग होती है तो वह वस्तु स्वयं उसकी ओर आकर्षित होती है। विचार अती तीव्र होने पर स्थूल रूप धारण कर लेता है।

धीरज से काम करो, सन्तोष रखो और परमात्मा का आसरा रखो।

गुरु का काम वही कर सकता है जो वासना रहित होकर अडोल और अमय हो गया हो।

जब तक मनुष्य अपने रहस्य को अपने मन में गुप्त नहीं रखेगा वह सांसारिक जीवन में सफल नहीं हो सकता है।

पर्दादारी करना जरूरी है।

जो व्यक्ति रहस्य को गुप्त नहीं रख सकता वह चंचल स्वभाव का होता है। चंचल मन वाला चाहे कितना ही चतुर हो मगर वह अन्तरमुखी नहीं बन सकता है।

हमारा प्रत्येक कार्य उस समय सफल हो सकता है जब हमारा निवास ब्रह्माण्ड में हो।

काल में किसी पक्ष का विचार नहीं रहता यहां न्याय सदा सामने रहता है।

अज्ञान समाप्त हो जाने की दशा ज्ञान कहलाती है, बन्धन समाप्त हो की दशा को मुक्ति कहते हैं।

बाहरी सामान और मेहनत से असली आनन्द जो स्थाई है कभी नहीं मिलेगा। यह उस समय मिलता है जब माया का रूप समझ में आता है, अपने स्वयं की ओर दृष्टि चली जाती हैं जब अपने रूप का ज्ञान हो जाता है तब सच्चा यानी स्थायी आनन्द

प्राप्त होता है।

बन्धन से बचो और दूसरों को भी बचाओ. जो इस प्रकार के होते हैं उनका भण्डार कभी खाली नहीं रहता, क्योंकि ऐसे भण्डार में लक्ष्मी निवास करती है।

संकीर्णता से बचे रहो इस के प्रभाव से तुम में स्वतंत्रता विशालता और दिव्य दृष्टि प्राप्त होगी।

सड़ी गली वस्तु किसी को मत दो, वरना तुम्हारा दिल भी सड़ता गलता रहेगा और दुर्गन्ध पैदा होगी।

देने और दूसरों की शुभ भावनायें लेने से तुम फैलोगे जो फैलता है वह फूलता फलता है. यही जीवन का लक्ष है।

कौन किसको देता है और कौन किसी को दे सकता है, इस सृष्टि में क्या कोई किसी का मुहताज है? ईश्वर सम्पूर्ण है और उसकी रचना सम्पूर्ण है।

क्रोध की अवस्था भुचाल इत्यादि से हजारों और करोड़ों गुणा भयानक है। तुम इस बात को नहीं समझते परन्तु यह सत्य है कि इससे जर्म उत्पन्न होते हैं और कपकपी आती है, शरीर में विशेष दुर्गन्ध निकलने लगती है। क्रोधी केवल दुर्बल ही नहीं होता बल्कि बीमार भी हो जाता है।

विषय भोग की दशा क्रोध से अधिक दुखदायी है। क्रोध और काम का व्यवहार समता में रहेगा तो अच्छा है विपरीत दशा में भयानक है।

क्रोध का मारना, काम का दहन करना, मोह का परित्याग करना सब पाप है।

जहां गुरु और वेद की व्यवस्था अपने अनुकूल न आवे उसको त्याग कर देना उचित है।

तुम साहसी और वीर बनो अवसर से लाभ उठाने की योग्यता प्राप्त करो और जहां अवसर न हो अपने लिए अवसर

मिलजाने की कोशिश करो।

सरस्वती से विद्या, लक्ष्मी से धन, पारवती से शक्ति और शिव से रिद्धि-सिद्धि लेते हुए यह भी सोचते रहो कि यह क्या बात है यह कहां से आते हैं? यह विचार तुमको आत्म भण्डार में पहुंचा देगा। इससे तुम अपरिमित हो जावोगे।

रूकावटों और वाधाओं का सामना करने से वही डरते हैं यानि घबराते हैं जो बलवान नहीं हैं।

मनुष्य को वही काम करना चाहिए जो ब्रह्म से सम्बन्ध रखता है।

यदि मेहनत के साथ आराम का ध्यान न रहे तो शरीर मन और बुद्धि के नष्ट-भ्रष्ट हो जाने का भय है।

जो विद्या मनुष्य को बलवान और पराक्रमी न बनावे वह अविद्या है।

आशा, गरज, स्वार्थ, और वासना ही सच्ची बफादार है यह कभी साथ नहीं छोड़ती है।

अगर तुम्हारी जरूरीयात आसानी से पूरी हो रही हैं तो ज़्यादा का लालच मत करो। काम में समता रखो।

जिस हाल में तुम हो उस में खुश रहने की आदत डालो किसी महात्मा के सतसंग में मन वश करने का भेद सीखो।

समता में खुशी है। बहुत अधिक और बहुत कम में खुशी को खटका है। जो लोग अच्छी और बुरी दोनों हालत के बीच में चलते हैं उन्हीं को जीवन में खुशी मिलती है। समता के मार्ग पर चलने वाले को दुःख और सुख दबा नहीं सकता।

मरने का ख्याल भूलकर भी मत करो दुनियां की खुशी समता में रह कर भोगो, त्यागी न बनो।

सन्तोष से गहरा सम्बन्ध रखो यह एक विशेष गुण है, मगर समता को साथ रखो अगर सन्तोष की हद कर दोगे तो पापी बन जावोगे।

सन्तोष और मुस्तयदी एक ही बात नहीं है।

मुझे नेती धोती करने वालों पर हंसी आती है यह हालत संकीर्णता की है।

भलाई इसी बात में है कि तुम वदलते रहो लकीर के फकीर मत बनो।

हानि या बिगाड़ वहां होता है जहां अहंकार या स्वार्थ होता है।

गाड़ी के पहियों को देखो उसकी चाल आगे की ओर है, किन्तु वह पीछे की ओर लौट आता है तब रास्ता तय होता है।

मन की अवलता में मृत्यु और मन की सबलता में जीवन है।

जिस का मन बस में नहीं है उसके बनाए गए स्कूल से चंचल विद्यार्थी निकलेंगे जो देश को हानि पहुंचावेगें।

प्रेम वो प्रतीत सच्चाई है, घृणा व द्वेष झूठ है।

असली शक्ति तो न तलवार में है न फौज में है और न सिपहसालार में है वह केवल धीरता और काम में है।

मलिनता और अपवित्रता से भय अत्पन्न होता है।

जिस मनुष्य में प्रेम होता है उसका दुनियां में कोई भी शत्रु नहीं है।

जो मनुष्य दुनियावी काम में कुशल होते हैं वह जनता के अपने से विरुद्ध ख्याल को जड़ पकड़ने से पहले कुचल देते हैं और अगर उन को यह मालूम होता है कि जनता के विरोधी ख्याल को वह कुचल नहीं सकते तो वह अपनी दृष्टि उधर से फेर लेते हैं।

ऐसी अवस्था में वह विरोधी ख्याल धीरे २ निकल कर स्वयं समाप्त हो जाता है।

मनुष्य को किसी बात के सोचने या सामान रखने की उसी मात्रा में आवश्यकता है जिस मात्रा से उसका काम निकलता रहे और उसकी स्वतन्त्रता और विभव में कमी न आये। अगर मनुष्य इसे अधिक सोचे समझेगा और दुनियावी सामान रखेगा वह इससे बजाय खुशी होने के दुखी होगा और बर्बाद हो जायेगा।

मनुष्य का जीवन साधारण और उच्च विचार का होना चाहिए। इससे उसको कभी हानि नहीं होगी और गिरते पड़ते भी वह दूसरे मनुष्यों से अच्छा रहेगा।

श्रद्धा और विश्वास की कमी मनुष्य को आत्मिक धन से बंचित रखती है। परन्तु जो लोग थोड़ा बहुत विश्वास सन्तों पर करते हैं उन पर शत्रुओं का प्रभाव नहीं पड़ सकता।

सुन्दरता की प्रथम श्रेणी सभ्यता वो सुशीलता है और अन्तिम श्रेणी प्रसन्नता है।

मनुष्य को चाहिए कि जहां वह अपनी भलाई अपने दृष्टि कोण में रखता है वहां दूसरे की भलाई भी उसके दृष्टि कोण में हो।

अगर वह इस दृष्टि कोण से अपनी भलाई नहीं चाहेगा तो उसकी भलाई हर समय खतरे में रहेगी और उसका परिणाम दुःख और कलेश होगा।

प्रत्येक देश और जाति और प्रत्येक वस्तु का गुण अलग २ होता है और उसी गुण से उसकी मान्यता होती है अगर वह दूसरों के चालढाल और रहन सहन को ग्रहण करेगा तो अपनी मान्यता खो देगा।

गुरु और शिष्य के दरम्यान गहरी हमदर्दी होने के कारण शिष्य गुरु के गुणों को ज्यों का त्यों अपने अन्दर खींच लेता है।

बूढ़ों की बुद्धि बलवान होती है इस कारण उनमें जो शारीरिक

कमजोरी होती है वह अपनी बुद्धि से पूरा कर लेते हैं।

डरना, घबराना, व लज्जित होना पाप है।

मानव जाति की सहायता का दृढ़ संकल्प रखो। तुम्हारे इस संकल्प से दूसरों का भला होगा।

जो हो रहा है ठीक हो रहा है इसमें दोष मत देखो।

जब कोई धनी व्यभिचारी किसी के पीछे पड़ जाता है तो उसको बुरे भले परिणाम का ध्यान नहीं रहता जो जो आया कर गुजरता है।

अत्याचारी अपने से कमजोर पर ही अत्याचार कर सकता है अपने से बली पर उसका बस नहीं चलता।

अनजाने अत्याचार से जानकारी का अत्याचार हजारों गुणा बुरा व दुःख दाई होता है।

माता पिता व गुरु की बात बिना तर्क के मानना व आंवले खाने का लाभ बाद को मालूम होता है।

असावधानी से काम करना उस काम का निरादर है।

प्रायश्चित करने से कभी कभी बला टल जाती है।

जो कोई सच्चाई व इमानदारी की कसौटी पर पूरा उतर जाता है वह बड़ों के भेद का ज्ञाता हो जाता है।

नम्रता से काम न निकले तो कठोरता से काम लेना चाहिये किसी की योग्यता चाहे कम ही हो अगर उसकी विचार शक्ति तीव्र है तो वह जो काम चाहे कर सकता है और चाहे कोई कितना ही योग्य हो अगर उसकी इच्छा शक्ति प्रबल नहीं है तो वह असफल रहेगा।

जिस किसी में योग्यता, अधिकार, व संस्कार हैं उसके दुःख के दूर करने के लिये कोई न कोई मित्र या गुरु के रूप में मिल जाता है।

मित्रता सामानता पर निर्भर नहीं है बल्कि सजातियता यानी एक प्रकृति के होने पर निर्भर है।

अगर धन चाहते हो तो अधिकारी को धन दो अगर मान चाहते हो तो अधिकारी को मान दो।

† स्वयं †

दान करो और खुले दिल से दान करो, मन में मलिनता न हो और दान के फल की आशा न रखो।

सच्चा साहिब प्रत्येक प्रकार की शक्तियों का भण्डार है हर प्रकार से वही तुम्हारी सहायता कर सकता है। मनुष्य भूल में पड़कर जन, जमीन और जर को अपना सच्चा मददगार समझ बैंठा है और इसी की प्राप्ति को सब कुछ समझ बैठा है।

मन बचन और कर्म से दूसरों को खुश करो और तुम खुश रहोगे।

यह ख्याल करके कि तुम मर जावोगे कोई काम बददिली से मत करो। मरने व जीने का भय त्याग कर प्रत्येक कार्य दिलचस्पी से करो।

दुनियां की दशा विचित्र है ज्ञानी अज्ञानी बनना चाहता है अज्ञानी ज्ञानी बनना चाहता है।

राजा को रंक की हालत पर रश्क है और रंक को राजा की हालत पर क्षोम है, इससे ज्ञात होता है कि राजा व रंक दोनों की हालत सुखी नहीं है। बल्कि सुख दोनों से परे की अवस्था में है इस रहस्य को किसी संत से समझो।

एकाग्रता का दूसरा नाम सम्पन्नता है। जिस में चंचलता हो उस में सम्पन्नता नहीं है। सच्चे मानी में वही मनुष्य सम्पन्न है जो शब्द व प्रकाश में रहता है।

जिस मनुष्य को काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहकार अपने बस में किए हुए है वह जीव है। और जो इनको अपने बस में किये हुए हैं वह ईश्वर हैं।

निर्भय निरवैर व अडोल वही मनुष्य रह सकता है जो अपने को शब्द व प्रकाश में स्थित रख सकता है।

जिस मनुष्य पर मालिक की दया होती है उसी को दुनियां से उदासीनता आ जाती है।

जो शत्रुता दूध की खटाई से होती है वही शत्रुता योग को भोग से है।

कनक व कामनी का सुख बादल की छांह है मगर इसका कहना सहज है और प्रयोग में करना कठिन है।

स्वयं कमा कर खाओ और दूसरों को भी दो इससे तुम स्वयं प्रसन्न रहोगे और दूसरे भी प्रसन्न रहेंगे।

लोग कहते हैं ज्ञान, अज्ञान से अच्छा है। हमारा अनुभव इस के प्रतिकूल है। हमको इस वात का ज्ञान हो गया है कि शान्ति की दशा अच्छी होती है। शान्ति प्राप्त करने के हेतु मेरी अशान्ति बढ़ रही है। मालूम होता है कि शान्ति मुझे उस समय प्राप्त होगी जब शान्ति का ख्याल मूझे नहीं रहेगा।

दुनियां व दीन में कोई भी जगह नहीं है जहां भय नहीं है, केवल मालिक को शरण ही ऐसी जगह है जहां भय नहीं है वही जाय पन्नाह है।

मनुष्य का संकल्प अथवा प्रेम अगर स्थूल मण्डल की वस्तु से है तो वह उसका रूप धारण करके उसको नीचे के मण्डल में ले जावेगा और उसको उसका दुःख सुख भोगना पड़ेगा और अगर उसका प्रेम अथवा संकल्प ऊंचे मण्डल से है तो वह ऊंचे मण्डल में जावेगा मगर वह भी दुःख सुख से परे नहीं है अतः मनुष्य को निष्काम वासना या प्रेम रखना चाहिए।

जब तक मनुष्य में किसी प्रकार का अहंकार है तब तक उस में कमजोरी या खौफ है।

मैं दूसरों के प्रकाश से प्रकाशवान नहीं होना चाहता। मैं चाहता हूं कि मेरे प्रकाश से दूसरे प्रकाशवान हों।

सन्त ईश्वर का आदर तो जरूर करते हैं मगर उसकी परवाह नहीं करते। परवाह वह करता है जो किसी से कुछ उम्मीद रखता है। सन्त ईश्वर से कोई आस नहीं रखते। इस बात को सन्त ही जानते हैं जनता नहीं समझ सकती।

सन्तों को सतसंग, एकान्त, प्राकृतिक दृश्य, सूरज, चांद और हवा इत्यादि से शक्ति मिलती है।

जब तक तुम को दुनियावी इच्छा है दूसरे शब्दों में जब तक तुम को मौत का डर है तब तक तुम आत्मअवस्था प्राप्त नहीं कर सकते।

अपने आदर्श का ध्यान रखो। दुनियां में भलाई बुराई दोनों हैं और रहेगी, इसके अच्छे या बुरे होने के प्रभाव से दूर रहो। यह जैसी है वैसी है। यह न अच्छी है न बुरी, जैसी जिस की निगाह है वैसी बन जाती है।

मनुष्य का शरीर सत, रज और तम से बना हुआ है, इसके वास्ते सतोगुणी रजोगुणी और तमोगुणी तीनों प्रकार का भोजन चाहिए, मगर सतोगुणी भोजन की मात्रा इतनी अधिक होनी चाहिए जो कि रजोगुणी और तमोगुणी दोनों भोजनों को अपने प्रभाव में रखे।

मुझको इस बात का दावा या अखतियार नहीं है कि मैं तुमको (मालिक) पा लूंगा मगर यह भी अखतियार नहीं है कि इस ख्याल (तेरे मिलने के ख्याल) से बाज आऊं। तू दयाल है तेरी दया की उम्मीद है अपनी दया की लाज तुझको है।

माया काल और अहंकार एक ही वस्तु के तीन नाम है। दुनियां को भूल जाने में मजा है बिला सतगुरु की दया के यह नहीं हो सकता।

दुनियां एक तमाशागाह है इस में मान, अपमान, जीत और हार की क्या परवाह खेल खेला और चल दिए।

विरह, दीनता और संयम के होते हुए भी बिना मालिक की दया के उसको कोई पा नहीं सकता।

दयाल का दूसरा नाम हमने जाय पन्नाह समझा है। वह हाल व काल से परे है। दयाल का काम ही दया करना है वह निज दया से अपनी शरण देता है।

अपने रूप को पहिचान कर शान्ति पूर्वक जीवन व्यतीत करो और समझ लो कि जो हो रहा है वह अच्छा है मालिक की दया में स्वयं को लय कर दो, जब स्वयं में लय होने लगोगे तुम्हारी रेडियेशन से दूसरों को तुम्हारे जाने या अनजाने लाभ होगा। दूसरों को तुम्हारे रेडियेशन से जो लाभ होगा उस में मालिक का हाथ समझो तुम इसके ऊपर ध्यान न दो बल्कि मालिक की करामात समझ कर उसका गुण गाओ।

जो मनुष्य शब्द व प्रकाश में रहता है वही सच्चे माने में सुखी है और उसी को असली सुख प्राप्त है।

जो मनुष्य सच्चे साहिब का दर्शन पा जाता है वह जब एकान्त में होता है तब उसमें लय रहता है। जब किसी से मिलता है तो उसी के गुण गाता है।

आदर्श में लीन हुआ मनुष्य पूर्ण कहलाता है। वह पूर्ण होता है उसमें कमी व वेशी का प्रश्न नहीं होता, वह राग, वैराग प्रेम द्वेष की लपट से ऊंचा रहता है।

धैर्य व साहस से मनुष्य काल व माया पर विजय पाता है जिन में धैर्य व साहस नहीं उन्हें ये दबोच लेते हैं।

गुरु की दया से मनुष्य नीचे के मडल से ऊंचे के मंडल में चला जाता है वह फिर नीचे के मंडल में नहीं आ सकता। प्रकृति का यह अटल नियम है, काल व माया का प्रभाव उन पर अवश्य पड़ता है मगर उनको हानि नहीं पहुंचा सकता।

जो मनुष्य काल व माया का प्रभाव रखते हुए नीचे के मंडल

से ऊंचे में जाता है वह ऊंचे की मंडल में टिक नहीं सकता वह गिर जाता है।

मनुष्य जब दुःख सहते २ विकल हो जाता है तो मालिक की दया का धार ऊपर से नीचे की ओर आती है और उस मनुष्य को दुःख से छुटकारा दिलाकर ऊपर की श्रेणी या लोक में ले जाती है। इसको सतगुरु की दया कहते हैं। बिना सतगुरु की दया के किसी उपाय से मनुष्य इससे छुटकारा नहीं पा सकता।

तप, प्रेम और इश्क एक ही वस्तु है। जिसके जीवन में तप नहीं है वह जीवन नहीं है वह मृतू है।

ब्रह्मचर्य का वास्तविक सुख तथा अनुभव वही कर सकता है जो गृहस्थी भोग चुका है। जिस एकाग्रता के साथ कामी मनुष्य कामनी का सुख भोगता है वही एकाग्रता मनुष्य को मालिक के साथ होनी चाहिए।

फकीर सतसंग, एकान्त, एकाग्रता, स्वच्छता, सुगन्ध, अच्छी जलवायु इत्यादि से प्रसन्न रहता है।

एक शक्ति है जिस को मालिके कुल कहते हैं। वह अवश्य है उसका होना अनिवार्य है परन्तु वह क्या है. कोई कह नहीं सकता वह अनुभव की बात है। इसी कारण उसको अलख, अगम और अनाम कहते हैं। इसका पता सत्तलोक में चलता है।

अभ्यास करने के लिए यह अनिवार्य है कि मनुष्य अपनी जीविका स्वयं उपार्जन करे दूसरे का आश्रित न हो। जो मनुष्य अपनी जीविका के वास्ते दूसरे का आश्रित हैं वह न दीन का है और न दुनियां का है।

दुनियां तथा दीन दोनों में सफलता प्राप्त करने के वास्ते मानसिक व शारीरिक ब्रह्मचर्य आवश्यक है।

मालिक दयाल है वह जिस मनुष्य को दुखी देखता है उसको दुख की सहन शक्ति प्रदान करता है और अपनी निज दया से दुःख को दूर कर देता है। मनुष्य को घबराना नहीं चाहिये बल्कि

दुख में सुख का आभास करना चाहिये।

दुनियां दुःख और सुख दोनों से बनी है। कोई मनुष्य न तो सदा सुखी ही रह सकता है और न कोई मनुष्य सदा दुखी रह सकता है यह उलट फेर सदा लगा रहता है और लगा रहेगा इसी को चौरासी कहते हैं इस से बचने का रहस्य किसी सन्त से समझो।

मनुष्य वह है जो काम क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार के बस में न आवे बल्कि इनको अपने बस में रखकर नियमानुसार इनसे काम लेता हुआ जीवन व्यतीत करे।

बिना सतगुरु की निज दया के कोई मनुष्य परम शान्ति प्राप्त नहीं कर सकता।

परम शान्ति दुःख व सुख दोनों से परे की अवस्था में रहती है अपने स्वयं को दुःख सुख के मण्डल से ऊंचा रखो और तुम्हारा सब कार्य तुम्हारे अनुकूल प्रतीत होगा।

सच्चे मालिक के रूप के अनुभव की इच्छा उत्पन्न हुई समझ नहीं आती थी मगर इसकी लगन लगी रहती थी। एक दिन बलिया से रसड़ा जाता हुआ सड़क पर आया। वहां मील के पत्थर लगे हुए थे। पहले पत्थर पर शुन्य लिखा हुआ था, उसके पहले कोई पत्थर नहीं था मगर सड़क थी। जहां तक दृष्टि जाती थी वहां तक सड़क ही दिखाई देती थी। विचार में आया कहीं सड़क आरम्भ हुई होगी और उसके आगे भूमि होगी। यह अनुमान हमारा हृदय सही मानता था उसके पहले पानी होगा यानी समुद्र होगा।

यहां तक हमारा विचार गया उसके पहले भी कोई वस्तु होगी यह अनुमान होता था किन्तु उसका रूप रेखा नहीं बना सका। देर तक सोचता रहा कोई बात समझ में नहीं आई मगर इससे हमारा दिल इनकार नहीं करता था कि समुद्र के आगे कोई

वस्तु नहीं है वलिक अवश्य है। हैरान होकर आगे बढ़ा आगे की तरफ दूसरा पत्थर मिला उस पर१ लिखा था खुश हुआ चलो अब पता चल जावेगा उसके आगे बढ़ा २. ३. ४. ५. इत्यादि नम्बर के पत्थरों को पार करता हुआ २२ नम्बर वाले पत्थर के बाद पत्थरों की सिलसिला भी समाप्त हो गया वहाँ खड़ा होकर देखने लगा तो फिर वही शून्य वाले नम्बर के पहले का दृश्य आ गया और हैरान रह गया और मालिक को यही समझा कि वह हैरत है कबीर साहिब का शब्द याद आ गया कि :—

पक्षी के खोज मीन के मारग कह कबीर दीऊ भारी।
अपरम पार. पार परषोतम मूरत की बलि हारी।।

ऊंचे मण्डल में निवास करने वाले मनुष्य अपने जैसी प्रकृति वाले मनुष्य जो नीचे के मण्डल में निवास करते हैं उन्हें प्रेम करने को विवश हैं क्योंकि प्रकृति का यह अटल नियम है और यही दशा नीचे के मण्डल के मनूष्यों की अपने जैसी प्रकृति वाले मनुष्यों से प्रेम करने की है जो ऊंचे मण्डल में रहते हैं।

जिस तरह श्वेत रंग ही असली रंग है मगर वह आकाश के प्रभाव से नीला, सुरज के प्रभाव से पीला, पृथ्वी के प्रभाव से मट-मैला और चन्द्रमा के प्रभाव से रूपहला बन जाता है, ठीक उसी तरह बीन की धुन असली धुन है जो सत्तलोक में होती है। मगर वह भंवर गुफा पर आकर उसके प्रभाव से मुर्ली जैसी हो जाती है महासुन्न व सुन्न के स्थान पर सारंगी हो जाती है त्रिकुटी पर बादल की गरज और सहस्त्रदल कंवल पर घण्टे का शब्द और मनुष्य की जुबान पर जाकर बोली हो जाती है।जहां श्वेत रंग नहीं है वहां कोई रंग नहीं है और जहां बीन की धुन नहीं है वहां कोई धुन नहीं है इसी कारण सतलोक के परे जहाँ श्वेत प्रकाश व बीन की धुन हैकोई धुन व प्रकाश नहीं है वहां क्या है ? हैरत, हैरत और हैरत है।

एक व्यक्ति ने प्रश्न किया कि ईश्वर का रुप क्या है ? मैं उसको देखना व और समझना चाहता हूं।

उत्तर :—मैंने कहा कि भाई देखोगे तो समझोगे नहीं और समझोगे तो देखोगे नहीं।

उसने कहा आप दिखा दीजिए मैं समझ जाऊंगा। मैंने कहा कहा बहुत अच्छा। एक सिगरेट निकालकर मुंह में रखा और दिया सलाई मंगाई सिगरेट जलाया सिगरेट का धुवां उठता रहा ढुठी फेंक दिया वह भी जलकर उड़ गई।

वह इस आशा में था कि सिगरेट पीकर उस को दिखाऊंगा उसने कहा सिगरेट पी चुके। ईश्वर दिखाइए। मैंने कहा मैंने दिखा दिया और तुमने देख भी लिया उसने कहा मैंने नहीं समझा कि क्या देखा।

मैंने कहा कि मैंने तुमसे पहले ही कह दिया कि देखोगे तो समझोगे नहीं !

उसने कहा अच्छा अब समझाईये मैं देखना नहीं चाहता। मैंने कहा सिगरेट मुंह में रखा दिया सलाई जलाई। दिया सलाई से रोशनी पैदा हुई रोशनी में सिगरेट सुलगया. मैं पीता रहा, धुआं निकलता रहा. फेंक दिया न कहीं दियासलाई है, न धुवां है है न सिगरेट, सिगरेट अपनी स्थिति धारण करने के पहले भी था मगर जब स्थिति में आया तो तुम ने देखा रोशनी व धुवां इत्यादि समाप्त होने के बाद भी उसका तत्व है मगर न तुम देख सकते हो और न समझ सकते हो मगर उसकी स्थिति से इन्कार नहीं कर सकते आदमी समझदार था खुश हो गया आप ने ठीक कहा ईश्वर का समझना और देखना दोनों एक साथ नहीं हो सकता मैंने देख भी लिया और समझ भी लिया। नमस्कार करके चला गया।

किसी तत्व की एक मैं कमी होना और दूसरे से उसको ग्रहण करके सम अवस्था में आने की प्रबल इच्छा प्रेम पैदा करती है। शर्त यह है कि जिसमें उस तत्व की विशेषता हो वह भी उस तत्व को उस प्रेमी को देने की प्रबल इच्छा करे तो जिस में कमी है उसे

वह तत्व मिल जावेगा। किसी में एक तत्व की कमी होना और उस में तत्व की दूसरे में विशेषता होना आपस में प्रेम करने से दोनों को समता में लाता है। समता में आने पर दोनों में प्रेम भी समाप्त हो जाता है। जहां गर्मी बढ़ जाती है तो वह गर्मी जहां अधिक सर्दी होती है वहां से सर्दी खिचती है अगर सर्दी कम है और गर्मी अधिक है तो सर्दी प्रेम वश गर्मी की ओर खिचेगी।

जिन मनुष्यों की दृष्टि माया व काल के प्रभाव बस केवल त्रिगुणात्मिक जगत ही तक सीमित हैं उन लोगों के हेतू सत्तलोक सिन्धु की एक बून्द या सूर्य की एक किरण के समान दृष्टिगोचर होता है। तथा नहीं भी होता है। वैसे ही जो मनुष्य गुरु की दया से सत्तगुरु को प्राप्त करके सत्तलोक के वासी हो जाते हैं उनको यह त्रिगुणात्मिक जगत केवल सिन्ध के एक बूंद तथा सूर्य की एक किरण के समाह दृष्टिगोचर होता है तथा नहीं भी होता है अतः सत्तलोक और जिगुणात्मिक जगत में इस दृष्टि कोण से इतनी दूरी है।

निर्वाण की अवस्था सूर्य के समान है जिसको प्रकाशित करने हेतु किसी शक्ति की आवश्यकता नहीं है वह स्वयं प्रकाशमय है। उसको कोई शक्ति अगर प्रकाश प्रदान करने का प्रयास करे तो वह स्वयं लुप्त हो जावेगी। सूर्य से दूसरी वस्तु तथा जीव अपने यथा शक्ति काम बना सकते हैं। सूर्य स्वयं पूर्ण है उस में कोई वासना नहीं है। वह किसी को न कुछ दे सकता है और न किसी से कुछ ले सकता है। यही अवस्था निर्वाण प्राप्त पुरुष की होती है। वह स्वयं प्रकाशमय है और दूसरे उससे यथाशक्ति प्रकाशमय होते रहते हैं। जो लोग सांसरिक हैं तथा निर्वाण को नहीं प्राप्त किए हैं, आप स्वयं प्रकाशयम नहीं है उन लोगों को अपने को प्रकाशित करने हेतु त्रिगुणात्मिक जगत की वस्तु से मदद लेने की आवश्यकता पड़ती है। चूंकि त्रिगुणात्मिक जगत में गती है इसकी कोई वस्तु स्थाई नहीं रह सकती अतः जो लोग

त्रिगुणात्मक जगत की वस्तूओं का सहारा लेकर अपने को प्रकाशित करते हैं या आनन्द लेते हैं (जो कि नियमानुकूल गती में है और नष्ट हो जाता है) वह प्रकाश या आनन्द नष्ट हो जाता है। इसी कारण सन्तों की शिक्षा अपनी वृत्ति को त्रिगुणात्मिक जगत से ऊपर रखने की है जिस के वास्ते सन्तों का सत्संग तथा अभ्यास अनिवार्य है।

काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्षा, द्वेष का प्रभाव शब्द व प्रकाश में वैसे ही लुप्त हो जाता है जैसे सूर्य के प्रकाश में दीपक का उजाला लुप्त हो जाता है।

जब मनुष्य सर्वव्यापक से मिल जाता हैं तब संकल्प व विकल्प नहीं रहते।

जो मनुष्य सत्तलोक में पहुंच जाता है वह काल व माया के प्रभाव से बच कर शब्द व प्रकाश में वैसे ही आराम करता है जैसे चलती हुई गाड़ी का मुसाफिर बर्थ पर आकर आराम करता है।

दाता दयाल जी तथा परमदयाल जी के लेखों को उनके रूप का ध्यान करते हूए पढ़ने से विशेष लाभ होगा।

सत्तलोक प्रकाश व ताप *Light and energy* के महासागरों का एक सागर हैं। इसकी एक किरण ही इतनी शक्ति मान है कि जितने ब्राह्माण्ड का तुम अनुमान कर सकते हो उतना ब्राह्माण्ड वह रच सकती है।

कबीर साहिब के एक शब्द में यह आया है कि ;—

"कोटि भानू की शोभा जिनके एक एक रोम उजार"

दूसरे शब्द में यह आया है कि :—

"कोटिन भानू चन्द्र तारागण छत्र की छांह रहाई।"

तीसरे शब्द में यह आया है कि :—

"चन्द्र, सूर्य, तारागण नहीं वहां, नहीं वहां रैन विहानी हो।"

चौथे शब्द में आया है कि :—

"जहां पुरुष तहां कछउ नाहीं कह कबीर हम चिन्हा ।"

और सार वचन व हिदायत नामा में आया है कि "सत्तपुरुष का एक-एक रोम इतना प्रकाशमान है कि उसकी किरण से सूर्य व चन्द्र भी लज्जित हैं। इसका यह मतलब नहीं है कि सतलोक से जो किरण निकलती है उसकी एक किरण को कोटि सुर्य व चन्द्र प्रकाशवान करते हैं, बल्कि उसका यह मतलब है कि सत्तलोक की एक किरण की इतनी शक्ति है कि कोटिन चन्द्र व सूर्य उसके छत्र की छांह में रहते हैं यानी प्रकाशमान होते हैं। सत्तलोक में जब कोई आकार नहीं है तो वहां चांद सुरज का कोई प्रश्न ही नहीं है। कबीर साहिब नें भी लिखा है कि चांद, सूरज, तारागण नहीं वहां रैन विहानी हो। और सारवचन के हिदायतनामा में जो लिखा है कि सत्तपुरुष का एक-एक रोम इतना प्रकाशवान है कि इसकी एक किरण के प्रकाश के सामने करोड़ सूरज व चांद की रोशनी लजाती है। इसमें बताया गया है कि करोढ़ों सूरज व चांद का प्रकाश सत्तलोक के एक किरण के प्रकाश के भी बराबर नहीं है।

मनुष्य की सुरत जब सत्तलोक में प्रवेश करती है तो शरीर के रक्त का दौरा मस्तिष्क की ओर हो जाता है। सुशमना नाड़ी चलने लगती है। सुरत निरत हो जाती है, आंखों की पुतलियां पिंडदेश को छोड़कर उलट कर ब्रह्माण्ड देश को वैसे ही देखने लग जाती हैं जैसे चकोर, चांद को देखता है। आत्मा इसका विलास ऐसे ही करने लग जाती है जैसे पतंग दीपक के प्रकाश पर मुग्ध हो जाता है। देह का खान-पान भी अपनी जगह छोड़कर ऊपर चढ़ने लगता है। सत्तलोक उत्पत्ति की माता है। उस प्रकाश व ताप *Light and energy* को जब तक कोई वहां नहीं पहुंचता अनुभव नहीं कर सकता। हमारे लिखने को जो लोग वहां नहीं पहुंचे हैं वह केवल उसी मात्रा में समझ सकते हैं जो मात्रा बुन्द का सिन्धु से है। सत्तलोक का ताप अज्ञानता का नाश करता है और ऊपर अलख व अगम को ले जाता है और इसकी किरणें भंवर गुफा, महासुन्न. सुन्न, त्रिकुटी, सहसदल कंवल तथा देह को गति देती है यानी ब्रह्माण्ड, अण्ड, पिण्ड को रचना करती है।

वहां का अनुभव वह मनुष्य कर सकता है जो पिण्ड, अण्ड और ब्रह्माण्ड से परे अपनी सुरत को पार कर सकता है। वहां पहुंचने के लिए मनुष्य को जान पर खेलना पड़ता है यानी मृत्यु के लोक को भी पार करना पढ़ता है। मगर यह कार्य भी सत्तलोक का कोई मूल्य नहीं है। चुंकि वह दयाल लोक है, वह परमदयाल शक्ति अपनी निज दया से दया की धार से ऐसे मनुष्यों को अपने धाम में लेजाकर स्थाई पद दिला देती है यानी उसको काल व माया से निकाल कर अमर पद दे देती है, जिस का मतलब यह है कि मनुष्य शब्द व प्रकाश में अपना घर कर लेता है और काल के प्रभाव से निकल जाता है। ऐसा मनुष्य सर्वाधार से मिला रहता है उसकी वासना निर्वासना हो जाती है। सोहंग के मण्डल तक मन आकार बना सकता है। किन्तु वह सत्तलोक में आकार नहीं बना सकता है। क्योंकि सत्तलोक में इतना शक्तिशाली शब्द व प्रकाश तथा ताप energy है, कि उसमें अन्य वस्तु के प्रवेश करने के वास्ते सूई के नोक के बराबर भी खाली जगह नहीं है। हमारे अभिप्राय को अब दूसरे तोर पर विचार करें। जलती हुई आग की भट्टी में जिस का प्रकाश बजाय लालिमां रंग के श्वेत रंग धारण कर लेता है उसमें कोई वस्तु टिक नहीं सकती और अगर कोई ऐसी शक्तिशाली वस्तु है जो उसमें प्रवेश कर गई तो वह अपना नाम व रूप खोकर स्वयं प्रकाश की लौ हो जावेगी और अपने अस्तित्व को खो देगी। सत्तलोक सत्तगुरु स्वरूप है वहां गुरु की मूर्ति सत्तगुरु में प्रवेश करके अपना नाम व रूप खो देती है। सत्तलोक रचना की विमल शक्ति है मगर वह शक्ति अपने लोक में कोई रचना नहीं कर सकती जब तक उसकी धार दूसरे लोक में न जावे क्योंकि रचना जब होगी दो से होगी, ठीक जैसे बिजली की दशा है। बिजली जब तक दूसरी वस्तु से नहीं टकराती है तब तक वह न तो प्रकाश पैदा कर सकती है और न कोई यंत्र चला सकती है यही कारण है कि सत्तलोक में बिना देह मन और आत्मा के बोध, भान को छोड़े हम लोग नहीं जा सकते हैं। सत्तलोक में हम लोग खिच जाते हैं

जहां से असली शब्द व प्रकाश पैदा होता है तथा इसका भण्डार है. वहां न हम धनी हैं न निर्धन. न प्रसन्न न अप्रसन्न, न अहंकारी न निहंकारी वहां हमको केवल अपने स्वयं का भान रहता है और कुछ नहीं। सत्तलोक दयाल देश है जो कि माया तथा काल से दुखी जीवों के चोट की मरहम पट्टी करके स्वस्थ्य बना देता है परन्तु उसका यह व्यवहार उन्हीं लोगों के साथ होता है जो यह अनुभव करते हैं कि काल व माया उनको चोट पहुंचा रहा है और काल व माया के देश से जाने या अनजाने निकल जाना चाहते हैं और इसकी अभिलाषा से इसका प्रयास करते हैं। जिन लोगों को यह अनुभव नहीं होता कि माया व काल क्यों और क्या दुःख देता है उन लोगों की सत्तलोक कोई सहायता नहीं कर सकता। क्योंकि बिना मांग के पूर्ति नहीं होती। जैसे सर्दी का मारा आदमी सर्दी के दुःख का अनुभव करके जब तक आग के पास नहीं जावेगा आग उसकी मदद नहीं कर सकती। अगर ऐसे जीव जिन को इस दुःख की समझ है उस दुःख से अपने को छुटकारा पाते हुए अनुभव करते हैं और शान्ति व प्रसन्सता का अनुभव करते हैं तो उनको समझना चाहिए कि वह जाने या अनजाने सत्तलोक के समक्ष हैं. क्योंकि जो लोग सत्तलोक के समक्ष होगें वह इसके प्रभाव से बच नहीं सकते। जहां वासना होगी वहां आकार होगा, क्योंकि वासना ही आकार बनाती है। सत्तलोक में दुनियां या दीन की वासना तथा आकार नहीं रहता। ऐसे लोगों को अगर कोई वासना होती भी है तो वह नीचे के मण्डल ही में सत्तलोक की शक्ति पाकर या तो पूर्ण हो जाती है या लुप्त हो जाती है। क्यों कि जो लोग सत्तलोक में पहुंच सकते हैं वह कोई वासना वहां नहीं ले जा सकते। हम लोगों को अपनी सुरत दयालदेश तथा शब्द व प्रकाश के भण्डार में (जो प्रकृति पैदा करती है) उसमें रखना चाहिए, मगर भूल से हम लोग अपनी सूरत प्रकृति के बनाए हुए मण्डल में रखते हैं जो स्वयं दूसरे की आश्रित है और नाशवान है।

भंवर गुफा के मण्डल के ऊपर दयाल देश तथा सत्तलोक है।

उसके नीचे सोंहग का मण्डल है, जहां काल व माया का प्रभाव आरम्भ होता है, वासना की उत्पत्ति होती है और वासना रूप रेखा धारण करने लगती है। गुरु की मानसिक मूर्ति भंवर गुफा तक पहुंचा कर सत्तलोक में जाकर सत्तगुरु का रूप धारण कर लेती है। गुरु की मानसिक मूर्ति भी माया है मगर सुभागी माया है जो दयाल देश को ले जाती है अतः इसको नमस्कार है और धन्यवाद है मैं इसका स्वागत करता हूं।

शब्द व प्रकाश ही सच्चा गुरु है, गुरु आदर्श प्राप्ति किये हुवे को कहते हैं। आदर्श को गुरु नहीं कहते बिना शब्द व प्रकाश के हम आदर्श प्राप्त नहीं कर सकते। सुरत जब शब्द व प्रकाश को तोड़ती फोड़ती है तब अनाम निकलता है जो आदर्श है।

जब तक हमारे जीवन की वासनायें पूर्ण या विनाश होकर मृतक दशा के मण्डल को प्राप्त नहीं कर लेती तब तक असली व सच्चा जीवन प्राप्त नहीं होता जो दयाल देश का है।

मृत्यु सिवाय भय व त्रास के और कुछ नहीं है जीवन निर्भयता व प्रसन्नता के सिवाय और कुछ नहीं है। देह से आत्मा के निकल जाने का कार्य तथा जीवन्न धारण करने का कार्य जीवन व मरण नहीं है।

छुट्टी का दिन था। अकेले बैठा हुआ था घर के काम काज की ओर ध्यान गया। सब ठीक पाया तो अपनी ओर ध्यान आते ही दाता दयाल का ध्यान आया उनके साथ बीते हुये दिन याद आये। कैसे दातादयाल के पास गया उन्होंने सहजयोग सिखाया, बीमारी से अच्छा किया। शादी कराई, वकालत पास कराया, हमारी इच्छा शक्ति को प्रबल बनाया और इस की परीक्षा हम से बलिया में मकान बनवाकर ली, इच्छा शक्ति प्रबल बनाई और मकान बनवाया? क्या पता उन्होंने अपनी इच्छा शक्ति से मकान बनवाया हो। जब तक स्वयं इसकी परीक्षा न लो तुम को यह कहने का अधिकार नहीं है? मैं इस की परीक्षा लूंगा,

कैसे ? नाम क्या है इस के समझने का प्रयास करूंगा ठीक है मगर यह कैसे होगा ? इसके लिये तुमको पूरी २ स्वतन्त्रता चाहिये, घर पर रहने में दोचिताई रहती है, यहां असम्भव है घर छोड़ कर एकान्त में चला आऊं ? मगर वहां भी तो रोटी, कपड़ा और मकान का प्रश्न रहेगा, वहां एकान्त कहां होगा, संसार भर चक्कर काट आया कोई जगह नहीं पाया, अच्छा कुछ दिनों जेल चले जावो और वहां तुम्हारी सज़ा सादी हो - सादी सज़ा वाले को एक स्वतन्त्र कोठरी मिलती है उसको अपना कपड़ा पहिनने का अधिकार है खाना जेल से मिलता है। अपने घर से भी खाना मंगा कर खा सकता है कोई काम नहीं करना पड़ता। प्रतिबंध यह है कि वह किसी से आम तौर पर नहीं मिल सकता और न अपने से बाहर जा सकता है यह और अच्छी बात है मैं ऐसा हो चाहता हूं, प्रसन्न हो गया, मगर यह कैसे सम्भव है कि ऐसा हो, कुछ देर तक सोचता रहा कोई रास्ता नहीं मिला, ज्यों का त्यों ठहर गया। ध्यान दूसरी ओर चला गया। थोड़ी देर बाद सब भूल गया।

कुछ दिनों बाद हमारे ऊपर फौजदारी का मुकदमा चला, उस में कोई तत्व नहीं था मगर हमारी आशा के प्रतिकूल हमारी सज़ा छः माह सादे सज़ा की हो गई। मैं उदास हुआ और जेल चला गया जब जेल गया, एकान्त में साफ सुथरी व हवादार कोठरी मिली तो नाम के समझने वाली पुरानी बात याद आ गई, प्रसन्नता की झलक दिखाई पड़ी। मगर जो स्वतन्त्रता सादी सज़ा वाले को मिलनी चाहिये उस से जेलर हमको वंचित रखना चाहता था। मैंने मालिक को याद करके अनशन ब्रत धारण किया। ९६ घण्टे के बाद नाम की समझ पाई तब जेलर ने हम को सारी सुविधा सादी सज़ा की दी मैंने अनशन ब्रत तोड़ दिया। अपनी समझ को पक्का करता रहा। ४ महिने में यह समझ पक गई। इस से यह न समझें की मुझे नाम की प्राप्ती हो गई, अभी यह दूर की

बात रही। मेरी रिहाई वजाय छः महिने के चार ही महिने में हो गई। कैसे हुई इसका लिखना जरूरी नहीं समझता।

नाम को तो समझ गया अब नाम की प्राप्ती की इच्छा हुई जैसी जगह तथा मकान की जरूरत थी वैसी जगह व मकान बन गया एकान्त वास करने लगा। अब समझ आई है इन सब बातों के होते हुये भी अगर सतगुरु दया न करें तो सब धूल है। कोई नाम की प्राप्ती नहीं कर सकता।

मकान वाले मामिले में दातादयाल जी ने लिखा था कि मकान तो रह जावेगा मगर तुम्हारी सजा होगी, उसमें मैं छुट गया। कभी कभी सोचता था उनके लिखने में क्या रहस्य है। अब समझता हूं कि यह बात उनको मालूम थी जाने या अनजाने उन्होंने इस को वहां लिख दिया था यह यहाँ की बात थी।

संकल्प या वासना ही माया हैं।

ऐ मेरे सच्चे मालिक में तुमको अर्पण करने के लिए अपने अन्तर में जब कोई वस्तु ढूंढता हूं तो सिवाय अपनी इच्छा या वासना के और कुछ नहीं पाता। जब अपनी वासना को तेरे अर्पण कर देता हूं तो उससे अच्छी वस्तु अपने अन्तर में शब्द व प्रकाश को पाता हूं अत: शब्द व प्रकाश को तेरे अर्पण करता हूं तो अशब्द व अप्रकाश में चला जाता हूं, जहां न मैं रहता हूं और न तू रहता है और मेरा तेरा झगड़ा जब मिट गया अर्पण करने का प्रश्न ही नहीं रह जाता।

स्वप्न :—मनुष्य स्वप्न क्यों देखता है ? मनुष्य के शरीर में अनेक प्रकार के मण्डल हैं। जिस में मुख्य काम, क्रोध, मौह, अहंकार, प्रेम, सुख, आनन्द व शान्ति आदि हैं मन किसी न किसी मण्डल पर बैठ कर कोई न कोई कार्य करता रहता है और उसके प्रभाव बाहर या अन्दर प्रगट करता रहता है बाहर का प्रभाव स्पष्ट व अन्दर का प्रभाव गुप्त होता है। जाग्रत अवस्था में वह अपना कार्य करते-करते जब थक जाता है तो शक्ति प्राप्त करने के हेतू नींद के मण्डल में चला जाता है वहां जब शक्ति प्राप्त कर

लेता है तो जाग्रत अवस्था में आकर वही कार्य करने लगता है। देश काल व वस्तू के प्रभावानुसार सुखी व दुखी होता रहता है किसी मण्डल का साधारण और किसी का विशेष प्रभाव इस पर पड़ता है। साधारण प्रभाव को मन स्वप्न अवस्था में भूल जाता है मगर विशेष प्रभाव को बनाये रखता है। यह बना हुआ यानी स्थित प्रभाव मनुष्य को नींद के मण्डल में जाने को एक ओर बाध्य करता है वो दूसरी ओर नींद के मण्डल का प्रभाव मन को खिचता है मगर वह हल्का पड़ जाता है और स्थित प्रभाव के मण्डल की ओर स्वयं खिच जाता है और वहां जाकर स्वप्न अवस्था में वही कार्य मन से कराने लगता है जो मन जाग्रत स्थूल अवस्था में प्रभावित होकर करता था। जाग्रत स्थूल अवस्था है स्वप्न सुक्ष्म अवस्था है जो कार्य जाग्रत अवस्था में किसी से बरसों में नहीं हो सकता वह स्वप्न में पल भर में हो जाता है। स्वपन्न का एक कारण तो यह है दूसरा कारण यह है कि जब मनुष्य कोई ऐसी वस्तू खा लेता है जिसको पेट पूरी तरह से पचाने में असमर्थ हो जाता है या शरीर के किसी अंग में या कुल शरीर में दुःख दर्द होने के कारण मन नींद के मण्डल में जाने से रुक जाता है और किसी दूसरे मण्डल में रुक जाता है नींद के मण्डल के प्रभाव को अपनी ओर खिचता है तब उस दशा में भी स्वप्न पैदा हो जाता है दोनों दशा में मन का नींद के मण्डल में पहुंचने में रूकावट होना है। देश, काल व वस्तू का जो प्रभाव जाग्रत अवस्था में मन पर पड़ा रहता है मनुष्य उसका स्वप्न देखता है। जो मनुष्य ठन्डे देश में रहते है और गर्म देश के जलवायु से कभी प्रभावित नहीं हुये हैं वह गर्म हवा के लपट व मरूस्थल का स्वप्न नहीं देख सकते तथा जो लोग गर्म देश में रहते हैं और सर्द देश का अनुभव उनको नहीं है वह सर्दी से कांपने का स्वप्न नहीं देख सकते। जिस मनुष्य ने सांप नहीं देखा है वह स्वप्न में सांप नहीं देख सकता। जिस मनुष्य का हृदय स्वच्छ व निर्मल है उसको भयभीत होने के स्वप्न नहीं दिखाई देगें। वह प्रसन्नता का

स्वप्न व प्रकाश आदि देखेगा । जिसके हृदय में द्वेष व इर्षा आदि है वह भयानक स्वप्न देखेगा ।

जान तो चल और अचल दोनों में है । प्रत्येक वस्तु जो दृष्टी में आती है जान से रहित नहीं है । चल में जान का होना प्रत्येक मनुष्य देखता है मगर अचल में जान का होना सुक्ष्म दृष्टि वाले ही मनुष्य देखते हैं। स्थूलदृष्टि वाले मनुष्य नहीं देख पाते । इस श्रृष्टि में ऐसे मण्डल नक्षत्र व तारागण हैं जिनमें अमृत पैदा करने का प्रभाव है तथा ऐसे भी हैं जो विष पैदा करते हैं जब दो भिन्न प्रकार के नक्षत्र एक दूसरे से प्रभावित होते हैं तब रचना होती है और श्रृष्टि की उत्पत्ति होती हैं। जिस चल या अचल वस्तू वाले जीव में अमृत पैदा करने वाले तथा विष पैदा करने वाले नक्षत्र का प्रभाव जिस अंश में अधिक, कम तथा सम अनुपात में होगा उसी अनुपात में वह गुणी सुन्दर, कुरूप, धनवान तथा निर्धन इत्यादि होता है। और इसी प्रकार के प्रभाव के अनुसार कार्य करने को विवश है, वह बदल नहीं सकता मगर देश काल व वस्तु के सम्पर्क से अच्छा बुरे में और बुरा अच्छे में अपने विशेष प्रभाब के साथ बदल सकता है। ऐसा बदलना भी उस वस्तु या जीव में उन नक्षत्रों के प्रभाव जो इस रचना में आते हैं साथ ही विद्यमान रहते हैं। इसमें किसी का बस नहीं है, यह कहना कि मैंने यह किया और तुमने वह किया दोनों व्यर्थ है। मनुष्य को चाहिए कि समभाव रखते हुए साक्षी के रूप में निर्लेप हर्ष पूर्वक इनको भोगता और देखता रहे। और मालिक का गुण गाते हुए इन से प्रभाबित न हो। यह स्मरण रहे कि प्रत्येक वस्तू व जीव में विष और अमृत दोनों का प्रभाव है। अनुपात की दृष्टि से कमी और वेसी अवश्य है, सम दृष्टि वाले मनुष्य दोनों से प्रसन्नता प्राप्त करते हैं और दोनों में भेद भाव नहीं रखते।

जिस प्रकार सांसारिक वासनाओं का इतना प्रबल प्रभाव है कि इनके कारण मनुष्य अन्तर में जो शब्द और प्रकाश है उसका ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता है और उसमें प्रवेश करने का प्रश्न तो दूर की बात है वैसे ही मनुष्य सौभाग्य से जब शब्द व प्रकाश में प्रवेश

कर जाता है तो शब्द व प्रकाश का भी इतना प्रभाव है कि वह मनुष्य को सत्य तथा स्वयं के ज्ञान से रोक रखता है। बिना शब्द व प्रकाश के निकले सत्य का भान नहीं हो सकता है, मगर शब्द व प्रकाश गुरु दयाल है वह अपना खेल खेला कर सत्य का भान जो आदर्श है करा देता है।

अनुभव सिद्ध करता है कि मनुष्य को जो कुछ प्राप्त होता है वह मालिक की ही दयासे प्राप्त होता है। गुरु दया का रूप होता है इस कारण उसको दयाल कहते हैं। गुरु दया करने की शक्ति शब्द व प्रकाश से प्राप्त करता है। जो "दयाल" का असली रूप है। शिष्य गुरु के ध्यान से गुरु की दया का अधिकारी बन जाता है। "गुरु शब्द व प्रकाश का ध्यान करता है। शिष्य गुरुका ध्यान करता हैइस प्रकार शिष्य भी अनजाने शब्द व प्रकाश ही का ध्यान करता है या इस तरह समझिए कि शिष्य स्थूल शब्द व प्रकाश का ध्यान करता है और गुरु सूक्ष्म शब्द व प्रकाश का ध्यान करता है। समय आने पर स्थूल 'शब्द व प्रकाश 'गुरु' लुप्त हो जाता है व सूक्ष्म शब्द व प्रकाश जो स्वयं दयाल है रह जाता है। फिर समय आने पर शब्द व प्रकाश भी लुप्त हो जाता है परन्तु इसके हेतु मैं इस समय कुछ कहना नहीं चाहता' जो सूक्ष्म गुरु है परन्तु आदर्श नहीं है। शिष्य अगर जाने या अनजाने गुरु को शब्द व प्रकाश या सर्वाधार समझ कर शुभ भावना से जिस अभिलाषा को लेकर ध्यान करेगा वह अवश्य पूरा होगा। और अगर उसकी भावना इसके प्रतिकूल अशुभ है तो वह नष्ट भ्रष्ट हो जायेगा। मुझको दृढ़ विश्वास था कि दाता दयाल सर्वाधार के रूप हैं वह जो चाहे कर सकते हैं अब हमको यह अनुभव होता है कि हमारा यह विश्वास जाने या अनजाने उनको शब्द व प्रकाश में ले जाकर हमारी मनोकामना पूरी कर देता था शब्द व प्रकाश में रहने वाले मनुष्य दयालस्वरूप हैं। ऐसे मनुष्य अपने जैसे स्वभाव वाले मनुष्य की पूरी-पूरी सहायता करते हैं, जिनमें शब्द व प्रकाश पैदा होने का अधिकार व संस्कार देखते हैं जिनमें ऐसा अधिकार व संस्कार नहीं है उसकी वह सहायता भी करना चाहें तो नहीं कर सकते। जो जिस गुण

व स्वभाव का होता है वैसे ही गुण व स्वभाव वाले की सहायता कर सकता है।पानी की सहायता पानी करता है आग की सहायता आग करती है साधु की सहायता साधु और चोर की सहायता चोर करता है । जाने या अनजाने जब तक किसी मनुष्य का सम्बन्ध शब्द व प्रकाश के मण्डल से नहीं होगा वह कोई सफलता प्राप्त नहीं कर सकता, क्योंकि शब्द व प्रकाश ही रचना का आधार हैं। अपनी मनोकामना की पूर्ति के लिए मनुष्य स्वयं जो प्रयत्न करता है तथा दूसरों से सहायता प्राप्त करता है वह दूसरे रूप में शब्द व प्रकाश ही से प्रयत्न प्राप्त करता है अगर किसी की कोई सहायता करना चाहता है और उसका सम्बन्ध उस मण्डल से नहीं है तो वह सहायता नहीं कर सकता। मगर चूंकि सहायता की धार शब्द व प्रकाश के मंडल से पैदा होती है ऐसे मनुष्य जो दूसरों के सहायता की हार्दिक तपन रखते हैं वह स्वयं जाने या अनजाने शब्द व प्रकाश के मण्डल में प्रवेश कर जाते हैं इर्ष्या, द्वेष व घृणा आदि रखने वाले का सम्बन्ध इस मण्डल से नहीं होता अगर तीव्र इच्छा बस हो भी गया तो उनकी हानि होगी। अगर कोई शब्द व प्रकाश के मंडल पर अधिकार पाले तो उसको किसी की सहायता की आवश्यकता नहीं होगी वह स्वयं आवश्यकता पूर्ण हो जाता है। प्रकृति का रूप समझ जाता है और पूर्ण बन जाता है । ऐसे पुरुष दुनियावी दृष्टिकोण से उदासीन कहे जाते हैं मगर वास्तव में वह सच्चे सम्पन्न और हालमस्त हैं उनकी दशा क्या होती है वह ही जानते हैं या वह जो ईस दशा को प्राप्त हैं।

शब्द व प्रकाश के मण्डल में मनुष्य उस समय जा सकता है जब वह स्वयं सम्पन्न हो, किसी के आधीन न हो, सब का भला चाहने वाला हो, उसमें द्वेष,ईर्षा व घृणा न हो, दया, शील व क्षमा हो, अपने आप पर काबू हो, मान बड़ाई की इच्छा न हो, किसो से गहरी प्रीत न हो, बल्कि स्वभाविक हो तब उसके दिल रूपी नहर में शब्द व प्रकाश रूपी सिन्धु से दया रूपी पानी की धार आने का

रास्ता साफ हो जावेगा और वह यथोचित अपना कार्य ले सकता है जोकि नाम का एक अंग है। इस दशा के मिटने के बाद अनाम की दशा प्राप्त होती है इस दशा को प्राप्त किये हुये पुरुष से जो घनिष्ट प्रेम करता है वह सुगमता से उसकी दशा को प्राप्त कर लेता है बिना इस कार्य के इसका प्राप्त करना असम्भव है।

जब कभी मैं इस आशय का निर्णय करना चाहता हूं कि स्थूल गुरु व सूक्ष्म गुरु दोनों में श्रेष्ठ कौन है सोचते २ मेरी बुद्धि चकित हो जाती है। निर्णय तो दूर रहे मैं स्वयं को भी खो देता हूं, फिर जब चेत में आता हूं तो स्वयं से पूछता हूं कि क्या निर्णय किया जाए? एक ओर तो यह कहता हूं कि चूंकि स्थूल गुरु से सुक्ष्म गुरु की प्राप्ती होतो है इसलिये स्थूल गुरु की महानता है। दूसरी ओर यह कहता हूं कि चूंकि मैं स्वयं स्थूल हूं इसके कारण स्थूल गुरु का पक्ष करता हूं। फिर कहता हूं कि महानता है उसकी है जिससे स्थूल व सूक्ष्म गुरु प्रगट होते हैं. फिर सोचता हूं कि यह तो दूसरी बात हो गई। हमको तो सूक्ष्म व स्थूल गुरु का महानता का निर्णय करना है और यह निर्णय करता हूं :-

एक कहूं तो है नहीं, दूजा कहुं तो गार।
जैसा है वैसा रहे. कहे कबीर बिचार ॥

सूक्ष्म व स्थूल गुरु की महानता का निर्णय नहीं किया जा सकता है दोनों जैसे है वैसे रहें।

वह मनुष्य नीच प्रकृति का है जो दीन व अधीन बनकर अपना मनतव्य पूरा कर लेता है और उसके बाद कृतघ्न हो जाता है ऐसे मनुष्य फूलते दिखाई दे सकते हैं मगर फलते दिखाई नहीं देते।

गुरु की दया से जो मनुष्य अपने अन्तर में प्रवेश करके स्वयं का सक्षातकार कर लेता है और स्वयं में स्थित हो जाता है उसमें माया की वासना नहीं रहती वह मुक्त हो जाता है। यह वासना ही है। जो मनुष्य को आवागवन के चक्कर में फंसाये रखती है।

शब्द से प्रकाश पैदा होता है कहने को यह दो हैं मगर वास्तव में दोनों एक ही हैं जब शब्द होगा तो प्रकाश का होना भी अनिवार्य है यही जीवन का आधार है। जब कोई शब्द व प्रकाश में प्रवेश कर जाता है तो उसके देह, मन व आत्मा के बोधभान समाप्त हो जाते हैं यही ऊपर व नीचे समानता बनाए रखता है। ऐसा व्यक्ति स्वाभावलम्बी होता है वह किसी का आश्रित नहीं रह जाता। वह आनन्दमय हो जाता है और उससे स्वभावतः दूसरों कोभी खुशी व आनन्द प्राप्त होती है जैसे सर्द वगर्म हवा से मनुष्य को सर्दी व गर्मी का भान होता है। उसकी बुद्धि निर्मल व दूरदर्शी हो जाती है।वह दूसरों का पथ प्रदर्शक बन जाता है। उसको किसी से द्वेष, ईर्ष्या व मत्सर नहीं होता। वह सबसे प्रेम करता है और सब को अपने जैसा समझता है। हजूर महाराज ने फरमाया है शब्द रस पियो और दो बांट। यहां इसका अर्थ यह है कि अपने अन्तर में शब्द व प्रकाश पैदा करके स्वयं आनन्दमय जीवन व्यतीत करो और दूसरों को भी आनन्द पहुंचावो।

सुरत ही मन मण्डल में बुद्धि का कार्य करती है। चित्त के मण्डल में ज्ञान व अनुभव का कार्य करती है। आत्मा के मंडल में आनन्द लेती है और इसके परे के मण्डल में निरत होकर अकह, अपार व अगाध का भान करती है। यह बुद्धि के मण्डल से निकल कर ज्ञान व अनुभव के मण्डल में जाती है। अनुभव के मण्डल से निकल कर शब्द व प्रकाश के मण्डल में जाती है। शब्द व प्रकाश के मण्डल से निकलकर निरत बनकर स्वयं का भान करके स्वयं को भी भूल जाती है। मनुष्य जब स्वयं तथा शब्द व प्रकाश के नीचे रहता है वह सकाम रहता है उसमें अहंकार रहता है, अपने कार्य में लंटप होकर दुख व सुख का भान करता है।

अलख वह स्थान या मंडल है जहां कोई रूप रंग सुख दुख देह मन व आत्मा का बोधभान नहीं कर सकता यानि उसको नहीं रह जाता वहां केवल अपने स्व का आकर्षण रहता है। मनुष्य

स्वयं में पहुंचकर उसके समझने और समझाने के फेर में पढ़ जाता है। जितना ही उसको समझने का प्रयत्न करता है उतनी ही समझने की उसकी शक्ति छिन्न-भिन्न होती चलीजाती है चलते २ अगम में आता है जहां उसकी शक्ति समाप्त हो जाती है।

कबीर साहिब ने कहा है। हुआ प्रकाश आस मिटी दूजी उगिया निर्मल नूर, इस निर्मल नूर का अर्थ सच्चा ज्ञान है।

स्वामी जी ने कहा है भक्ति चन्द्रमा सूरज ज्ञान दोनों गये छिपाई अलख में भक्ति व ज्ञान दोनों समाप्त हो जाते हैं।

सुरत की शक्ति जब तक मन के मण्डल में कार्य करती है और हर्ष व शोक का भान करती है, तब तक वह मन कहलाती है जब मन के मण्डल से निकलकर शब्द व प्रकाश यानि आत्मा के मण्डल में प्रवेश कर जाती है तो सुरत कहलाती है वहां हर्ष शोक को छोड़कर आनन्द का भान करता है, जब शब्द व प्रकाश के मण्डल को छोड़ कर परमात्मा के मण्डल में प्रवेश करती है तब निरत कहलाती है और हर्ष शोक व आनन्द को छोड़ कर शान्ति का भान करती है। मन के मण्डल में वह जीव है और आवागमन के बन्धन में हैजब मन के मण्डल को छोड़ देती हैं आवागमन से रहित हो जाती है इसको जीवनमुक्त अवस्था कहते हैं। चूंकि शब्द व प्रकाश रचना करता है रचना में आनन्द तो अवश्य है मगर शान्ति नहीं है क्योंकि यहां गति है वहां खतरा से खाली नहीं है इसलिये शब्द व प्रकाश को छोड़कर अशब्द व अप्रकाश गति में जाने पर ही आदर्श की प्राप्ती होती हैं राधास्वामी मत या संतमत मन के मंडल को छोड़ने और शब्द व प्रकाश के मण्डल में प्रवेश करने पर आरम्भ होता है। संतमत को छोड़कर और जो दूसरे मत हैं वह मन के मण्डल के हैं जहां हर्ष शोक कौर जीवन मरन लगा रहता है और काल (समय) का राज है इसी वजह से और सब मत मनमत या कालमत कहलाते हैं मन की भक्ति में कहना

सुनना, समझना और बूझना है, सुरत की भक्ति में यह बातें नहीं हैं उसमें आनन्द तथा स्वयं का भान रहता है। बिना पूर्ण गुरु की दया के किसी को सुरत की भक्ति प्राप्त नहीं हो सकती है। गुरु की दया से जब देह व मन के बन्धन या संस्कार समाप्त हो जाते हैं और आत्मा में प्रवेश करने के संस्कार जाग उठते हैं तब ज्ञान होने लगता है कि देह का मंडल कहां है, मन का मण्डल कहां है, आत्मा का मण्डल कहां है सुरत क्या वस्तू है, कैसे हर्ष, शोक भोगती है, कैसे आनन्द प्राप्त करती है कैसे आनन्द, को छोड़कर व निरत बनकर शान्ति प्राप्त करती है।

एक दिन शाम को मैं अपने निवासस्थान की वाटिका में एकान्त में बैठा हुआ मनोरंजन कर रहा था कि अचानक दो व्यक्ति आ पहुंचे और नमस्कार कर के बैठ गये, मैंने कहा अच्छे आये। मेरा स्वाभाव न तो स्वयं बेकार रहने का है और न दूसरों को बेकार बैठा देखना पसन्द करता हूं, पूछा कैसे आये, कहा अध्यात्मिक विषय पर कुछ प्रश्न ले कर आये हैं। कहा बड़ी खुशी की बात है कुछ तो ले आये हो। मेरा ऐसा अनुमान है कि प्रत्येक कार्य प्रत्येक जगह प्रभावित नहीं होता। मैं उठ खड़ा हुआ और उनको लिये हुये अपने अभ्यास करने के स्थान पर आया जहां दाता दयाल व परम दयाल के फोटो विराजमान हैं। स्वयं बैठकर उनको बैठने का संकेत किया। पूछा क्या प्रश्न है? कहा, जहां शब्द नहां है वहां क्या है व शब्द से रचना कैसे होती है? यह सुनकर हमारी दृष्टि दातादयाल की ओर ऊपर आकृषित हुई तो छत से लगा हुआ बिजली का पंखा दृष्टि गोचर हुआ उसके स्विच को दबाया तो शब्द प्रगठ हो गया। पंखा चलने लगा हवा बहने लगी, तरावट आने लगी कमरे के सामान इधर-उधर उड़ने लगे थोड़ी देर बाद स्विच उठा दिया, पहिले जैसे ज्यों का त्यों हो गया। पूछा समझ गये? कहा कुछ समझने जैसा जान पड़ता है कह नहीं सकते कि क्या समझा है। कृपया इसकी व्याख्या कर देवे। कहा भाई समझने के लिये अभ्यास व संस्कार की जरूरत है, मगर मैं

अपने तौर पर कह देता हूं स्वामी ने कहा है, शब्द गुप्त तब रहा अनाम, शब्द प्रगट तब धरिया नाम। तुम यह नहीं कह सकते कि स्विच दबाने के पहिले शब्द नहीं था अगर शब्द नहीं होता तो स्विच दबाने पर शब्द प्रगट नहीं होता और शब्द प्रगट नहीं होता तो पंखा नहीं चलता इत्यादि। शब्द बराबर था मगर वह अशब्द गति में था स्विच दबाने की देर थी शब्द प्रगट हो गया और स्वभाविक रचना करने लगा. इसी प्रकार तुम्हारे अन्दर भी शब्द है मगर अशब्द गति में है उसको गति में लाने के वास्ते ऐसे गुरु की खोज करो जो स्वयं शब्द स्वरूप हो उसका आदर सतकार करो ताकि तुम्हारे अन्तर के शब्द को प्रगट करने का तुम में संस्कार व अधिकार हो जावे, तब तुम अपने अन्तर के शब्द के स्विच को दबाकर अपने अन्तर में शब्द प्रगट कर लोगे कर्ता यानी रचना करने वाला बन जाओगे। जब ऐसा गुरु तुम्हारे अधिकार व संस्कार को उस स्विच के दबाने को देखेगा तुमको यह भेद बताकर शब्द प्रगट कर देगा। इस पर बहुत कुछ कहा जा सकता है मगर जितना ही कहा जावेगा उतना ही उलझन पैदा होती जावेगी यह सैन बैन की बात है जो समझ गया वह समझ गया जो नहीं समझा वह लाख सर पटका करे नहीं समझेगा। इन सब बातों के होते हुये भी मालिक की दया जरूरी है जिस पर दया आदि कर्ता की सो यह न्यामत पाय इसके बाद हम लोग मौन हो गये।

दूसरे व्यक्ति से नहीं रहा गया। वह पूछ बैठा असत्त से सत्त कैसे प्रगट हुआ, मैंने प्रकाश के स्विच को दबाया कमरा प्रकाशमय हो गया। फिर स्विच उठा दिया ज्यों का त्यों हो गया पूछा समझे कहा कुछ समझे, कहा समझ गये तो क्या कहना है नहीं समझे तो गुरु की दया प्राप्त करो, अब जाओ मालिक की दया का भरोसा रखो।

कुछ करनी कुछ कर्म गति, कुछ पूर्बला लेख।
देखो भाग कबीर का, लख से भया अलेख॥

जन, ज़मीन वज़र तथा कोई वस्तु जो शान्ति भाव से प्राप्त की जाती है वह शान्ति देते वाली व देर तक रहने वाली और बर्कत वाली होती है और जो वस्तु अशान्ति से पैदा की जाती है वह अशान्ति देने वाली वो जल्द मिटने वाली होती है। साधु के पास धन शान्ति पूर्वक आता है वह शान्त रहता है डाकू के पास धन अशान्ति से आता है वह अशान्त रहता है। धन दोनों को अपने प्रारब्ध के अनुसार मिलना अनिवार्य है, इस समय जो पार्टी वोट लेकर पद ग्रहण करती है इसमें अशान्ति का भाव रहता है अतः कोई भी पार्टी सफल हो देश में शान्ति नहीं ला सकती और न ज़्यादा दिनों टिक सकती है तथा देश को लाभ पहुंचा सकती है।

प्रत्येक वयक्ति में शब्द व प्रकाश का होना अनिवार्य है, मगर इस की प्राप्ति बिना मन के मण्डल के ऊपर गये नहीं हो सकती है, क्यों कि उसका मण्डल मन के मंडल के ऊपर है, मन के मण्डल में काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार हैं मन के मण्डल में यह सुरत को फंसाये रखते हैं ओर शब्द व प्रकाश के मण्डल में जाने से सुरत को अपनी ओर खींचे रहते हैं। मनुष्य माया जाल में फंसा रहता है। गुरु की दया से मनुष्य जब इनको छोड़कर मन के मंडल से शब्द व प्रकाश के मण्डल में जाता है उसको मा । का रूप मालूम हो जाता हैउसको वैराग पैदा हो जाता है उसको मालूम हो जाता है कि माया बांझ स्त्री है इससे कितना ही कोई भोग विलास करे बच्चा पैदा नहीं कर सकती, मैं इसके खेल को समझता व देखता हूं कि यह कैसे नाच नचाती है जो कोई मन के मण्डल से निकल जाता है वह माया ही को सौ २ नाच नचाता है। मन के मण्डल में माया मनुष्य को फांसे रहती है शब्द व प्रकाश के मण्डल में मनुष्य ही माया को फांसे रहता है।

आत्मज्ञान सूक्ष्म विषय है, सूक्ष्म बात समझने के लिये सुक्ष्म बुद्धि चाहिए, सूक्ष्म बुद्धि बिना एकाग्रचित के प्राप्त नहीं होती अभ्यास से एकाग्रता प्राप्त होकर ही सूक्ष्मता प्राप्त होती है उस सूक्ष्मता को अभ्यास ही थिर रखता है अतः आत्म ज्ञान हेतु गुरु के

आदेशानुसार अभ्यास करना चाहिए इससे पहले दुनियां बन लेती है बाद को दीन बन जाता हैं।

शब्द व प्रकाश भी माया से रहित नहीं है. भेद केवल स्थूल व सूक्ष्म का है जब इसकी धार मन के मण्डल की ओर होती है तो स्थूल माया प्रगट होती है और जब इसकी धार परमात्मा की ओर होती है तो सूक्ष्म माया विनस कर सतगुरु प्रगट कर देती है जो आदर्श प्राप्त करा देता है।

शब्द व प्रकाश में प्रवेश करने के लिये स्वास्थ्य व ब्रह्मचर्य का होना जरूरी है जब मनुष्य में शब्द व प्रकाश पैदा हो जावेगा तब स्वयं इनकी स्वस्थता व ब्रह्मचर्यपना बनी रहेगी जो शब्द व प्रकाश को स्वाधीन रख सकेगा।

शब्द व प्रकाश स्वयं या चेतन का एक बुलबुला है। सुरत आनन्द का अनुभव करती है और उसको भोगती है। निरत शान्ति का अनुभव करती है और उसको भोगती है। आनन्द में गति है स्थाई नहीं है। शान्ति में अवगति है और स्थाई है।

मैं न सत्त हूं न असत्त हूं मैं न सच हूं न झूठ हूं मैं दोनों से परे हूं कोई हमारी बात सच माने तो मुझे कोई खुशी नहीं है कोई झूठ माने तो दुःख नहीं है मैं सुख दुःख से परे रहता हूं मैं क्या हूं स्वयं नहीं जानता दूसरे लोग अपनी बुद्धि के अनुसार मुझे सच या झूठ जो समझते हैं वह ठीक है।

❋

राधास्वामी

दाता दयाल के संकेत

मैं पहिले पहिल मई सन १९२० के अन्त में करीब १ बजे दिन को दाता दयाल के दर्शन को तीन प्रश्न लेकर गया। अपने को दीन हीन और उनको सर्व समर्थ समझ कर दूर ही से धरती छु कर नमस्कार किया। वह क्या नाम है? मैं कुबेर, वह मुझको सर से पैर तक तीव्र दृष्टि से देखते हुये बोले ओ हो? तुम कुबेर हो। बड़ा सुन्दर नाम पाया है, मैं सहम गया। सोचने लगा मैं कुबेर का मतलब दीन-हीन समझता हूं और यह कुबेर का मतलब अपने जैसा बड़ा समझते हैं जो जैसा होता है दूसरे को भी वैसा ही समझता है। वह बोले कैसे आये? मैं बोला दर्शन के लिये, वह बोले ठीक है मगर कुछ पूछना है? यह ऐसे स्वर में कहा मानो हमारे प्रश्नों को वह भांप रहे हैं। मैंने सोचा यह सत्त पुरुष हैं हेर-फेर की बात ठीक नहीं। अपने तीनों प्रश्न उनसे कह दिए। वह-बड़े अच्छे प्रश्न हैं। शाम को सतसंग में इन का उत्तर दूंगा। तुम भूखे हो चलो खाना खिलावें। मैं चकित रह गया कि इन को कैसे मालूम हो गया कि मैं भूखा हूं। मुझको यह जानते नहीं और हम से इनका ऐसा व्यवहार हो रहा है मानो हम को बहुत दिनों से जानते हैं। अपने साथ भोजनालय में लाये और प्रेम पुर्वक भोजन कराया। मैं उन से आकर्षित हो गया। उन के रहन-सहन-चाल ढाल बात चीत को बड़ी तीव्र दृष्टी से देखने लगा और सोचने लगा कि जो गुण इन में हैं उस में से लेश मात्र भी मुझ में आ जाता तो हमारा काम बन जाता। इसके बाद मैं सोचने लगा कि कोई धनी आदमी दूसरे को अपने जैसा धनी होने देना नहीं चाहता। कोई बुद्धिमान आदमी दूसरे को अपने जैसा बुद्धिमान देखना पसन्द नहीं

करता कि क्योंकि उसको भय हो जाता है कि उसका महत्व नहीं रहेगा। यह क्यों पसन्द करेंगे कि मैं इनका गुण ग्रहण कर सकूं. इस के इलावा इन से इस बात के हेतू मुझको क्या अधिकार है? मैं न धनी हूं और न बुद्धिमान हूं मेरा प्रभाव इन पर क्या पड़ेगा? यह बहुत बड़े हैं मैं बहुत छोटा हूं इनके और हमारे सम्बन्ध का कोई प्रश्न नहीं है। मुमकिन है कि अगर हमारे अभिप्राय को यह भांप जावें. तो मुझको अपने स्मपर्ग से वनचित रखें। मेरी दशा उस लड़के के समान हो गई जो दुकान पर कोई सुन्दर वस्तु देख कर आर्कषित हो जाता है और मोल लेना चाहता है, मगर उसके पास पैसा नहीं है। वह उसको टकटकी बांध देखता रहता है और दुकानदार उसको देखने से रोक नहीं सकता, अत: लड़के के आनन्द में कोई वाधा नहीं पड़ती। सोचा और न सही जब तक इन के साथ रहूंगा आनन्द मिलता रहेगा। अत: इनके साथ रहने का यही उपाय है कि इनकी सेवाटहल दिल व जान से करता रहूं क्या अशचर्य कि यह कभी प्रसन्न होकर दया कर दें। शाम को सतसंग में जब उनका दर्शन किया तो मुझको ऐसा मालूम हुआ कि मैं ईश्वर को देख रहा हूं और मैं अपने प्रश्नों का उत्तर पा गया। दाता दयाल ने मुझे अपने पास वैठाया और कहा कि अपने प्रश्नों को बताओ मैंने कहा (१) ईश्वर क्या है? (२) उसकी प्राप्ति कैसे होती है? (३) मुझको क्या करना चाहिये? ईश्वर क्या है और उसकी प्राप्ति कैसे होती है इस विषय पर उन्होंने बहुत कुछ कहा और संकेत में कहा कि तुम अभ्यास करो। मेरी बुद्धि उस समय विकास में नहीं आई थी। स्पष्ट रूप में जो कुछ कहा वह नहीं समझ सका। मगर संकेत में जो कहा उसको समझ गया। सोचने लगा कि क्या मैं इनके संपर्क में रहने व अभ्यास सिखने का अधिकारी हूं? झुट मूठ खून लगाकर शहीद बनना ठीक नहीं है, यह विचार समाप्त हो रहे थे कि वह बोल उठे, 'झूठा खेले सांचा होय। सांचा खेले विर्ला कोय' यह सुन कर मैं खुश हो गया। सोचा कि हम झूठा ही खेल खेलेंगे, अगर मैदान

न.ीं तो क्या परवाह। मैं अभ्यास करूगा

दाता दयाल ने अभ्यास करने का संस्कार बिना कहे मुझ में भर दिया और मैं अभ्यास करने लगा। मैं नहीं समझ सका कि मुझको अभ्यास करना कैसे आ गया ? जब कभी मुझको यह भ्रम होता था कि हमारे अभ्यास करने का ढंग कहीं गलत तो नहीं है तो यह विचार तुरन्त दब जाता था। दिल में कहता था कि जब दाता दयाल से मिलूंगा तो पूछ लूंगा। दातादयाल ने मुझको संकेत अधिकारी समझा। अतः उन्होंने हमसे एक बात स्वार्थ वो एक बात परमार्थ के सिवाय, कोई बात कभी स्पष्ट नहीं कहां और न हमने कोई बात स्वार्थ या परमार्थ की उनसे कभी पूछी। आप यह न समझे कि हम में कभी कोई भावना प्रश्न की नहीं पैदा हुई। अपनी भावना की तीव्र इच्छा जब कभी मैं लेकर जाता था वह बिना कहे पूरी हो जाती थी और दोनों पक्ष प्रश्न व उत्तर से वंचित रहते थे। दातादयाल ने स्वार्थ की बात स्पष्ट रूप से बलिया में मकान बनाने की कही थी। जिसको उन्होंने अपने जीवन काल ही में बनवा दिया। प्रमार्थ की जो बात कही उस को सूक्षम रूप में बहुत कुछ सफलता प्राप्त किया मगर सष्ट रूप में उसको अभी नहीं प्रगट कर सका। उनके संकेत को जहां तक समझा वहां तक किया जो नहीं समझ सका वह नहीं कर सका। अपना कोई दोष नहीं समझता।

सतसंगी भाइयो ने मुझ से कहा कि तुम दातादयाल से नाम ले लो। मैंने इसके हेतू दाता दयाल से कहा तो उन्होंने कहा कि कल सुबह तुम को नाम दान देंगे। जब नाम दान दिया तो जो भर्म हम में अभ्यास के हेतू था वह दूर हो गया। मैंने पूछा ध्यान किसका किया जावे ? उन्होंने कहा राधास्वामीं दयाल का। मैं बोला मुझको तो आप ही के ध्यान में आनन्द मिलता है मैं राधास्वामी को नहीं जानता।वह बोले अच्छा मेरा ही ध्यान किया करो। मैंने पूछा नहा धोकर अभ्यास करना चाहिये। उन्होंने कहा नहीं-नामले ने में आकर्षण की जुरुरत है। शौघ के समय अभ्यास ओर भी ठीक होता है।

सोवत जागत खड़े उताने, कहें कबीर हम वहीं ठिकाने।

जैसे जलते हुये दीपक से दूसरा दीपक जल उठता है वैसे ही फकीर का संस्कार लेकर कोई फकीर बन जाता है। खरबूजे को देखकर खरबूज़ा रंग पकड़ता है। तुम को *ay ay,nay nay* हां हां, नहीं नहीं की शिक्षा देता हूं जो *christ* इसा मसीह की शिक्षा है यह शब्द बिजली की तरह हम में प्रवेश कर गये। कुछ समझा तो जरूर मगर क्या समझा कह नहीं सकता था इसको अब समझा है कि जिवन व्यतीत करने के लिये माया जरूरी है। इस से दिल बहला लो मगर फसो मत-इस में तैरो मगर डूब मत जावो।

दातादयाल तुम्हारे पास शब्द योग व राधास्वामी योग की किताब होगी उसे पढ़ लेना। मैंने इन किताबों को पढ़ा था। मुझ को विश्वास हो गया कि वह हमारी सब बातों को ज़ानते हैं। दातादयाल ने हम को यह शब्द लिखकर दिया।

(१) सतमन, सतधन, सतरतन, सब की चीत है खान।
यह कुवेर का कोष है, वह है धनी प्रमान॥

(२) आस्तिक भाव कुवेर है, सत सत्ता का धन।
नास्तिक भाव जो हिय बसे, सो दरिद्र निर्धन॥

(३) जब तू गुरु का हो गया, और की अब क्या आस।
तू धन वान कुबेर है, धन तेरा विश्वास॥

(४) धनवनता कोई नहीं, निर्धन है सब लोग।
धन वनता तू कुबेर है, साध राधास्वामी जोग॥

ईश्वर के जानने और मिलने के हमारे दो कारण थे। एक तो हमारा पहिला विवाह हमारी इच्छा के प्रतिकुल हमारे घर वालो ने धन के लोभ में पड़ कर हम से अधिक आयु की लड़की से कर दिया था। दुसरा यह कि हम को बलिया से गाजीपूर पढ़ने को भेज दिया था और वहां हमारे रहने सहने वा खाने पीने का कोई उचित प्रवन्ध नहीं किया था। मैं घोर संकट में पड़ गया था। दाता दयाल के दर्शन ने जादू का काम किया। मुझको गाजीपूर से बलिया पढ़ने का अवसर प्राप्त हो गया। मगर यहां

आने पर में क्षय रोग में ग्रसित हो गया दवा दारु का कोई प्रबन्ध नहीं था। दाता दयाल याद आये, किसी तरह गिरते पड़ते उनके पास पहुंचा। अगस्त का महिना था दो बजे दिन का समय था पानी रिम झीम वरस रहा था। वह नाले में पौधा लगा रहे थे। मुझको देखते ही बोल उठे तुम आ गये (मानो हमारी प्रतिक्षा कर रहे थे) बोले अच्छा किया। हम को कुटी में लाये तब पानी मुसलाधार बरसने लगा। भीगते हुवे बाहर गये तुलसी के पत्ते तोड़ लाये कहा लो खा जावो अच्छे हो जावोगे। इसके बाद कहा। देखो कोई दवा मत खाना। अगर तुमको अच्छा होना है तो कोई शक्ति मार नहीं सकती और अगर मरना है तो कोई शक्ति बचा नहीं सकती। अगर तुमसे कोई कहे कि यह वस्तू मत खावो तो तुम उसको जरूर खाना। अगर कोई कहे कि मत नहावो तो जरूर नहाना। जो तुम्हारे जी में आवे सो खावो। जैसे जी में आवे वैसे रहो। अतः मैं संयम वो पथ्य से वंचित हो गया। दाता दयाल ने एक सतसंगो भाई से कहा कि इसको धाम में लेजाकर चारपाई व बिस्तरे का प्रबन्ध करवा दो। उसने कहा महाराज इसको छूत का रोग है जो इसके स्मपर्ग में रहेगा उसको भी यह रोग हो जावेगा। दाता दयाल स्वयं हमको लिये हुवे धाम में अपनी कुटी से आये और मेरा प्रबन्ध करके कुटी में चले गये। हमारे पास कोई आना पसन्द नहीं करता था। दाता दयाल सुबह व शाम हमको देखने व भोजन कराने आते। उस दिन से दाता दयाल कुटी बन्द करके एकान्त वास करने लगे। किसी से मिलना जुलना बन्द कर दिया। केवल शोच आदि के लिए बाहर निकलते। भोजनालय में प्रशाद बांटते और सतसंग कराते इसके अतिरिक्त वह बराबर समाधी में रहते। हमारी ब्रिमारी एक ही जैसी रहती थी वह न घटती थी और न बढ़ती थी। इससे मैं घबरा गया था। अब इसने जगह बदली और बढ़ने लगी हमको आराम मालुम होने लगा। सात दिन तक बढ़ती गई आठवें दिन से घटने लगी और पंदरह दिन में मैं बिलकुल ठीक हो गया। जब मैं अच्छा हो

गया दाता दयाल ने एकान्तवास छोड़ दिया। हम को प्रसाद के रूप में इतना अधिक भोजन खाने को देने लगे जिस को तीन चार आदमी खा सकते थे और कहते कि यह तुम्हारी दवा है। वह इतना स्वादिष्ट मालुम होता था कि मैं सब का सब खा जाता। खाने के बाद बड़ी कठिनाई से खड़ा हो सकता था। शाम का खाना मिलने के पहिले ही वह सब पच जाता और भूख खाना मिलने की प्रतीक्षा करने लगती। अच्छा होकर घर आने के पाच सात महिने बाद हमारे पहिली स्त्री का देहान्त हो गया। हमारे तीन ग्रह कट गये। मैं प्रसन्न रहने लगा।

एक बार मैं दातादयाल के पास बैठा हुआ सोच रहा था कि हमारा विवाह पतिव्रता स्त्री से होता तो ठीक था। दातादयाल कहने लगे कुबेर वह ज़माना लद गया जब लाल खां फाख्ता उड़ाते थे। अब पतिव्रता स्त्री का जुग बीत गया। इतने में एक सुन्दर मगर बीमार लड़की उनके दर्शन को आई जिस से मैं आकर्शित हो गया। वह कहने लगे देखो मैं चाहता था कि इसका विवाह तुम्हारे जैसे व्यक्ति से हो। मगर इस के माता पिता ने धन के लालच में इस का विवाह दूसरे से कर दिया। यह बिमार हो गई लोग हमारा कहना नहीं मानते तो क्या करूं। ठीक वैसे ही सुभाव वाली लड़की से दाता दयाल ने हमारा विवाह कराया। हमारे विवाह में आये और कहां *first wife is wife, second wife is friend and third wife is shrew* पहिली स्त्री, स्त्री है, दुसरी स्त्री मित्र है और तीसरी कर्कसा है- इस के साथ मित्रता का व्यवहार करना।

वह हमसे धनी और अच्छे घराने की थी। अपने कार्य में कुशल थी। हमारे दोषों की ओर उसकी दृष्टि कभी नहीं गई। कभी २ मैं भांपता था कि हमारे दोषों को समझती है मगर उनको दोष नहीं गिनती। जैसे हमारी माता हमारे अवगुणों को हमारे गुण समझती थी। अपने लिये कभी कोई बात नहीं कहा। जब मैं खाना खाता तो कुत्ते की भांति बैठे हुये हमारे प्रत्येक ग्रास को

देखती रहती थी। हमारे स्वास्थ का बराबर ध्यान रखती। अपने स्वास्थ का उसको इतना ध्यान नहीं था। हमारे विचारों को बिना कहे समझ जाती और उसी के अनूकूल काम करती। संकेत में बात करती। बिना हम को खाना खिलाये स्वयं नहीं खाती। और न हमारे सामने खाती। परन्तु अगर उसने कभी अपने हेतू कहा तो मैंने उसको सब छोड़ कर पूरा किया अपने जीवन में उसने दो ही बार हमसे ऐसा कहा। किसी के सामने हम से कोई बात नहीं करती और न किसी को लखने का अवसर देती थी कि हम लोग में क्या सम्बन्ध है। मरते समय अपने नियम के प्रतिकूल मुझ को बुलाया और अपने साथ बिठाया। घर की कौन वस्तू कहां है किस से क्या लेना देना है बतलाया। उसको देखने से हमको ऐसा मालूम होता था कि उसको इस बात का दुःख है कि उसके बाद हमारी कौन देख भाल करेगा मगर वह कहना नहीं चाहती। हमारे सर पर हाथ फेर कर लड़के की तरह चूमा और कहा कि अब मैं जाती हूं मैंने उसका पैर छूकर नमस्कार किया और पूछा हमको क्या कहती हो। उसने कहा लड़को को समभालियेगा और दम तोड़ दिया। मैं बच्चों की भाँति सिसक २ कर रोने लगा।

हाई स्कूल पास करने पर हमारी यह अभिलाषा हुई कि मैं वकालत (मुखतारी) पास करूं। मुखतारी का कोई स्कूल नहीं था। स्वयं पढ़कर परीक्षा देना होता था। हमारे पास न तो इस की पुस्तकें थी और न मोल लेने के लिये पैसा था। दातादयाल को याद किया। एक व्यक्ति ने इसकी कुल पुस्तक दे दी जब कि परीक्षा होने में छः मास रह गये थे। इलाहाबाद जब परीक्षा देने को जाना हुआ तो सोचा मैंने तो बहुत कम पढ़ा है क्या परीक्षा दूंगा। चलो रास्ते में दातादयाल का दर्शन करते चलें उनके दर्शन के प्रताप से पास हो जाऊंगा उनसे कुछ कहा नहीं दर्शन करते हुये इलाहाबाद गया। जो कछ शाम को पढ़ता वही सुबह परचे में आ जाता। जब नतीजा निकला तो मालूम हुआ कि बलिया जिले से ७८ आदमी परीक्षा दिये थे जिनमें कुल २ आदमी पास है बहुत

से लोग ५-६ साल से परिक्षा दे रहे थे मैंने सोचा मैं क्या पास हूंगा। मगर जब गजट देखा तो दो आदमीयों में से एक हमारा ही नाम था। याद आया कि दातादयाल के दर्शन का फल हैं इस प्रकार दातादयाल ने हमारा विवाह कराया। वकालत पास कराया और बलिया शहर में मकान बनवाया जिस का हाल आगे लिखा है।

एक दिन दातादयाल ने कहा और सब बात तो तुम में ठीक है मगर इच्छा शक्ति की प्रबलता की कमी है। मैं इसको समझ नहीं सका मगर सोचा कि यह कोई ऐसी वस्तू है जिसको वह देना चाहते हैं कहा आप के यहां भी आकर कमी रह गई तो कहां पूरी होगी। वह चुप रह गये। बात आई और गई। बाद में मुझको पता चला कि इच्छा शक्ति की प्रबलता क्या है और उन्होंने हमारी विचार शक्ति को प्रबल करके उसकी परीक्षा कैसे लीया।

कुछ दिनों बाद दातादयाल बलिया शहर आये मैंने उनसे अपने गांव के घर चलने की प्रार्थना की तो उन्होंने कहा कि तुम्हारे चाचा लोग तुम से द्वेश रखते हैं वह घर नष्ट हो जावेगा। तुम बलिया ही में मकान बनाओ और वह घर छोड़ दो। मैं वहां नहीं जाऊंगा। मैं बाल बच्चों को गांव से दर्शन हेतू बलिया लाया। जब हमारी स्त्री ने उनका चरर्ण स्पर्श किया तो उन्होंने राधास्वामी कहते हुये कहा तुम गांव से यहां आ गई अच्छा किया अब वहां मत जाना। यहीं रहो, कुबेर तुम्हारे लिये यहां मकान बना देगा। जो कोई उनके दर्शन हेतू आता उससे सब बात चीत समाप्त होने पर मेरा परिचय देते हुये कहते देखा कुबेर यहा मकान बनायेगा। जो कुछ सहायता तुम कर सकते हो अवश्य करना।

मई का महीना था। पुर्णिमा की चान्दनी रात थी मैं उनके पास ही सोया था। एक बजे के लग-भग मेरा हाथ पकड़ कर जगाते हुये कहा कुबेर चलो तुम्हारे मकान की भूमी दिखा दें। दक्षिन दिशा में भूमी खाली थी वह गली में थी उसको देखकर कहा

यह नहीं है । वहाँ से पुरब सड़क पर आये जो उत्तर दक्षिन की है। उत्तर की ओर बढ़े । सड़क से मिले हुये पछिम में दो मकान के बीच भूमी खाली थी । उसको देखकर प्रसन्न हुये कहा हां यही तुम्हारी भूमी है । पछिम ओर बढ़े और जहां तक वह थी वहां तक जाकर दखिन ओर गली से होते हुये वहां आये जहां सो रहे थे । प्रसन्न चित्त होकर खाट पर बैठ गये कहां भूमी तो मैंने तुम को दे दिया । रहा प्रश्न रुपये का वह भी तुम को मिल जायेगा । रुपया तो तुम को बरसेगा मकान सुन्दर बनाना धसुवावादी मकान मत बनाना । सूरजवेध व चन्द्रवेध का ध्यान रखना. सामने फूल पत्ती लगाना, मकान का बना हुआ कोई भाग किसी कारण मत तोड़ना, एक मता सद गता, वहु मता दुर्गता, मकान का नकशा किसी से मत पूछना। अपने अन्तर में प्रवेश करना, वहां तुमको नकशा मिल जायेगा । कोई झगड़ा पड़े तो घबराना नहीं ! तुम जीत जाओगे । जिस काम के आरम्भ में कोई झगड़ा नहीं पड़ता । उसमें जान नहीं आती । तुम नौजवान हो. जवाना व शमशेर व पीरां वराय । जवान शक्ति से और बूढ़े बुद्धि से काम लेते हैं । अब गांव के घर मत जाना । छः महीने के भीतर मकान बनाकर प्रवेश कर जाना । उनकी बातों को मैं शान्ति पूर्वक सुनता रहा । जब हमारे मन में यह प्रश्न उठता था कि क्या इस भूमी व धन पर इन को पूरा अधिकार है तो हमारी आत्मा कहती थी इनका वचन पथ्थर की लकीर है मिट नहीं सकता फिर अपनी ओर देखता और पूछता क्या मुझमें इतनी शक्ति है कि मैं इनके आज्ञा का पालन कर सकूंगा तो हमारी आत्मा कहती कि दातादयाल सब बातों को समझ कर ऐसा कहते हैं अगर मैं इन की आज्ञा का उल्झन करता हूं तो मैं दोषी बन जाऊंगा । हमारा और इनका साथ छूट जायेगा । मैंने मकान बनाना आरम्भ किया, लोग कहने लगे इनके मस्तक में दौष आ गया है मुझको नोटिस मिली कि इस भूमि पर मकान मत बनाओ बनावोगे तो मुकदमा दायर किया जायेगा मैंने इसकी ओर ध्यान नहीं दिया और मकान बनाता रहा । सबने हमारा साथ छोड़ दिया । घटाटोप अधियारी छा गई हवा जोर से

बहने लगी लहर आसमान छूने लगी नांव अब डूबी तब डूबी मैंने इसकी कोई परवाह नहीं की सोचा जब तक मैं विवश न हो जाऊंगा मकान का काम नहीं छोड़गा। छः महीने के अन्दर मकान बन गया मैंने ग्रह प्रवेश कर लिया। दातादयाल की आज्ञा का पालन हो गया मैं प्रसन्न था।

अब रहा फौजदारी का मुकदमा जिसकी नोटिस हमको उसी दिन मिल चुकी थी जिस दिन मैंने मकान की नींव रखी थी। उस मुकदमें में हमारे उपर वारण्ट जारी रहा। मगर मैं छिपा रहता था कि मकान बनने के बाद हाजिर होऊंगा। जिस दिन मैंने ग्रहप्रबेश किया मैं उस वारन्ट द्वारा गिरफ्तार हो गया। ४ बज रहे थे ऐसा प्रतीत हुआ कि रातको मैं हिरासत में रहूंगा। दातादयाल को याद किया पुलिस वालों ने मुझको उसी समय हाकिम के सामने पेश किया तो हाकिम ने हमारा मुचलिका लेकर मुझको फौरन रिहा कर दिया। इसके हेतू दातादयाल को पत्र लिखा। उसी पत्र पर उत्तर आया कि मकान तो रह जायेगा मगर तुम्हारी सजा होगी। कानून कहता था कि सजा होगी तो मकान नहीं रहेगा मकान रहेगा तो सजा नहीं होगी। मैं प्रसन्न था कि अगर मकान रह गया तो हमारी साजा का कोई मूल्य नहीं है। प्रथम न्यायालय से हमारी सजा हो गई और मकान भी गिराने का आदेश हुआ। अपील से मकान रह गया और मैं जुर्म से बरी हो गया। या तो प्रथम न्यायाल के आदेश पर सब लोग हमारी हसी उड़ाते थे या अपील के फैसले पर सब लोग हमको दूरदर्शी व बुद्धिमान समझने लगे और मेरा आदर व मान करने लगे। इसके बाद हमारे उपर दीवानी का मुकदमा दायर हुआ वह खारीज हुआ उसकी अपील हुई दावा उठा लिया दोबारा मुकदमा दाखिल हुआ फिर भी हमारे अनुकूल हुआ अन्त में ऐसी परिस्थिति पैदा हुई कि वादी को अपने खर्च से हमारा नाम उस भूमि पर दर्ज कराना पड़ा। इसकी कथा बड़ी रोचक है अगर विस्तार पूर्वक लिखी जाये तो पुस्तक का रूप धारण कर लेगी।

जब फौजदारी का मुकदमा समाप्त हुआ दातादयाल ठीक एक वर्ष बाद मई के महीने में बलिया आये मकान देख कर बहुत प्रसन्न हुये मगर पूछ बैठे कि मैंने कहा था कि गांव वाले मकान पर मत जाना और तुम चले गये। मैंने कहा मकान पूरा नहीं बन पाया था बरसात में एक बूंद भी पानी बाहर नहीं जाता था। रहने की कोई जगह नहीं थी घर के लोग चले गये तो मैं भी लाचार हो गया फिर कहा मांगो क्या मांगते हो मैंने कहा अभ्यास में एक बार मैं ऐसे मन्डप में प्रवेश कर गया था जहां यह संसार बिलकुल तुच्छ मालूम पड़ता था और मनुष्यों की दशा कुत्ते, बिल्ली से भी अधिक गिरी दीख पड़ती थी। मैं इस अवस्था में आनन्दमय था मुझको किसी वस्तू की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती थी। अगर प्रतीत होती भी थी तो वह वस्तू हमारे निकट ही दीख पड़ती थी। दाता दयाल ने कहा सांसारिक वासना के कारण तुम गिर गए। वह हुआ हुआ है सतसंग कराया करो तुम्हारे झण्डे के नीचे हजारों आदमी रहेंगे।

मैं सदैव चाहता था कि दातादयाल मुझसे प्रसन्न रहें अत: जो आज्ञा देते थे उसका हित चित्त से सतर्क होकर पालन करता था, तीन बार हमने उनको अपने ऊपर प्रसन्न हुआ देखा है।........ प्रथम बार—एक दिन दातादयाल ने मुझको अपनी कुटी के आंगन में चारों ओर क्यारी बनाने तथा फूल लगाने की आज्ञा दी, तीन ओर तो उन्होंने अपनी इच्छानुसार बता दिया मगर चौथी ओर को जब बारी आई तो बिना कुछ कहे हुए तथा मुझको पूछने का अवसर दिए ही समाधी में चले गए तीन ओर मैंने उनके आदेशनुसार क्यारी बनाई और फूल लगाए चौथी और उनका ध्यान करते हुए अपनी इच्छानुसार काम किया ज्योंही वह समाप्त हुआ दातादयाल समाधि से उठकर हमारे पास आ गए, पूछा यह किससे पूछ कर बनाया। मैंने कहा "आपसे" सुनकर बड़े प्रसन्न हुए"। मानों कोई बहुमूल्य वस्तू" पा गए। धीरे से कहा। हां अब हमारे विचार तुममें प्रवेश करने लगे। द्वितीय बार धाम पर दातादयाल का दर्शन करने गया, अभी दूर ही था कि दातादयाल यह

कहते हुए उठ खड़े हुए कि' कुबेर आ गया-कुबेर आ गया।" हमारा हाथ पकड़ा और कहा' "धर्मशाला बन रहा है चलो तुमको घुमा लाएं।" उसमें चारों ओर घूमाया कहा। अब ठीक हो गया, तुम्हारा पांव इसमें पड़ गया। मैं चकित रह गया, मैं समझ नहीं सका उनके प्रसन्नता का क्या रहस्य है।

तृतीय बार-एक समय दातादयाल ने दाढ़ी बनाने का छूड़ा हमको तेज करने को दिया," हमने बड़ी सावधानी से उसको तेज करके प्रस्तुत किया, उन्हों ने अंगुली से उसकी तेजी का पता लगाया. बड़े प्रसन्न हुए, कहने लगे।" बड़े होशियार हो. तुमने कैसे इतना तेज कर दिया। में उनकी इस प्रसन्नता के रहस्य को अब तक नहीं समझ सका।

कभी कभी दातादयाल बिना किसी कारण के हमारे ऊपर अप्रसन्न होकर डांट-डपट भी करते थे और उल्टा सीधा भी कहते थे एसा मालूम होता था कि हम से अपना सम्बन्ध तोड़ देंगे। लड़कपन में मैंने सुन रखा था कि "सन्तजन जिसको कुछ देना चाहते हैं ईसको बुरा भला कहते हैं।" मैं चुप मार जाता था। मानों उनकी बातों को सुन ही नहीं रहा हूं। थोड़ी देर बाद हम लोग ज्यों के त्यों हो जाते। मैं उनके प्रसन्न होने पर न कभी खुश हुआ और न अप्रसन्न होने पर कोई दुःख माना।

कभी दातादयाल एक ही समय अनेक कार्य करने का आदेश देते थे जिसका करना हमको कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव प्रतीन होता था ऐसी दशा में मैं विचलित नहीं होता था। मगर सुनी अनसुनी कर देता था, कभी यह सोचता था कि उनको स्वयम हों यह सोचना चाहिए कि इतना काम एक ही समय कैसे हो सकता है। फिर यह सोचता था कि दातादयाल कर सकते होंगे। मगर मैं नहीं कर सकता, मैं चुप मार जाता और वे मुझको देखते रह जाते थे।

एकवार दातादयाल और मैं गोपी गंज से धाम को तांगे पर आ रहे थे वह स्वारी और सामान से खचाखच भरा हुआ था

सामान के गिरने का भय जरूर था, मगर मैं उसको कुशलता पूर्वक सम्भाले हुए था। वह एक ही स्वर में कहने लगे सामान यहां रखो, वहां रखो, यह गिरा, वह गिरा, ऐसे बैठो, वैसे बैठो, मैंने उनकी बातों को ध्यान दिया तो वह तत्वहीन जान पड़ी, मैं चुप मार गया मानो सुन ही नहीं रहा हूं। जब धाम पहुंचे तो कहने लगे "तांगे पर तुमने हमारा कहना नहीं किया" मैंने कहा महाराज। "मैं इतना थक गया था कि हिल डुल नहीं सकता था।" वह चुप हो गए।

इसके बाद आम का प्रसाद बांटने लगे। सबको एक बार बांट कर पूछा "आम कैसा है" सबने कहा खट्टा है, हमने कहा हमारा मीठा है। दूसरी बार बांटने के बाद पूछा तो लोगों ने कहा खट्टा है, मैंने कहा हमारा मीठा है। कहने लगे खुदा, शक्करखोरे को शक्कर देता है।

साईं सबको देत है जाकी जैसी भाग, हसंहि मोती देत है, देत चकोरे आग।" यह भागशाली व्यक्ति है।

एक बार धाम में चोरी हो गई। वहां धरा ही क्या था ? तो भी चोर बर्तन-भान्डे और दातादयाल का सितार चुरा ले गए। सब लोगों को इसका खेद था। सतसंग में दातादयाल ने कहा चोर अगर धाम का सामान चुरा ले गए तो यह खुशी की बात है ना खुशी की नहीं। तुम लोगों को खुश होना चाहिए, सन्तों में सबका हिस्सा होना चाहिये। चोरों को भी सन्तों से लाभ होना चाहिये। चोर अमर धाम से अपना भाग ले गए तो धाम उनसे उतिॠण हो गया यह हर्ष की बात है ना कि शोक की।

राधास्वामी धाम लगभग चारों ओर नालों से घिरा हुआ है। वरखा ॠतु में आवागमन कठिन हो जाता है। दातादयाल ने उस पर पुल बनवा दिया। जिसको देखकर मैं सोचने लगा कि चोर वर्षा ॠतु में अब धाम में चले आवेगें। इसको दातादयाल भांप गये कहा देखो नाले पर पूल बन गया है लोग सुगमता पूर्वक अब धाम पर आ जा सकते हैं। मैंने कहा महाराज अब चोरों को

भी धाम में आने को सुगमता हो गई। उन्होंने उत्तर दिया ठीक कहते हो, मगर एक भी पूण्य आतमा व साधू इस पूल से होकर चला जायेगा तो सबका पाप धुल जायेगा।

दातादयाल ने एक सतसंगी भाई को कुछ काम करने को दिया जिसको उन्होंने कुशल पूर्वक पूरा २ नहीं किया और दातादयाल के समीप आकर बैठ गए।उन्होंने पूछा क्यों जी काम समाप्त हो गया? तो, सतसंगी भाई ने कहा कि कुछ बाकी रह गया है और नुक्तानचीनी करने लगे दातादयाल ने कहा मियाँ मैं जो काम किसी को करने को कहता हूं वह उसके हित्त के लिये कहता हूं, न कि अपने निजिस्वार्थ के लिये तुमने समझा कि मैं तुमको मजदूर समझ कर काम करा रहा हूं। मजदूर को मजदूरी मिलती है वह मालिक नहीं बनपाता अगर अपने को मालिक समझकर काम करते तो मालिक बन जाते।

मैं दातादयाल की आज्ञा का पालन बिना तर्क वितर्क के ज्यों का त्यों करता था। मगर दूसरों की देखा देखी एक बार मुझको भी तर्क वितर्क करने की इच्छा हुई। जब मैंने ऐसा किया तो उन्होंने बांसुरी जैसी सुरीली आवाज में कहा कि *Learn how to obey* आज्ञा पालन करना सिखो वह स्वर आज तक हमारे कानों में गुज रहा है। इसके बाद मैंने उनकी आज्ञा में कोई तर्क वितर्क नहीं दिया।

छत्त से एक विच्छू दातादयाल के चारपाई के समीप गिरा दाता दयाल ने उसको उठा कर फेंकने का आदेश दिया। जिसको मैंने हाथ से उठाकर फेंकने का प्रयास किया क्योंकि उनके आदेश को मैंने ऐसा ही समझा। इसको देखकर एक व्यक्ति ने चिमटे से उठाकर उसको फेंक दिया।

दातादयाल ने पेड़ की पत्ति तोडी और मुझसे पूछा अगर मैं इसकी सब्जी बनाउं तो तुम खाओगे या नहीं? मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि इसकी सब्जी बड़ी स्वादिष्ट होगी, मैंने कहा हां-हां अवश्य

खाऊंगा। एक सतसंगी बहन प्रायः अपना दुखड़ा रोया करती थी। दाता दयाल ने उसको ढारस देते हुए मुझको संकेत करके कहा *Most melonkly is the jaces of women on earth* स्त्री वर्ग संसार में बहुत उदासीन रहता है।

मुझको संकेत करते हुये दूसरों से कहते, तुमको तो फकीर होना ही था लम्बे हाथ पांव रिष्ट पुष्ट देह, चौड़ा ललाट और प्रकाशमय आंखें, मुझको न देखो काला कलौटा छोटा कद चेहरे पर चेचक की गहरी दाग। हजूर ने दया की हमारे सब दोष परिवर्तित होकर गुण हो गये। मैं जब हजूर महाराज के दरबार में गया तो लोगों ने मेरे प्रति उनसे पूछा उन्होंने मूंह खट्टा करके कहा "काल व कर्म का बहुत रिण है मगर चूंकि राधास्वामी दयाल की शरण में आया है सब काई धुल जावेगी।

हमारी आंखों को दातादयाल ने एक बार ध्यान पूर्वक देख कर भाई नन्दू सिंह से कहा। इस लड़के की आंखों को देखो, क्या आश्चार्य यह लड़का कभी खुल खेले। हम से कहा परोपकार किया करो। मैंने दिल में कहा मैं तो स्वयं आश्रीत हूं दूसरे की सहायता क्या कर सकता हूं। यह भाँप कर दातादयाल ने कहा अभी नहीं तुम्हारे जीवन काल में ऐसा समय आवेगा जब कि तुम को अपने खाने से दूसरे को खिलाने में अपने पहिनने से दूसरों को पहिनाने में और अपने प्रसन्न रहने से दूसरों को प्रसन्न रखने में अधिक आनन्द मिलेगा।

दातादयाल शाम को सैर करने निकले। सड़क के किनारे एक मिट्टी का चबूतरा था जिस पर फुल चड़ा देखकर नमस्कार किया। मैंने नमस्कार नहीं किया कहने लगे दुनियां जिसका आदर करती है उसका आदर करना चाहिये। यह उसका आदर करना नहीं बल्कि दुनियां का आदर करना है, भले ही जो समझते हो वह ठीक हो।

मैं एक बार दातादयाल के कानों को देख कर सोचने लगा कि यह इतने बड़े और गहिरे क्यों हैं। उन्होंने पूछा क्या देख रहे

हो? मैंने कहा सोच रहा हूं कि आप के कान इतने बड़े और गहिरे क्यों हैं ? उन्होंने उत्तर दिया कि शब्द के सुनते सुनते।

एक बार दातादयाल के सर में तेल मालिश कर रहा था तो उनकी पेशानी से चोटी तक गहरी नाली प्रतीत हुई। पूछा कि आप के सर में नाली क्यों पड़ी हुई है ? उत्तर दिया अभ्यास करते-करते।

हमारे उपर एक मुकद्दमा दायर हुआ। मैंने दातादयाल को लिखा। उसी पत्र के पीठ पर जवाब लिख भेजा कि मुकदमे से तो बच जावोगे मगर भविष्य में सचेत रहना। "मुकदमे से तो बच जाओगे" पढ़ कर प्रसन्न हो गया। "मगर भविष्य में सचेत रहना" इस पर ध्यान नहीं दिया। मुकदमा तो खारिज हो गया। जिस के कारण वादीगण ने हम को जान से मारने का प्रयास किया। जब चोट पड़ने लगी मैं मर जाने का बहाना करके भूमी पर लेट गया और बोलना बन्द कर दिया। लोग मुझको मरा समझ कर भयभीत होकर भाग गये। जब मैंने देखा कि वह दूर चले गये तो भाग निकला। लोगों ने हमारा पीछा किया तब तक मैं सुरक्षित स्थान पर पहुंच गया। जब दाता दयाल बलिया आये तो लोगों ने हमारी निन्दा करते हुये उनसे यह बात कही तो उन्होने हम से पूछा क्यों जी यह बात सत्य है ? मैंने कहा हां ठीक है। इस पर उन्होंने कहा मालिक की तुम पर बड़ी दया है निन्दा करने वाले उनका मुंह देखते रह गये।

एक सतसंगी भाई ने दातादयाल से कहा कि कुबेर बिना टिकट के रेल यात्रा करता है। इसको सतसंग से क्या लाभ होगा ? दातादयाल ने उत्तर दिया, इस का टिकट माफ है वह उनका मुंह देखता रह गया।

गर्मी की रात में सत संगत समाप्त होने पर कुटी से दूर मैं घाम में पत्थर के तखते पर सो रहा था। ११ बजे के करीब दाता दयाल कुटी से निकल कर हमारे पास आये पूछा कौन सो रहा है ?

मैंने नमस्कार किया वे बोले कुबेर, यहां मत सोवो और हमको दूसरी जगह सुलाकर चले गये। मैं प्रतिदिन वही सोता था उन्होंने कभी मना नहीं किया। सोचने लगा क्या बात है मगर कुछ समझ नहीं आई। सुबह जब दर्शन को गया तो देखा कि दाता दयाल को बिच्छु ने डंक मारा है और कराह रहे हैं लोगों ने कहा कि बिच्छू तुम को डंक मारने वाला था मगर दातादयाल ने तुमको बचाया और स्वयं डंक खाया। मैं सुनकर हैरान रह गया।

धाम से गंगा नदी करीब ३ मील दखिन है मैं उस में नहाने गया। जब वापस आया तो दातादयाल ने पूछा क्यों जी गंगा जल ले आये हो। मैंने कहा "नहीं" दातादयाल ने कहा खूब-खाली हाथ आये और कुछ ले नहीं आये। मनुष्य को चाहिए कि जहां कहीं जाय वहां से कुछ न कुछ ले आवे।

गंगा नदी का पानी बरसात में कभी २ नाले से होकर धाम तक आ जाता है एक बार हम व दातादयाल नाले में टहलते हुये कुछ दूर गये तो बाढ़ का पानी देखा दातादयाल देख कर बहुत खुश हुये और कहने लगे अगर बाढ़ का पानी धाम तक आ जाता तो मैं बहुत खुश होता। मैंने प्रार्थना किया कि महाराज धाम तक बाढ़ आवेगी तो बहुत से गांव डूब जायेगें। क्योंकि मुझे ऐसा मालूम था कि दाता दयाल बाढ़ को धाम तक खिच लावेगे। उन्होंने कहा ठीक कहते हो अपनी प्रसन्नता को दूसरे की प्रसन्नता के साथ रखनी चाहिये और बाढ़ का पानी धाम तक नहीं आया।

कांग्रेस से सम्बन्धित एक पुस्तक मैंने दाता दयाल को भेजा उस का कोई जवाब ही नहीं दिया। मैंने सोचा वह जवाब क्या दें। कई महिने बाद जब दर्शन को गया और नमस्कार किया। तो मुझको देखते ही दातादयाल ने मोतीलाल मैनेजर को बुलाया और कहा इसकी किताब वापस करो। वह किताब लाकर मुझ्झे दे गये तो देखा कि हमारी ही भेजी हुई है। मैं भयभीत था कि मुझ से कौन सी गलती हुई है? कहने लगे पहिले तुम पढ़ो। रोजी कमाने योग्य बनो। अपने घर में चिराग जलाकर तब मसजिद में

चिराग जलाओ । जो व्यक्ति स्वयं आश्रीत है वह दूसरे की सहायता क्या करेगा ? तबसे हमारा ध्यान राजनैतिक विषय से हट गया ।

एक सतसंगी भाई ने दातादयाल से कहा कि कुबेर कम बोलता है ? उन्होंने जवाब दिया यह वकील है इसके बात को फीस लगती है । इस की फीस दो तो देखो कैसे बोलता है ।

दातादयाल के दरबार में एक समय धनी व गरीब का चर्चा हो रहा था । लोगों ने कहा कि हमारे देश में मारवाडी सब से अधिक धनी हैं ।मैंने कहा मगर वह देखने में बड़े भद्दे मालुम होते हैं क्योंकि उनमें धन की मैल बैठ जाती है । दाता दयाल ने कहा ठीक है प्रत्येक वस्तु समता में रहे तो सुन्दर लगती है। अती का भलो न बोलना, अती का भला न चुप । अती का भला न बरसना, वो अती की भला न धूप ।

दशहरे की छुट्टी थी । सतसंगी भाई लोग धाम में भर गये थे भीड़ बड़ी थी । १२ बजे के समय धूप खुल कर पढ़ रही थी। दाता दयाल ने कहा कुबेर टोकरा उठावो चलो नाले में से कंकड चुन लावें । आगे २ दातादयाल पिछे मैं और सतसंगी भाई नाले में उतर पढ़े । सर पर कड़ी धूप, पांव तले नाले की गर्म रेत पड़ी कुछ लोग ५ गज की दूरी पर से, कुछ लोग दस गज की दूरी पर से और सब लोग १५ गज की दूरी पर से हम लोगों का साथ छोड़कर कुटी में चले गये । जब हम व दातादयाल रह गये तो मैंने कहा धूप कड़ी है आप कुटी में चले । मैं टोकरा भर कर कंकड लाता हूं दातादयाल ने कहा नहीं जो जिस काम के वास्ते कदम उठाया है उसको पूरा करके चलेंगे । हमारे साथ लगातार कंकड चुनते रहे जब टोकरा भर गया तब ही वापस आये ।

दातादयाल लाहौर की कड़ी सर्दी में नल के ठंडे पानी से सुबह नहाकर टहलने जाते । वहां इतनी सर्दी पड़ती है कि कोयले का भाव आटे के भाव का हो जाता है । लाहौर में उतनी ही कड़ी

धूप भी पड़ती है। गर्मी के दिनों में १२ बजे दिन को कमरा बन्द करके चारों ओर धुई जलाकर लेख लिखते थे। वह प्रायः एक तौलिया पहिनते थे और एक तौलिया बदन पर रखते थे। कहते थे कि अगर दूसरे देश के लोग उनको इस भेष में देख तो *Haltcvilised* आधा ही सभ्य समझेगे।

मुझे स्वयं भोजन बनाकर खाने से चिढ़ थी, जब कभी ऐसा अवसर आता तो उपवास कर जाता था। दातादयाल मुझको पेड़ पर चढ़ा कर लकड़ी व फल तोड़वाते। इस कार्य में मैं कुशल था और बड़ी खुशी से करता था। उनको चुनकर में भंडारे में लाता, दातादयाल दूसरों से आटा गुंधवाते और सब्जी कटवाते और स्वयं खाना बनाते। उनकी पकाई हुई रोटी व सब्जी इतनी मीठी होती थी जिसको हमने पहिले कभी नहीं खाया था और न बाद में खाया। हां एक बार एक साधु ने और कई दिन तक हमारे एक रिश्तेदार ने हम को खाना बनाकर खिलाया वह भी बहुत मीठा था। मगर दातादयाल जैसा नहीं था साधु ने जो भोजन बनाया था उसको उसने भी खाया मगर हमारा रिशतेदार केवल हम ही को खाना बनाता और स्वयं नहीं खाता था। इस भेद को मैं नहीं समझ सका। मैंने दातादयाल से कहा आप के हाथ का बना हुआ खाना यद्यपि उतना सुन्दर नहीं है परन्तू बड़ा स्वादिष्ट है उन्होंने कहा कि जब हम पहिले पहिल हजूर महाराज के भोजनालय में आगरा में गये तो जो रोटी हमारे सामने आई वह भद्दी मालूम पड़ी मगर जब जुबान पर रखा तो इतनी स्वादिष्ट लगी कि वह आज तक नहीं भूलती। इस प्रकार दाता दयाल ने खाना बनाने का संस्कार हमको दे दिया जो हमारी स्त्री के देहान्त पर काम करता हैं। जब तक कोई आदमी इस बात को ध्यान में रखते हुये खाना न बनावे कि वह हमारे खाने के वास्ते खाना बना रहा है तब तक वह खाना हमको इतना लाभदायक नहीं होता। अतः स्त्री के रहते हुये उसके हाथ का खाना

मुझ को सन्तुष्ट रखता था या उसके बाद स्वयं जो कुछ बनाकर खाता हूं वह हमारे वास्ते ठीक होता है ।

दातादयाल पहिले हम से कड़े से कड़ा काम लेते थे । एक मिनिट भी बेकार रहने का अवसर नहीं देते थे । मैंने सुन रखा था कि संतजन किसी को अपने साथ रखना पसन्द नहीं करते । मुझ को सन्देह होता था कि वह चाहते हैं कि घबरा कर यह हमारा साथ छोड़ देवे । अतः मैं बहुत सतर्कता से उन के आदेश का पालन करता था ताकि उनको यह कहने का अवसर न मिले कि तुम हमारे साथ मत रहो । मैं उनके आदेश का पालन उस समय तक करता था जब तक हमारी शक्ति हमको जवाब नहीं दे देती थी । जब शिथिल हो जाता था तो मालिक को याद कर के काम छोड़ देता था कि या मालिक अगर दातादयाल हमारे काम में कोई त्रूटी पावे तो इसका भागी तू होगा । मैं अधिक कार्य करने से ससमर्थ हूं । कुछ दिनों बाद उन्होंने अपना स्वभाव बदल दिया । हम से कोई काम करने को नहीं कहते थे अगर मैं स्वयं कोई उनका काम करना चाहता था तो मना कर देते थे । मुझे संदेह होने लगा कि कहीं वह हमसे ना खुश तो नहीं है । एक बार संकेत में मुझको यह कथा सुनाई ।

एक बादशाह था, उस का एक गुलाम था, जो बादशाह की बहुत प्रेम व सतकर्ता से सेवा करता था । बादशाह उससे बहुत प्रसन्न रहता था । एक आदमी ने गुलाम से कहा कि तू बादशाह की बहुत सेवा करता है वह तुझसे बहुत खुश रहता है, उससे क्यों नहीं कहता कि तुझको स्वतन्त्र कर देवे । गुलाम ने उत्तर दिया हमारा बादशाह आंख वाला है अन्धा नहीं, जो करता है ठीक करता है । बादशाह इस वार्ता लाप को सुन रहा था उसने गुलाम को बुलाया और कहा, ले आज से यह राज पाट तेरा है मैं अपनी गद्दी तुझ को सोंपता हूं और यहनज्म कहते । दिले शोरिदा कहता है न बोलूं यार से लेकिन जब आंखें चार होती हैं मरुउत आ ही जाती है ।

दातादयाल का नियम था कि जो आदमी उनसे मिलने आता उसको उसके अधिकार के अनुसार अपना संस्कार दे देते थे। हमारा परिवार उनके दर्शन को बलिया आया। मैंने कहा उनको नाम दे दिजिये तो उन्होंने कहा कि मानसिक रूप में प्रत्येक को उसके अधिकारानूसार नाम दान दे दिया है।

कभी-कभी दातादयाल सब कपड़ा लत्ता, बर्तनभांडा जो कुछ धाम में रहता था एक-एक करके सब का सब बांट देते और सब लोग हाथ पर ही लेकर खाना खाते। फिर शाम तक ज्यों का त्यों भर जाता था।

जब मैं वकालत पास करके काम करने लगा तो दातादयाल ने कहा, "देखो कचहरी से जो कुछ पावो वह सब घर लाकर शाम को खर्च दिया करो, फिर देखो सुबह को कहां से आता है।"

कभी कभी मुझ दातादयाल के प्रति ऐसा प्रतीत होता था कि यह जितने बड़ महापुरुष, सज्जन व इमानदार है उतने ही बड़े दुष्कर्मी, बेइमानी, व धूर्तपना करने की भी शक्ति रखते होगें। मगर उसका सदुपयोग आवश्यक काल में ही करते होगें। उसका दुरुपयोग नहीं कर सकते।

एक बार दातादयाल अपने बाग के हर एक पौधों को बड़ी गहरी दृष्टि से देखते हुए सैर कर रहें थे मैंने कहा "इन पौधों में क्या धरा हैं जो आप इतनी तीव्र दृष्टि से देख रहे हैं। उन्होंने उत्तर दिया। कि में अपनी आंखों द्वारा इनको सींच रहा हूं।

दातादयाल अपने बाग के जंगली फल तोड़ कर कुटी में रख छोड़ते थे, जब मैं समझता कि उनको इनकी जरूरत नहीं है तो उनको खा जाता था। एक बार उन्होंने मुझसे पूछा कि "फल रखा था क्या हुआ? मैंने कहा महाराज? फल ही तो था कोई खा गया होगा। उन्होंने पूछा? कौन खा गया! मैंने सोचा कि वह हमारे संकेत को भली भांति समझ रहें है परन्तु मुझसे स्पष्ट कहलवाना चाहते हैं। मैंने कहा, महाराज! हमको छोडकर

दूसरा यहां कौन रहता है मैं दूसरे को कैसे कहे सकता हूं।

जब मैं दातादयाल के सम्पर्क में आया तो उनके चाल ढ़ाल रहन-सहन, खान-पान को इस दृष्टि कोण से बड़ी तीव्रता से देखता रहता था कि दातादयाल सुबह ६ बजे उठकर शौच दि से निवृत्त होकर फुलवारी में टहलने जाते हैं। उसके बाद नहा धोकर लेख लिखते हैं जब तक भोजन का समय हो जाता है उसके बाद भोजनायलय में जाकर प्रसाद बांटते हैं तब १०-११ बज जाते हैं। फिर १२ से १बजे तक विश्राम करते हैं बाद को दो बजे से चार बजे तक लेख लिखते हैं, उसके बाद लोगों से मिलते जुलते और बात-चीत करते हैं। शाम को टहलने जाते हैं फिर नहा धोकर भोजनालय में आकर प्रसाद बांटते हैं उसके बाद छः बजे से १० बजे रात तक सतसंग कराते हैं और २ बजे तक विश्राम करके फिर लेख लिखना आरम्भ कर देते हैं जब तक सुवह हो जाती है और प्रतिदिन का यही व्यवहार है।" तो मैं इस परिणाम पर पहुंचा कि जिस विषय का अनुभव इन्होंने प्राप्त किया है उससे इनको आनन्द मिलता है। यह जो कुछ कष्ट उठाते हैं वह इसी बात के वास्ते है कि दूसरे ब्यक्ति भी इस विषय की प्राप्ती करके उन्हीं की तरह आनन्द उठाएं। यह प्रतीत करके मुझको इस बात की अभिलाषा हुई कि अगर मैं इस विषय में निपुण हो जाऊं तो उनके कार्य में यथा शक्ति सहायक होकर इनके दुःख को कम करूं। अतः मैंने उनसे कहा कि अगर मैं इस विषय में निपुण हो गया तो आपका साथ दूंगा। दाता दयाल ने ठंडी सांस भर कर कहा। कुबेर! कौन किसका साथ देता है? रहा प्रश्न इस विषय को निपुणता का तो पुस्तकीय ज्ञान पर मनुष्य २२, २४ वर्ष की आयु तक अधिकार पाता है यह तो हार्दिक ज्ञान है इसमें समय लगता है। परन्तु अगर किसी ब्यक्ति ने थोड़ा बहुत भी इस पर अधिकार प्राप्त कर लिया तो यह ऐसी विद्या है कि स्वयम् उसको आदर्श आपकी तरफ खींच लेता है।

दातादयाल की परिस्थिति देख कर मैं यह अनुभव करता

था कि उनका जीवन दुखमय बीता है तथा बीत रहा है अतः मैंने उनसे कहा कि "आप का जीवन भी दुःखमय व्यतीत हुआ' उन्होंने उत्तर दिया कि' हां तुम्हारा कहना ठीक है। मगर मुझ पर मालिक की दया भी बहुत थी।

एक व्यक्ति दातादयाल के वचनों को लिखता था और उसको पुस्तक का रूप देकर पैसा पैदा करता था। इस कारण वह उनके साथ बराबर यात्रा में रहता था। दातादयाल ने उसको सम्बोधित करते हुए "मुझसे कहा" इस व्यक्ति में रूपया कमाने की मैल बैठ गई है चाहता हूं कि किसी तरह इसकी मैल साफ हो जाये।

एक बार दशहरे की छुटी में मैं धाम पर गया, दशहरे के एक दिन पहले दातादयाल लेटे हुये थे और मैं उनके पैर दबा रहा था। अचानक उन्होंने अपनी आंख खोली और दुःखी होकर कहा कि इलाहावाद में हिन्दू मुस्लमानों में बलवा फेसाद हो गया है। इस बात को मैंने किसी से नहीं कहा। दुसरे दिन समाचार पत्रिका में यह बात प्रकाशित थी। पढ़कर लोगों ने मुझसे कहा तो मैंने कहा कि दातादथाल ने कल ही 2 बजे दिन को हमसे कह दिया था।

क्षयरोग से स्वस्थ होने के ३, ४ साल बाद हमारे मूंह से खून आने लगा, दवा की, अराम नहीं हुआ। धाम पर जाकर दातादयाल का प्रसाद खाया पचहत्तर प्रतिशत रोग जाता रहा। कि दातादयाल यात्रा में चले गये रोग हेतू मैंने दातादयाल से नहीं कहा था। मैं घर पर आया तो हैदराबाद के पते से उनको सूचित किया उन्होंने उत्तर दिया मैं यात्रा में हूं, पत्र पाते ही तुम धाम पर चले जाओ, आम की फसल आई हुई है वहां आम भूनकर सुबह शाम उसका शर्वत पीओ निः सन्देह अच्छे हो जावो गे, मैं यही दवा जानता हू और कोई दवा नहीं जानता। मैं धाम पर गया और उनके आदेशानुसार आम का शर्बत पिया एक सप्ताह में अच्छा होकर घर वापस चला आया।

दो बार दातादयाल ने हमसे ऐसी बात कही जो करना हमको असंभव प्रतीत होता था।

प्रथम बार—दातादयाल के साथ यात्रा में एक सतसंगी भाई के यहां गया। दातादयाल ने हमसे कहा कि चना, मटर, जौव, गेहू. मूंग, अरहर, बाजरा और चावल इत्याति का भुजा भुना लावों इस बात को मैंने सतसंगी भाई से कहा तो उन्होंने कहा मैं अभी इसका प्रबन्ध कर देता हूं। यह कह कर थोड़ी देर बाद जब मैं दातादयाल के पास गया तो उन्होंने पूछा क्यों जी भुजा भुना लाये मैंने कहा मकान मालिक से कह दिया हैं जल्दी ही आ जायेगा दातादयाल ने कहा वाह मैंने तुमको भुजा भुना लाने के लिये कहा था या दूसरे से कहने के लिये कहा था नौजवान आदमी हो दौड़कर स्वयं चले जाते और भुना लाते मैं चुप रह गया दिल में कहा कि मान लिया की मैं भुजों की दूकान पर चला जाता और एक प्रकार के अन्न का भुजा भुजवा लाता मगर अनेक प्रकार के अन्न तुरन्त कैसे पा सकता था?

द्वितीय बार—धाम पर मोर पालने का प्रसंग उठा मैंने कहा इसका प्रबन्ध कर दूंगा। दातादयाल ने कहा प्रबन्ध क्या करोगे? यहा से थोड़ी दूर पर जंगीगंज के बन में मोर रहते हैं वहाँ से पकड़ लाते यह बात हमारे हेतू असम्भव नहीं थी मगर कठिन जरूर थी।

दातादयाल ने जब हमको वलिया में मकान बनाने का आदेश दिया तो मैं चिन्ता ग्रसित हो गया, सोचने लगा कि अगर मकान नहीं बनाना है तो दातादयाल की बात झूठ हो जाती हैं अतः मकान बनाना आवश्यक है जब इस ओर ध्यान जाता था कि न तो हमारे पास पैसा है और न भूमि है तो बुद्धि चकित हो जाती थी खाना, पीना, नहाना, धोना भूल गया दातादयाल ने एक कागज के टुकड़े पर राधास्वामी लिखा और उसको देकर मुझको कहा पढ़ो क्या लिखा है? मैं उसको देखता था समझता था

मगर कह नहीं सकता था तो दातादयाल ने कहा छोड़ो तुम नहीं पढ़ सकते मैं बहुत लज्जित हुआ मगर बे-बस था।

हमको ऐसा प्रतीत होता है कि सन्तजन बुद्धि पर दबाव डाले बिना स्वभावतः कोई बात कहते हैं उनको स्वयं नहीं मालूम होता कि वह क्या कह रहे हैं और क्यों कह रहे हैं। दातादयाल एक आदमी से कह रहे थे कि अंग्रेजों का स्वभाव और रहन सहन बहुत अच्छा है वह हिन्दुस्तानियों की तरह बड़े परिवार में नहीं रहते, लड़का बड़ा होने पर बाप का सहारा छोड़ देता है वह लोग सुन्दर बंगला बनाकर फूल पत्ती से सजाते हैं और स्त्री पुरुष आनन्द मय जीवन व्यतीत करते हैं तुम भी एक बंगला नुमा मकान बनाओ और आनन्दमय जीवन व्यतीत करो। हमको भी अभीलाषा हुई कि अगर औसर मिला तो एक बंगला बना कर एकान्त में जीवन व्यतीत करूंगा यही बात एक बार परमदयाल साहब ने भी एक आदमी से कहा "नौकरी छोड़ने के बाद एकान्त में एक मकान बना कर जीवन व्यतीत करो। इसका भी प्रभाव हमारे ऊपर पड़ा. मैंने सोचा कि दातादयाल तथा परमदयाल दोनों ने एक ही बात कही क्या पता दोनो आदमी हमारे ही हेतू संकेत कर रहे हो ? क्यों कि जिन व्यक्तियों से उन लोगों ने मकान बनाने को कहा वह नहीं बना सके मालिक की मौज मैंने वैसा ही मकान बना लिया और एकान्त में आनन्द मय जीवन व्यतीत करता हूं।

मैंने समझ रखा था कि दातादयाल के समीप जो लोग रहते हैं वे अच्छे स्वभाव के होंगे। इस कारण हमने अपने कुर्ते में कुछ रुपया रख कर दातादयाल की कुटी में खुंटी पर सुरक्षित समझ कर लटका दिया था रुपये को दातादयाल के नौकर ने चुरा लिया। हमने दातादयाल से यह बात कही तो उन्होंने कहा कुबेर समुन्द्र में मोती, मुंगा, घुघुची व सेवार सभी अगर न हो तो समुन्द्र का महत्व समाप्त हो जायेगा मैं सुनकर चुप रह गया।

नहा धोकर मैंने अपनी धोती सूखने के लिये धूप में फैलाव

दी थी जहा सुरक्षा नहीं थी दातादयाल ने देखा तो कहा कि इसे सुरक्षित स्थान पर रखो वर्ना कोई चूरा ले जायेगा हां अगर तुम्हारा विश्वास है कि कोई यहां से नहीं चुरा लेगा तो ठीक है हमारा विश्वास हिल गया अतः उसको उठाकर सुरक्षित स्थान पर रखा दिया।

मैं जब क्षय रोग से अच्छा हुआ तो मिठाई खाने को बहुत जी चाहता था। जब कोई मिठाई प्रसाद दातादयाल को लाता तो मैं इस ताक में रहता कि दातादयाल हमको भी मिठाई देवें वह इस प्रकार बांटना आरम्भ करते कि वह हमारे पास आने ही के पहले समाप्त हो जाती थी। इस बात की हमने कई बार परिक्षा ली जब सुफल नहीं हुआ तो इसका प्रयास छोड़ दिया। इसी प्रकार मैं हैदराबादी कंबल का बहुत इच्छुक था जिसको वह हैदरावाद से लाकर धाम पर बांटते थे मैं चाहता ही रह गया कि एक कंबल हमको भी दें मगर उन्होंने नहीं दिया एक बार स्वयं कहने लगे मैं हैदराबाद जा रहा हूं वहां से कंवल लाऊंगा तो तुमको दूंगा हमारे सिवा तुमको कौन देगा। फिर भी हैदराबाद से लौटने पर कंबल नहीं दिया इन दोनों बातों में क्या रहस्य है। मैं ठीक तरह से नहीं समझ सका अपनी तौर पर यह समझता हूं कि उन्होंने हमारी इच्छा शक्ति को प्रबल बनाने का प्रयत्न किया।

एक मुकदमे में मैंने उनसे राय ली तो उन्होंने एक वकील का नाम बताया और कहा उसको वकील रख लेना। संजोग वश मैंने उसको वकील नहीं रखा मुकदमा हार गया व दातादयाल से कहा। उन्होने कहा जिस आदमी को हमने वकील रखने को कहा उसको तुमने वकील नहीं रखा वह वकील कोई अच्छा वकील नहीं था इसी कारण हमने नहीं रखा था इसमें क्या रहस्य था? मैं नहीं समझ सका।

एक बार दातादयाल कहते थे कि प्रत्येक जीव जन्तु में मालिके कुल व्यापक है अतः प्रत्येक जीव जन्तु की जीवों में निर्वाण का

नियम लागू है। मगर दूसरे योनी में जिस मात्रा में अधिक मनुष्य जोनी में यह नियम लागू है उसी मात्रा में कम जीव जन्तु जोनी में लागू है। इसका पता मनुष्य को नहीं लगता, मगर इसका प्रमाण तुलसीकृत रामायण में कागभूसून्ड़ी का सम्वाद है।

एक वकील साहब से दातादयाल ने कहा कि अगर तुम्हारी वकालत नहीं चलती तो दाढ़ी रख लो चल जावेगी उन्होंने दाढ़ी रख ली और उनकी वकालत चल निकली।

दातादयाल कभी नमक रोटी, कभी रोटी चीनो और कभी रोटी सब्जी का प्रसाद देते थे कभी कई प्रकार की सब्जी और चांवल दाल एक ही साथ पकवा कर प्रसाद देते थे और कहते थे यह फकीरी भोजन है।

दातादयाल एकबार जब गाजीपुर आये तो बलिया तार देकर हमको बुलाया। आधी रात के मसय निवास स्थान पर पहुंचा आहट पाकर बोले कौन हैं। मैंने कहा कुबेर और नमस्कार करके बैठ गया उन्होंने पूछा कितने लड़के हैं, मैंने कहा एक उन्होने कहा अच्छा एक लड़का और, फिर पूछा बलिया शहर में तुम्हारा मकान हैं मैंने कहा नहीं उन्होंने कहा बलिया शहर में मकान बनाओ इन दोनों बातों की मुझे तिव्र इच्छा थी पता नहीं दाता दयाल को इनका ज्ञान कैसे हो गया था।

दातादयाल धाम से बलिया आने के हेतू रेल पर सवार हुये और रात का खाना साथ लिया जो एक आदमी के लिये से अधिक था। एक आदमी बनारस में शाम ही से बिना भोजन किये ऊनकी गाड़ी की प्रतिक्षा कर रहा था। जब उनकी गाड़ी बनारस पहुंची तो वह आदमी दातादयाल को न पाकर उसी गाड़ी में बैठ गया। सुबह को जब रेल बलिया पहुंची तो उसने दातादयाल को गाड़ी से उतरते देखा आकर नमस्कार किया। दातादयाल ने पूछा क्यों जी रात को खाना ? खाया उसने

कहा मैं आपकी प्रतिक्षा में रह गया। खाने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ। दातादयाल ने कहा तुमने हमको सतकर्ता से नहीं ढूंढा। तुम्हारा खाना हमारे पास था यह लो जाकर खालो।

दातादयाल हमारे विवाह में हमारे घर आये। हमारे यहां यह नियम है कि वर को जिस दिन विवाह करने जाना होता है उस दिन वह उपवास करता है दातादयाल के हेतू खाना आया तो उन्होंने हमें खिलाना आरम्भ कर दिया लोगों ने कहा आज इन को खाना नहीं चाहिये। उन्होंने कहा यह प्रशाद है खाना नहीं है सब लोग चुप मार गये और हमने भर पट खालिया।

दातादयाल एक आदमी के यहां भोजन करने बैठे। जब सामने आया तो हाथ धोने के लिये पानी का संकेत किया। जब पानी आया तो पानी के गिराने के लिये बर्तन का संकेत किया। वह वर्तन लाने गया तो देर होते देखकर दातादयाल ने मुझको संकेत किया तो मैंने मिट्टी के प्याले में जो वहीं पड़ा था उनका हाथ धुलवा दिया और वह खाना खाने लगे। जब करीब-२ खाना समाप्त कर चुके तो वह आदमी पीतल का तश्त लाया। दाता दयाल ने कहा अगर हम तश्त में हाथ धाने की प्रतिक्षा करते तो भूखे ही रह जाते।

दातादयाल हमारे विवाह में गये। विवाह के समय मैंने उनको इस ख्याल से नहीं बुलाया कि वहां बहुत भीड़ थी उनको तकलीफ होती। सुबह जब मैं दर्शन को गया तो उन्होंने कहा क्यों जी तुमने हम को विवाह के समय पर नहीं बुलाया। मैंने कहा आपको वहा तकलीफ होती इस ख्याल से नहीं बुलाया।दातादयाल ने कहा 'वाह? इतनी तकलीफ उठाकर हम इसी लिये तो आये थे।

. मैंने कुटी में थियासोफी *Theyosophy* की एक पत्रीका पढ़ी जिस में कोई तत्व नहीं था मगर उसकी कागज, चित्र की छपाई बड़ी सुन्दर थी। दातादयाल से पूछा यह तो बिलकुल तत्व हीन है यह क्यों इतनी प्रचलित है ? दातादयाल ने कहा इसके प्रचार का कारण इसकी छपाई चित्र, कागज तथा सरोज

नी नाइडो सरोजनी नाइडो का नाम है।

मैंने दातादयाल से कहा मुसलमान लोग उठ बैठकर निमाज पढ़ते हैं इससे तो चित्त बजाय एकाग्र होने के चंचल होता है इस्लाम का प्रचार इतने जोर पर कैसे हो गया। तो उन्होंने कहा ऐसा तो होना ही चाहिये। दुनियां बाहरमुखी है और इसलाम भी बाहरमुखी है।

तीन बजे दिन का समय था, घनघोर वर्षा बरस रही थी। एक आदमी ऐक ढोल लिये हुये दातादयाल के पास आया और कहा आप इसको मोल ले लेवें। दातादयाल ने उसका दाम पूछा तो उसने उसका दाम बताया। दातादयाल ने एक रुपया अधिक देकर ढोल मोल ले लिया। जब वह चला गया तो लोगों ने पूछा पहिले तो धाम में ढोल की कोई जरूरत नहीं है, दूसरे जो दाम उसने मांगा उससे बजाय कम देने के आपने अधिक दाम दिया, दाता ने कहा इसके पास आज खाने को नहीं था। इस वजह से उसने आधी मूल्य मांगी। उससे परिवार का काम नहीं चलता। उसने तो ढोल बेचकर रुपया लिया। अगर ऐसे हीं मांगता तो भी मुझको देना ही था।

दो औरतें पान लाईं। एक धनी घर की थी जिस के पान में चांदी का बरक लपेटा था दूसरी गरीब घर की थी जिसका पान सादा था। धनी वाली को आशा थी कि दातादयाल हमारा पान खावेंगे। और गरीब वालो का पान नहीं खावेंगे, मगर पासा उल्टा पड़ गया। दातादयाल ने सादा पान खाया और कहा मैं सादा पान खाता हूं, बरक वाला नहीं खाता। बरक वाली स्त्री दातादयाल का मूंह देखती रह गई।

दातादयाल की कुटी में एक सांप दिखाई दिया जिसकी सुचना लोग उनको देने गये। तब तक मैंने उसको मार दिया और उनके पास गया तो उन्होने कहा सांप मार दिया। मौज मैं मारना नहीं चाहता था।

जिस समय हमने हाई स्कूल कक्षा की परीक्षा दी. बलिया में डिगरी कालेज नहीं था। दातादयाल के पास बैठा हुआ सोच रहा था कि हमारी स्थिती ऐसी नहीं है कि बाहर जाकर आगे पढ़ सकूं। हमारे सहपाठी बी. ए. पास करके मिलेंगे तो हम को झेंपना पड़ेगा। दातादयाल ने कहा हाई स्कूल पास करके काम में लग जावो, जियादा पढ़ने से कोई लाभ नहीं। मनुष्य को क्रियात्मिक होना चाहिये। मैं मुखतारी पास करके एक साल बाद काम करने लगा हमारे सहपाठी छाह साल बाद वकालत पास कर हमारे साथ काम करना शुरू किये।

एक सतसंगी भाई ने कहा महाराज इस साल वर्षा के कारण धान वोये हुये सारे खेत डूब गये। बहुत कम बच रहे हैं। धान कम होगा, खर्च कैसे चलेगा। दातादयाल ने कहा जो बच जावेगा वह काफी होगा। बड़े दिन की छुट्टी में मिला तो कहा महाराज आप सत्तपुरुष हैं जितना हर साल होता है उतना इस साल भी धान हुआ। दातादयाल ने कहा मौज।

सन १९१९ ई० में जब दातादयाल लाहौर में प्रचार हेतू विज्ञानी पत्रिका प्रकाशित करते थे उनकी मासिक बचत आय करीब सोलह सौ रुपये थी। जब कि कोई ५, में बड़ी सुगमता से एक माह में अपना काम चला लेता था। उस समय दातादयाल का निजी खर्च दो रुपये से अधिक नहीं था। इसको छोड़ कर वह सब रुपया सत संगीयों की सेवा में खर्च कर देते थे।

दातादयाल का लिखा उपन्यास एक आदमी एक सौ रुपये में खरीद लेता था। उसने लिखा कि अब नहीं खरीदूंगा। किताब नहीं बिकती, पढ़ कर दातादयाल ने कहा मौज एक वह ज़माना था कि हमने पहिले पहिल शाही लकड़हारा लिखा उसकी बिक्री इतनी हुई कि कई बार प्रकाशित कराना पड़ा और अब उससे अधिक योग्य नाविल लिखता हूं तो कोई गाहक नहीं। समय समय की बात है।

दातादयाल को किसी रोग में ग्रसित होने पर दवा करने की आदत नहीं थी। भोजन के रूप में जो कुछ ठीक समझते थे खा लेते थे। अगर फायदा कर गया तो ठीक वर्ना मालिक की मौज समझ कर उसको सहन करते थे। जो कोई दवा पूछता उसको केवल ढिकुवार दवा बताते थे। जो कोई विश्वास करके खाता वह अच्छा हो जाता था। मैंने पूछा महाराज यह दवा आप को कैसे मालूम हुई जवाब दिया, एक बार मैं बहुत बिमार हो गया हमारा कष्ट असह हो गया मालिक से पुकार की आकाशवाणी हुई ढिकुवार प्रयोग करो। मैंने ढिकुवार खाई और स्वस्थ हो गया।

दातादयाल एक सतसंगी के घर लखनऊ गये। घर का आगन छोटा था जहां उन्होंने भोजन किया। उनके घर वालों ने कोठे पर से दातादयाल को रुपया ऊपर से आंगन में भेंट करना आरम्भ किया। आंगन रुपये से भर गया जब रुपये की बौछार समाप्त हो गई तो उन्होंने आदेश दिया सब रुपया इक्ट्ठा करके जिसका जितना हो वापस करो, मैं रुपये का भूखा नहीं हूं। मैं प्रेम का भूखा हूं।

एक व्यक्ति दुबला पतला और कमजोर था, उसकी स्त्री रूपवती व रिष्ट पुष्ट थी। दोनों को देखकर दातादयाल पति से कहने लगे तुम इतने से दुवले पतले कमजोर हो ऐसी स्त्री को कैसे सन्तुष्ट रख सकते होंगे ? यह सुनकर दोनों ने आंखें नीची कर लीं।

मुझको ऐसा प्रतीत होता है कि जिस व्यक्ति से किसी को सम्पर्क होता है उसका प्रतिबिम्ब उस व्यक्ति पर पड़ जाता है। अगर वह सुक्ष्मवृति का है तो जिस मनुष्य का प्रभाव पड़ता है उस प्रभाव से वह जान जाता है कि वह मनुष्य किस प्रकार का है वर्ना अगर वह स्थूलवृति का है तो वह मनुष्य जब किसी सूक्ष्मवृति वाले के पास जाता है तो वह मनुष्य उस पर पड़े हुये प्रतिबिम्व से अनुमान कर लेता है कि जिस मनुष्य का प्रतिबिम्व उस पर पड़ा है वह किस स्वभाव का है एक बार जब दातादयाल बलिया आये तो हमारी शादी की बात चीत एक जगह तय की थी और

उनसे इसके हेतू आज्ञा लेने के हेतू हमारे घर वाले आये, इस नियम के अनुसार दातादयाल को ज्ञात हो गया कि लड़की हमारे अनुकूल नहीं है। दातादयाल ने कहा इसकी शादी अभी नहीं होगी बाद में देखा जायेगा। मैं उनके साथ धाम चला गया तब हमारी शादी दूसरी जगह ठीक हुई और लड़की के घर वाले हमको देखने के लिये भेष बदल कर धाम पर आये। दातादयाल उनका अभिप्राय समझ गये और लड़की का प्रतिबिम्व जो उनपर पड़ा था उससे पता लगा लिया कि लड़की हमारे अनुकूल है जब हमारे घर वाले शादी के लिये हमको बुलाने के लिये धाम पर आये तो दातादयाल ने हमसे कहा जावो शादी कर लो ऐसी लड़की भाग्य से मिलती है।

दाताद्याल अपना संस्कार किसी को अपने विचार धारा से, किसी को संकेत से, किसी को छूकर और किसी को चूमकर देते थे, एक लड़की आई तो उसके सर पर हाथ फेरा और चूमकर कहा तुम बड़ी सुन्दर हो।

जब मैं बिमार हो कर धाम पर गया तो हमारे चाचा व नाना इत्यादि हमको देखने के लिये धाम पर आये जब वह लोग चले गये तो दातादयाल ने कहा कि तुम्हारे चाचा लोग इस नियत सो आये थे कि देखें यह मरता है कि नहीं ताकि जो जायदाद इसको मिली हैं वह हमको मिल जाये। मगर तुम्हारे नाना इस नियत से आये थे कि तुम जिवित रहो ताकी जायदाद का सुख भोगो अपने माता व नाना के सतकार का ध्यान रखना।

शाम का समय था दातादयाल को कुटी में मच्छर सताने लगे कहा मच्छर की कोई दवा है एक व्यक्ति ने कहा इसकी दवा ढिकुवार हैमैंने कहा कुटी तो ढ़िकुवार भरी हुई है उसने कहा दूर है। मैंने कहा तो क्या ढ़िकुवार गले में बांध ली जाय? यह सुनकर दातादयाल मुस्कराने लगे।

मेरा स्वभाव है कि मैं अपना प्रभाव किसी पर डालने का प्रयास नहीं करता मगर अनुचित रूप से अगर कोई अपना प्रभाव

हम पर डालना चाहता है उसको सहन नहीं कर सकता। जब दातादयाल के सम्पर्क में आया और भी निर्भय हो गया। जब कोई दुरव्यवहार करता मैं उसको मार देता तो वह मुकदमा दायर कर देता। मैं दातादयाल को पत्र लिखता तो वह जबाब देते मैं किसी को मुकदमा दायर करने की राय नहीं देता तुम छूट जाओगे। अतः प्रत्येक बार हाकिम स्वयं मुकदमे को सुल्लह कराकर हम को रिहा कर देता।

एक व्यक्ति ने दातादयाल से कहा कि हमको एक आदमी ने मारा है। अगर आप कहे तो मैं फौजदारी का मुकदमा दायर करूं। उन्होंने उस आदमी को बुलाया और कहा कि तुमने इसको मार खिलाया है। अब अपने हाथ से इसको चीनी खिलाओ। उससे उसको चीनी खिलाकर सुलह करा दी इसमें क्या रहस्य था? मैं समझ नहीं सका।

पहली शादी जब हुई तो हमको वहां से बहुत अच्छी जायदाद मिली क्योंकि वह लोग निः सन्तान थे। उस समय मैं दातादयाल के सम्पर्क में नहीं आया था जब उनको मालूम हुआ तो उन्होंने संकेत में कहा कि हमारे नानी के पास अच्छी जायदाद थी उसने हमारे पिता से कहा कि अपने नाम करा लेवें मगर उन्होंने यह कह कर इनकार कर दिया कि मैं निः सन्तानी की जायदाद नहीं लूंगा। जो जायदाद हमको मिली थी वह बड़ी थी इसके हेतू कई साल तक बहुत से मुकदमे लड़े जब ठीक हो गया तो मैंने सोचा कि अब लाभ का समय आ गया कांग्रेस गवर्नमैंट ने जमींदारी तोड़ दी और हमारे उम्मीद पर पानी फिर गया कहने को तो मैं एक बड़ी जायदाद का मालिक था मगर जब तक वह जायदाद हमारे पास थी मैं चैन से नहीं था। दातादयाल ने जो बात संकेत में कही थी उसको अब समझता हूं। सुख के रूप में हमको उतना दुख भोगना था। हां एक बात जरूर है कि अगर उतना दुख नहीं उठाता तो इतनी शान्ति नहीं पाता।

दातादयाल का अन्तिम दर्शन उनके गुप्त होने के ४, ५ माह पहले वरखा रितु में हुआ था शरीर दूर्बल व निवल हो गया था

चलने फिरने में कष्ट था। उनकी दशा देखकर दुखी हो गया। जब कभी कहता कि आज्ञा हो तो घर जाऊं कहते। अभी नहीं इस तरह एक सप्ताह बीत गया मैंने सोचा दातादयाल छोड़ना नहीं चाहते। दिल में कहा कि ठीक है दातादयाल की परिस्थिति ऐसी है कि इनको इस दशा में छोड़ना हमको उचित नहीं है मगर हमारे घर की परिस्थिति क्या है भगवान जाने एक बार इनके साथ में कुछ अधिक दिन रह गया तो कहने लगे कि तुम घर जाओ मालिक को बहुत दिनों घर से दूर रहना नहीं चाहिए, वह कहने लगे घबराओ नहीं घर पर सब ठीक है। जब घर जाने को आज्ञा दी तो कोई भोजन बनाने वाला नहीं था और न लकड़ी थी पानी रिमझिम बरस रहा था दातादयाल लड़खड़ाते हुये उठे लकड़ी मंगाई आग जलाई और भोजन बनाने लगे। मैं कितना ही मना करता रहा कि आप कष्ट न करें। मैं बाजार में खा लूंगा मगर उन्होंने एक भी नहीं सुनी हर्ष पूर्वक भोजन बनाया और प्रेम पूर्वक खिला कर ही जाने की आज्ञा दी।

उनके गुप्त होने का जब समाचार मिला तो मेरा ध्यान उनके बरखा रितु वाले दशा पर गया प्रसन्न हुआ कि वह उस दशा से मुक्त हो गये बाद में अपनी और ध्यान गया तो हमारी आत्मा ने कहा कि वह मालिके कुल के रूप तथा पूर्ण पुरुष थे उन्होंने अपने जीवन काल ही में हमारी शादी कराई वकालत पास कराया बलिया में मकान बनवाया जो दूनियां से सम्बन्धित है। रहा आत्म ज्ञान का प्रश्न वह स्वयं कह गये हैं कि वह हुवा है यह सत्य है कि अभी मैं उस दशा का पुर्ण रूप से अनुभव नहीं कर रहा हूं मगर इनकी बात असत्य नहीं हो सकती उनके शराध के अवसर पर धाम गया तो ज्ञात हुआ कि परमदयाल साहब पधारे है। श्री राम किशोर ने कहा कि वह मजजूब है उनसे मत मिलना या तो पहिले मिलने की हमारी साधारण इच्छा थी मगर यह सुनने पर हमारी अभिलाषा प्रचन्ड हो गई कि देखना चाहिए

कि मजजूब की दशा क्या होती है ? अवसर पाकर हाथ जोड़ कर नमस्कार किया तो वह हमारा पांव छूकर हमको गले लगाये मुझे ऐसा मालूम हुआ कि दानादयाल के दूसरे रूप हैं।

अब परमदयाल के सम्पर्क मे आया कांग्रेस सरकार ने जमीदारी तोड़ दी जिसके सम्भालने में जितना ही आधिक मेहनत करता था उतना ही कम लाभ होता था। इससे जान बची स्त्री चल बसी जिसको जीवन में सच्चा साथी समझता था। मालिक की ओर दृष्टि गई। लड़के पढ़ लिख कर काम में लग गये धन भी मिल गया परम दयाल ने राधास्वामी धाम का कार्य सौंपा और कहा इस कार्य से तुम्हारी कमी पूरी हो जायेगी उसमें लौलिन हो गया मालिक ने उससे अवकाश दिया रसड़ा में एकान्त में रहने लगा परम दयाल ने लिखा यह तुम्हारा आखीरी चोला है जब मैं विचार करता हूं कि मालिक हम मैं हैं या मैं मालिक में हूं तो इसका निर्णय नहीं कर सकता आगे क्या होगा वह जानता है।

इस तौर से यह समझता हूं कि दातादयाल ने जिस पौधे को लगाया परम दयाल ने उसके सींच कर फलदार बना दिया गुरु दाता सबका कल्याण करे और आशिवाद देवे कि जो व्यवित इस अनुभव सार को हित-चित से अध्ययन करे वह विवेकी हो कर मन के मण्डल से निकल कर शब्द व प्रकाश के मण्डल तथा इससे ऊपर के मण्डल में वास करे।

राधास्वामी

दाता दयाल के प्रमाण

(१) प्रारब्ध कर्म अवश्य भोगना पड़ता है। (२) मालिक की दया से सूली कांटा हो जाती हैं। (३) जिस ने सृष्टि रची है वह स्वयं उसकी रक्षा करता है। (४) धर्म पुरषार्थ और मेहनत से काम करो जो चाहते हो वह होकर रहेगा। (५) नाम लेने से प्रत्येक बिघ्न दूर हो जाते हैं। (६) हिम्मत न हारिये विसारिये न हरी नाम।

(७) *Try try again anl ag iin* बार बार प्रयत्न करो सफलता होकर रहेगी (८) *Rome was not built in a day* सफलता अनिवार्य है मगर समय आने पर प्राप्त होती है। (९) *If wealth is lost, nothing is lost, if health is lost, some thing is lost, but if charecter is lost, every thing is lost.*

अगर कोई निर्धन हो गया तो कुछ नहीं खोया। अगर कोई शक्ति हीन हो गया तो कुछ खो दिया, लेकिन अगर चरित्रहीन हो गया तो सब कुछ खो दिया। (११) *Be positive do not be negative* आस्तिक बनो नास्तिक न बनो। (१२) *Extreme meet in the end* प्रत्येक वस्तू अपने अंतिम सीमा पर जाकर एक दूसरे के बराबर हो जाती है। (१४) *Sum worts into best* सबसे खराब का उपयोग सबसे अच्छा करो। (१४) मालिक की मौज पर निर्भर रहो। (१५) रोजी मिलनी अनिवार्य है लेकिन खोज करना भी अनिवार्य है। (१६) सुख की प्राप्ती दुःख उठाने के बाद ही होती है। (१७) दुःख का सामना हर्ष पूर्वक करना चाहिये। इससे जीवन विशाल होता है।

(१८) गिरते पड़ते मनुष्य सम्भलता है। (१९) निर्धनता वो सम्पन्नता समय समय की बात है। मनुष्य को अपने आदर्श का

ध्यान रखना चाहिये। (२०) समय आता है और समय जाता है। सुबह होती है शाम होती है, उमर यों ही तमाम होती है। (२१) मरना जीना मालिक के आधीन है। (२२) सत्य की सहायता मालिक करता है लेकिन सत्य क्या है इस का जानना कठिन है। (२३) दाना पानी मौज के अधीन है। (२४) मौज से जो होता है अच्छा होता है। (२५) [1]होता है वही खुदा जो चाहे, मालिक है किब्रिया निवोह [2]बे वक्त किसी को कुछ मिला है ? पत्ता भी बिन हुक्म नहीं हिलता है। (२६) जो कुछ हुवा, हुवा करम से तेरे, जो कुछ होगा करम से तेरे होगा। (२७) मौत की कोई दवा नहीं हैं, हां एक दवा है मालिक की भक्ति। (२८) पड़ोसी से मेल रखो। (२९) रुपया देने में देर और लेने में जल्दी करो। (३०) जान वूझ अनजान बन,ज्ञान पाय अज्ञान, बल पोरुष से रहित हो, तब सच्चा बलवान।

(३१) अपनी कमाई में से कुछ न कुछ बचाना चाहिये। (३२) नजदीक की चीज़ दूर की चीज से अच्छी होती है। (३३) विमार आदमी अगर पीपल के पेड़ के तले सोवे तो स्वस्थ हो जावेगा और अगर स्वस्थ आदमी बबूल के तले सोवेगा तो बीमार हो जावेगा। (३४) प्रत्येक प्रकार की अन्तिम अवस्था आनन्द रहित हो जाती है आनन्द मध्य में है। (३५) भूखे बेर, अधाये गन्ना जब भूख लगे तो भर पेट बैर खावो और जब पेट भर जाये तो गन्ना चूसो। (३६) ताले, खाले व पाले। वर्षा ऋतु में तलाब का पानी, जाड़ में कुवें का पानी और गर्मी में सुराही का पानी पीना लाभदायक है। (३७) जो होना है होकर रहेगा मगर जो तुम कर रहे हो वह करते रहो। (३८) कठिन का नतिजा कठिन व आसान का नतिजा आसान होता है। (३९) उत्तमा सहजावितीं, मध्यमा ध्यान धारना, अधमो मुर्ती पूजा, तीर्थ बर्त अधमोधमा। (४०) जमीन एक ववा है, जो आदमी कोदबोच लेती है (४१) बीमारी में बहुत लोगों के काम वन जाते हैं यानी अभ्यास की श्रेणियां खुल जाती हैं।

(४२) संत किसी के रस्म रिवाज में बाधक नहीं होते। (४३) मनुष्य को काम करना चाहिये. काम करने की योज्ञता मालिक प्रदान कर देगा। (४४) अत्याचार की जड़ खोखली होती है वह जल्द नष्ट हो जाती है। (४५) मालिक की दया हमेशा से है और हमेशा रहेगी। (४६) जो आदमी काम नहीं करता घर में उसकी इज्जत नहीं होती।

(४७) *Life means work and work means life.* जीवन का अर्थ काम और का काम का अर्थ जीवन है।

नज़्मे कुबेर

(१)

परम दयाल

१. हम अपने आप का अब, इज़हार[1] करेंगे।
सोये हुये आलम[2] को, हम बेदार[3] करेंगे।।
२. पीरी[4] में जवानी का, हम आगाज़[5] करेंगे।
अब हम किसी खुदासे, क्या फरयाद[6] करेंगे।।
३. इस आलमे बिराना[7] को, आबाद करेंगे।
मर करके ही हम आपको, शादाब[8] करेंगे।।
४. गुमराह जो है उनको हम, सदराह[9] करेंगे।
बेहाल जो है उनको हम खुशहाल करेंगे।।
५. इन्सान को इन्सान का जामा[10] पहनायेंगे।
दुनियां को मुहब्बत का दम भरना सिखायेंगे।।
६. मज़हब व मिल्लत का तफर्का[11] छुड़ायेंगे।
कौमियत[12] व फर्दियत[13] की, बंदिश[14] मिटायेंगे।।
७. फज़ल व करम के आब का, दरिया वहायेंगे।
दिल के जले हुओं को, उस में तरायेंगे।।
८. रहमत[15] का बार[16] मेरी, जो जो उठायेंगे।
कामिल यकीं से उनको, धुर तक पहुंचायेंगे।।
९. 'कुबेर' मुर्शिद की करम हो गई, बेबाक हो गए।
नापाक और पाक मेरे, चाक[17] हो गए।।

---

1. प्रकाशित, 2. संसार, 3. जाग्रीत, 4. बुढ़ापा 5. आरंभ, 6. प्रार्थना, 7. उजड़ा हुआ, 8. खुश, 9. ठीक रास्ते पर लाना, 10. कपड़ा, 11. झगड़ा, 12. 13. ज़ात-पात, 14, बंधन 15. दया, 16. बोझ, 17. फट-जाना।

नज़्म (२)

कर्मे मुर्शिद

उलझे उलझे उलझे उलझे,
सुलझे की कोई राह न है।
हम कहां थे कहां पे आके फंसे.
इस की हम को परवाह न है।

दुनियां व दीन में आकर फंसे,
इससे बचने की कोई चाह न है।
जो सब कुछ था उसे खो बैठे,
इस खोने की कोई थाह न है।

मादारी[1] को शाही समझे,
बीमारी से मसरूर[2] हुए।
ठोकर खा खा कर उकताए।
और रंज, अलम से घबराए॥

मुरशद ने फजलो कर्म की है, नीचे से नजर ऊंचे की है।
जहां नूर[3] ही नूर बरसती है,
वह महंगी और न सस्ती है।
वह मस्ती और न पस्ती है,
वीराना[4] और न बस्ती है।

इस नूर में फना[5] बका[6] देखे,
दोनों से जी को भर लिया है।
फिर दोनों से ऊपर आए,
जहां जात[7] हो जात अब बाकी है।

इस रमज[8] को कर्म वाला समझे।
गैरों का समझना दूर ही है।
'कुबेर' इसमें तो किसी दखल न है।
मुरशद का कर्म ही साथी है॥

---

1. गरीबी, 2. आनन्द, 3. प्रकाश, ४. उजाढ़, ५. मौत, 6. जिन्दगी, 7. स्वयं, 8. भेद।

नज्म (३)

साथ छूटे

१ या रब[1] तू कहीं ले चल, इन सब का साथ छूटे।
इस आलमें फानी[2] में हम, आके बहुत लूटे॥
२. ये गाना[3] कहीं छूटे, बेगाना[4] कहीं छूटे।
मय[5] खाना कहीं छूटे, पैमाना कहीं छूटे॥
३. हीज्र[6] वो वसाल[7] का सब अफसाना[8] कहीं छूटे।
मस्लये दीन-दुनियां का ये वहाना कहीं छूटे॥
४. इस जादूगर दुनियां से कहीं अपना गला छूटे।
हमदर्द कहीं छूटे. बेदर्द कहीं छूटे॥
५. हिर्स[9] और बेहीर्स[10] की उल्फत[11] ये कहीं छूटे।
शाहा का ख्वाब छूटे, गदाई का ख्याल छूटे॥
६. छूटे से भी हम छूटे, फंसने से भी छूटे।
"कुबेर" मुर्शिद[12] की करम हो जब, कहीं तेरा साथ छूटे॥

---

1. हे-परमात्मा, 2. नाशमान, 3. अपना, 4. पराया, 5. शराब
6. विछोह, 7. मिलाप, 8. कहानी, 9. लोभ, 10. सन्तोष,
11. प्रेम, 12. गुरु।

नज्ज (४)

गए गुजरे हैं

१. या रब तेरे तल्लाश में कहां कहां न गए गुजरे है।
कौन सी जा है जहां से न गए गुजरे है।
२. दीन से गये गुजरे व ईमा से गए गुजरे है।
आक़बत गुजरे आखिरत से गए गुजरे हैं॥
३. दिल जले होके और शाद गए गुजरे हैं।
खवार[1] होकर वो बरबाद गए गुजरे हैं॥
४. ख्वावे[2] शाही[3] वो गदाई[4] से गए गुजरे हैं।
मेहर[5] वो जफाय[6] आलम[7] से गए गुजरे हैं॥
५. ज़िन्दगी मौत दोनों से गए गुजरे हैं।
जिस्म से, दिल से व जां से गए गुजरे हैं॥
६. कोह[8] सेहरा[9], वो बयाबा[10] से गुजरे हैं॥
शादी, अबादी वो बरबादी गए गुजरे हैं॥
७. हम तो हर दो जहां से गए गुजरे हैं।
फ़ज़ल वो कर्म मुर्शिद से गए गुज़रे हैं॥
८ यों समझ लो कि हम सब से गए गुजरे हैं।
पर न समझो कि हम आपे से गए गुजरे हैं॥
९. "कुबेर" यह न समझो कि हम गए गुजरे हैं।
कूचये[11] जाना[12] से हो के गए गुजरे है॥

---

1. बे-इज्जत, 2. सपना, 3. बादशाही, 4. भीखारी, 5. दया
6. अत्याचार, 7. दुनियां, 8. पहाड़, 9. बालू का मैदान,
10. जंगल, 11. गली, 12. प्रीतम।

नज्म (५)

तसवीरे यार

(प्रीतम की मूरत)

१. तस्वीर चले खींचने हम अपने यार की।
पर यार ने छिप छिप कर उसको बिगाड़ दी ॥
२. जब खिंचता हूं उसको हो जाता है निहां।
जब मैं हूं करता बन्द तो होता है वह अयां[2] ॥
३. कभी वह अयाँ निहां है कभी वह निहां अयां।
इस हाल का बता दो कि कैसे करूं बयां ॥
४. हर वक्त है वह पास मगर हमसे दूर है।
मालूम नहीं होता अयां है या निहां है ॥
५. इस हाल में कैसे कहूं कि यार कहां है।
वह खुद है जादूगर या कि जादू भी बना है ॥
६. छिप करके अयां[2] होने की हालत अजीब है।
इस को समझ ले यार गर तुझको तमीज है ॥
७. है आंख उसको देख कर इनकार कर रही।
पर आंख की जो आंख है वह उसको लख रही ॥
८. करता है कार वार मगर हाथ नहीं है।
चलता है मेरा यार मगर पांव नहीं हैं ॥
९. वह बोलता है पर वह ज़बा[3] बन्द हुवा है।
वह देखता है पर वह आंख बन्द किया है ॥
१०. इस तरह मेरा यार अयां वो निहां बना।
सब कुछ वह कर रहा मगर इनकार कर रहा ॥
११. गर वह अयां निहां हो तो तस्वीर खिच सके।
जो दोनों पर हावी[4] हो उसे क्या कोई कहे ॥
१२. "कुबेर" करता हूं पर्दा फ़ाश[5] मगर फ़ाश नहीं है।
तस्वीर खींचता हूं मगर साफ नहीं है ॥

---

1. छिप जाना, 2. दिखाई देना, 3. गुंगा, 4. नियंत्रण रखना, रखना. 5. पर्दा उठाना।

नज्म (६)

ख़ुदा व राज़

(प्रभु और भेद)

१. वह रोज़[1] ही क्या जो कोई पा जाए,
वह ख़ुदा ही क्या जो समझ में आ जाए ॥

२. वह राज़ नहीं जिस को कोई पा जाए।
वह ख़ुदा नही जो समझ में आ जाए ॥

३. राज़ को किस ने अब तक पाई है।
ख़ुदा की समझ किस को अब तक आई है।

४. राज़ की बात पाने से वरी होती है
ख़ुदा की जात समझ से बड़ी होती है ॥

५. सोहबत की इन की और यह समझ आई है।
कि हम को अब तक न समझ आई है।

६. राज़ पाने से बाहर नहीं तो राज़ नहीं।
ख़ुदा समझ में आ जावे तो आज़ाद नहीं ॥

७. आज़ाद का गर साथ तो आज़ाद रहोगे।
कैदी का गर है साथ तो बरबाद रहोगे ॥

८. 'कुबेर' ख़ुदा तुम को शाद[2] व आबाद रखे।
राज़ को राज़ और आप को आज़ाद रखे ॥

---

1. भेद 2. खुश।

नज्म (७)

जुस्तजू

(खोज)

१. क़तरे[1] को तो देखा न समुन्द्र की गुफ़तगू[2]।
अपने को तो समझा न खुदा की है जुस्तजू[3]॥
२. अपने तो फ़ाका[4] मस्त हैं औरा की है दावत[5]।
इन्सान तबे आप अक्ल से हैं अदावत[6]॥
३. ताक़त की ख़बर अपने न ज़बरदस्तों से लड़ाई।
इस में ही समझ बैठे हैं आप अपनी भलाई॥
४. रुह को तो समझा नहीं पर उसकी तोल माप।
बेटे को पैदा चाहते हैं आप बिला बाप॥
५. यह एक कशिश[7] है बिला शक्ल वो सूरत।
आप तौल माप चाहते है जिस की न मूरत॥
६. यह एक कशिश के सिवा है और कुछ नहीं।
मौवज़ू[8] जगह पे ज़ाहिर है ग़ैर[9] मौवज़ू में नहीं॥
७. जिसकी न कोई शक्ल हो क्या उसकी तोल माप।
जिसको न कभी देखा कहोगे क्या उसकी बात॥
८. ज़ाहिर किया है आप को कायनात[10] के सहारा।
यह सारी कायनात उसी की है आशकारा[11]॥
९. यह सारी कायनात उसी से मुहीत[12] है।
बस इतना समझ लो कि उसका वजुद[13] है॥
१०. सूरज के बाहर होके है, यह उसको उगाती।
ज़र्रों के अन्दर रह कर, चमक अपना दिखाती॥
११. क़तरा के अन्दर आप को पिन्हां[14] किया है।
बहर वो समुन्दर को भी उसने ढांक लिया है॥
१२. चिउंटी के अन्दर रह के, है यह उसको चलाती।
हाथी के बाहर होके, है उसको जिलाती॥

१३, आखों में काम कर रही, बशक्ले वसारत[15]।
कानों में काम कर रही, बशक्ले समाअत[16]॥

१४. वस इस तरह समझो जहां हरकती देखो।
पर तुम इसे बेहरकती से दूर न समझो॥

१५. यह इतनी बड़ी-छोटी कि तौल माप से बाहर।
वेनज़रों से छुपी है नज़र वालों से ज़ाहिर॥

१६. हरकत में देखने को तेरी आंख खुली है।
बेहरकती में देखने की आँख बन्द है॥

१७. वह नज़र तुम में भी है पर तुम से छुपी है।
उसकी तलाश कर लो सब बात खुली है॥

१८. इसकी समझ आयेगी उससे जिस ने है देखा।
सोहबत वसद शौक़[17] ज़ौक करो ऐसे शख्स का॥

१९. दिल से किसी के दिल से मिली, इस की राह है।
आंखों से गुज़र कर के जिसे दिल की चाह है॥

२०. अमल वो शगल का यह सौदाय खरा है।
ज़बानी जमाखर्च का यह मसला बुरा है॥

२१. दिल से समझ लो इस को यह दूर नहीं है।
पर इस के फ़ाश[18] करने का दस्तूर नहीं है॥

२२. 'कुबेर' मुर्शिद कामिल तुझे, यह आईना दिखाएगा।
और उस में तेरी शक्ल, तुझे समझाएगा॥

---

1. बुन्द, 2. बात-चीत, 3. खोज, 4. भूखा. 5. निमंत्रण, 6. दुश्मनी, 7. आकर्षण, 8. मुवाफ़िक़, 9. नामुवाफिक़, 10-सृष्टी 11. प्राकटय, 12. घिरी हुई, 13. अस्तित्व, 14. छिपाना, 15. देखने की शक्ति, 16. सुनने की शक्ति, 17. प्रेम वो लगन 18. खोलना।

नज़्म (८)

खुद में दाखिल

(स्वयं में प्रवेश)

१. बन्दे ने अपने आप को है, खुद में समेटा।
मरने और जीने का है, झगड़ा मेटा॥

२. हम तुम को बतायें क्या, है मरना-जीना।
इस को तुम ग़ौर से समझ लेना॥

३. दुनियां से नफ़रत[1] व उल्फ़त[2] है मरना जीना।
इससे न नफ़रत न उल्फ़त है, इनसे गुज़रना॥

४. दुनियां है जरूर इससे मुझे इनकार नहीं।
पर इसको वफ़ा[3] का मुझे एतबार नहीं॥

५ यह अगर वफ़ा करती तो समझते इसका होना।
इसकी बेवफ़ाई से समझते हैं न इसका होना॥

६. यह बेवफ़ा वफ़ादार है इनकार नहीं।
इसलिए मेरी तव्वजुह[4] पर इसका वार[5] नहीं॥

७. इसकी वफ़ा को बेफाई समझा।
इसके कारखाना से रिश्ता तोड़ा॥

८. कोई भाई न किसी का न किसी का बेटा।
कौन खरा है यहां और कोन खोटा॥

९) "कुबेर" हम यहां आये थे इसको समझने के लिये।
जब इस में न कुछ पाया तो घर चल बसे।

---

1. घृणा, 2. प्रेम, 3. साथ देना, 4. दिल, 5. बोझ

नज़्म (९)

ज़िन्दगी और मौत

(जीवन और मृत्यु)

१. जी कर के बना मुर्दा यह बात है कैसी।
मर कर के हुआ पैदा, यह मौत है कैसी॥
२. जब मर गया कोई तो फिर पैदा है क्यों होता।
जब ज़िन्दा हो गया तो फिर मुर्दा है क्यों होता॥
३. गर तू हुआ ख़ुदा[1] तो फिर बन्दा[2] तो नहीं है।
गर तू बना बन्दा तो फिर ख़ुदा तू कहां है॥
४. आकर के चले जाने का सब राज़ अयां[3] है।
जाकर के फिर आने का तो हाल निहाँ[4] है॥
५. इनजामे[5] ज़िन्दगी का गर मौत हुआ है।
फिर मौत का इनजाम कहो ज़ीस्त[6] कहां है॥
६. गर इसकी माहियत[7] को समझे तो चुप रहो।
वरना किसी कामिल[8] से मिल के इसको पूछ लो॥
७. कामिल जो है इन्सान तुझे राज़[9] कहेगा।
इस दोनों हालतों का पर्दा फ़ाश करेगा॥
८. गर इस मुअम्मा हलका तुम्हें इशतेयाक[10] हो।
क़ीमत अदायगी के लिये तू तैयार हो॥
९. हर शय[11] का तो मोल तोल किया जाता है।
पर इस का दाम बन्द आँख दिया जाता है॥

१०. इस की क़ीमत देने का कुछ ऐसा ही दस्तूर है।
क़वल मञ्ज़िल पहुंचने टिकट लेने को मजबूर है॥
११. कीमत अदायगी में ज़रा भी मलाल है।
तब तक समझ लो यार का पाना महाल है॥
१२. इस की क़ीमत सीम वो ज़र[12] नहीं ऐ अज़ीज़।
इस की कीमत दिल[13] देही है कर तमीज़॥
१३. दिल देके अपने आप को तुम शाद करोगे।
आये थे जहां से उसे आबाद करोगे॥
१४. इस क़ालिबे[14] ख़ाकी से आज़ाद रहोगे।
दुनियां की कशमकश से न फ़रियाद करोगे॥
१५. इस आलमें फ़ानी[15] की आदाब करोगे।
इन्जामे जिन्दगी को शादाब[16] करोगे॥
१६. "कुबेर" मुर्शिदे "शिब" ने हमे राज़[17] बताया है।
मौत वो ज़िस्त के झगड़ों से छुड़ाया है॥

---

1. ईश्वर, 2. सेवक, 3. प्रगट, 4. गुप्त, 5. फल, 6. जीवन, 7. भेद, 8. सतगुरु, 9. भेद, 10. चाह, 11. वस्तू। 12. रुपया-पैसा, 13. प्रेम व लगन, 14. नाशमान देह, 15. नाशमान, 16. सुफल, 17. भेद।

नज़्म (१०)

आलमे इसरार

(रहस्य की दुनियां)

१. यों समझ लें आप को खुद आलमे[1] इसरार है।
इसके पाने के लिये पर रहनुमा[2] दरकार है॥

२. खुद तमाशा होके क्यों तू है तमाशाई बना।
साहिबे सरवत[3] तू हो के क्यों गदाई[4] है बना॥

३ इस जहालत[5] को तो तूने खुद ही है पैदा किया।
दीदये रोशन[6] पे पट्टी बांध के अन्धा बना॥

४. छोड़ कर खुद के खुदी को रह[7] वरी तल्लाश हो।
रहवर ऐसा चाहिये जो वाकिफे[8] ईसरार हो॥

५. ऐसा रहवर चाहिये बे ग़र्ज वो बेवाक हो।
रहम दिल वेलोस खुदग़र्जी से बिलकुल पाक हो॥

६. जज़्बये इश्नयाक़[9] जब हद से गुज़र जाता है।
रहम कर के ऐसा रहवर आप खुद मिल जाता है।

७. दिल वो जां अपने को ऐसे रहवर पर नस्सार[10] कर।
उसके फ़ज़्ल व कर्म के हासिल को दिल में ठान कर॥

८, ज़रफीयत[11] आयेगी तुझ में दिल से कर उसकी क़दर।
मेहरवां होगा वह तुझ पर ईम्तहां पूरा उतर॥

९. क़द्र कमिल होगी तेरी जब तो कामिल की क़दर।
वर्ना मारे मारे फिरते तुम रहोगे दर बदर॥

१०. दिल तुम्हारा साफ होके उसके दिल मिल जायेगा।
यह मुअम्मा[12] खुद बखुद तब तुझ पर हल हो जायेगा॥

११. वस्वसा[13] जब तक है दिल में दिल तेरा नापाक है।
समझ ले दिल साफ तेरा वस्वसा से पाक है॥

१२. कहने सुनने की तुझे हाजत नहीं रह जावेगी।
उस की वर्क़ीलव[14] तुझे सब ख़ुद बख़ुद समझायेगी॥

१३. जब तेरी हालत हो ऐसी फिर न हाल[15] व क़ाल है।
तुझ को करना है नहीं कुछ अब तू मालामाल है॥

१४. "कुबेर" क़िस्मत को सराहो 'शिव' सा मुर्शिद मिल गया।
जिस से तेरा हां नहीं दोनों का झगड़ा मिट गया॥

---

1. भेद की दुनियां, 2. रास्ता बताने वाला, 3. धनी, 4. भीखारी 5. अज्ञानता, 6. देखती हुई आंख, 7. रास्ता दिखाने वाला, 8. भेद ज्ञाता, 9. चाह की प्रबलता, 10. निछावर, 11. अधिकार, 12. भेद, 13. गुनावन, 14. बिजली की धार, 15 क़थनी वरनी।

नज़म (११)

इन्सां

(मनुष्य)

१. अरशे[1] बरीं से होकर इन्सां सैर जहां को आता है।
पर मुतज़ाद[2] की हालत फंस कर भर्मा व भर्माता है॥
२. वह तो खुद कमाल की सूरत इंजाम[3] जिस का ज़वाल बना।
वह तो खुद है नूर का पूतला आखिरत[4] जिसका जुलमात[5] बना।
३. कमाल को दिल दे दिया उसने तब समझो वह कामिल है।
जब ज़वाल को दिल दिया उसने समझो वह नाकामिल है॥
४. नूर से रिश्ता अपना जोड़ा अपने को रहमान[6] बना।
साया को दिल दे दिया उसने रहमा से शैतान बना॥
५. आक़िल वो जाहिल बना खुद ही उसके गले का फांस बना।
खुद जवान बो पीर बना वह इनसे आस निरास बना॥
६. खुद चिराग रोशन किया उसने और उसका मुहताज[7] बना।
खुद खुदा को पैदा किया उसने जो उसका सिरताज[8] बना॥
७. इस मुतज़ाद[2] की हालत फंस कर कभी ऐसा कभी वैसा है।
उसकी हालत क्या कोई समझे खालिक़[9] जाने कैसा है॥
८. कुदरते[10] कामिल ने जब देखा साहिले रहमत[11] लहराया।
इन्सां के कालिब[12] में आकर परमदयाल वह कहलाया॥

९. ऊंचे से नीचे वह आकर इन्सां को फ़रमाता है।
फ़ज़्ल[13] वो कर्म किया है उसने मुत्तज़ाद समझाता है॥
१०. तू नहीं ख़ुदा नहीं तू बंदा दोनों का तू मुजिद[14] है॥
नहीं नूर तू नहीं तू साया दोनों का तू माहिर[15] है।
११. नहीं मुकम्मल[16] और ना मुकम्मल[17] बल्कि तू कुछ और ही है।
इस इशारे को जो कोई समझे वह तो साहिबे ग़ौर ही है॥
१२. ऊंचा निचा समझा कर वह इन्सां को जतलाता है।
और जहां से आया बन्दा उसे वहां ले जाता है॥
१३. 'कुबेर' इस मुतज़ाद की हालत से छुटकारा नहीं कोई पाता है।
फ़ज़्ल वो कर्म से अपने जब तक मुर्शिद[18] नहीं बताता है॥

---

1. स्वर्ग के ऊपर से, 2. द्वन्द, 3. 4. परिणाम, 5. अन्धेरा, 6. देवता, 7. आश्रित, 8. मालिक, 9. ईश्वर, 10. सत्तपुरुष 11. दया के समुन्द्र का किनारा, 12. देह, 13. दया व मेहर, 14, पैदा करने वाला, 15, पूरा जानकार, 16. पूरा, 17 अधूरा 18. सत्तगुरु।

नज्म (१२)

खुदा और बन्दा

(स्वामी वो सेवक)

१. खलिक[1] कुल है बन्दा जुज़[2] है कुल का जुज़ तो कुल ही है।
वहर[3] का ज़ुज़ जब लहर बना है दोनों का रंग सब्ज़[4] ही है॥

२. वहर जुदा नहीं-लहर जुदा नहीं-दोनों मिलकर वहर ही हैं।
खुदा जुदा नहीं-बन्दा जुदा नहीं, दोनों मिलकर एक ही हैं॥

३. लहर के पिछे वहर हमेशा उसकी हिफाजत करता है।
वहर-लहर का निगरां[5] रह कर उसे जुदा नहीं करता है॥

४. खुदा हमेशा बन्दा के साथ रह उसे आप में रखता है।
बाहर भीतर उस के रह कर कभी जुदा नहीं होता है॥

५. वहर को देखो-लहर को समझो दोनों मैं है फ़र्क कहाँ।
खुदा को समझो खुद को देखो बतला दो है फ़र्क ज़हां॥

६. इस जहान को दायम[6] समझा खुदा बन्दे का झगड़ा है।
फ़ानो[7] जब तुम इस को समझे फिर कोई झगड़ा न रगड़ा है॥

७. जुज़वियत[8] आई दायम समझे कुलियत[9] तो यह फ़ानी है।
इस की समझ तभी है आती है जब रहमत[10] रह्मानी है॥

८. इस जहान को फ़ानी समझा तब समझो लाफ़ानी[11] हो।
जब इस को लाफ़ानी समझा तब समझो तुम फ़ानी[12] हो॥

९. सब हैं उसके वह है सब का सब को ऐसा समझता है।
वह न किसी का कोई न उसका किसी से उसका न रिश्ता है॥

१०. लहर वहर एक है दोनों जाकर इसे तुम खुद देखो।
खलिक वो बंन्दे का रिश्ता किसी कामिल से मिल पूछो ।।

११. इस का समझना जितना मुश्किल उतना ही आसान बना।
मुश्किल जब समझा तो मुश्किल आसां तब आसान बना ।।

१२. लहर वहर को जुदा समझ कर खुद महदुद[13] बन जाता है।
बन्दा खुदा को जुदा समझ कर खुद गन्दा हो जाता है ।।

१३. खुद का इम्तेयाज[14] जब आया कुल से वाहर होता है।
वन्दा खुदा को जुदा समझ कर शर्मिन्दा हो जाता है ।।

१४. वन्दा खुये जुज़बियत[15] लेकर खुदा से अदावत करता है।
खुदा की हमदर्दी[16] वेवस है बन्दा ऐसा करता है ।।

१५. लहर-वहर का मस्ला जब इन्सां की समझ आ जाता है।
खालिक वो वन्दे का झगड़ा तब खुद ही मिट जाता है ।।

१६. 'कुबेर' ऐसी समझ तुझे जब आवे तब तू किसी में न फसता है।
खुदा-खुदा रहे, बन्दा-बन्दा रहे किसी से तेरा न रिश्ता है ।।

---

1. ईश्वर, 2. अंश, 3. समुद्र, 4. हरा, 5. चौकिदार, 6. स्थाई, 7. नाशमान, 8. अंशपना, 9. पूर्णता 10. ईश्वर की कृपा, 11. अनाशमान, 12. नाशमान, 13. सीमित 14. ज्ञान, 15. अंशपना की आदत, 16. सहानुभूति।

नज़्म (१३)

खुद वो कुछ

१. ख़ालिक वो बन्दे का मसला[1] जब इन्सां की समझ आ जाता है।
तो वह इन के सैर से ख़ुद आप ही आप अकुताये जाता है॥
२. खालिक वो बन्दे को छोड़ वह खुद के फेर पड़ जाता है।
और इस राज़ के पाने को वह खुद में दाखिल होता है॥
३. ख़ुद में समाकर वह ख़ुदा बन्दा दोनों ही भूल जाता है।
वहां पहुंच कर इन्सां खुद अपने तलाश लग जाता है॥
४. इस खुद की तलाश में वह खुद को तो भी खो जाता है।
पर इस का ऐहसास[2] तो उस को कुछ कुछ रह ही जाता है॥
५. ईस खुद के एहसास में कुछ दिन अपना वह गुज़ारता है।
इस के बाद वह खुद ही इस हालत के उपर आता है॥
६. उपर आकर अपने आप में वह खुद गुम हो जाता है।
और अपने एहसासे खुद को भी तो वह खो जाता है॥
७. इस हालत में क्या पाता है उसकी समझ नहीं आता है।
बस उसको इतना ही समझ है कि वह कुछ पा जाता है॥
८. बन्दा-खुदा वो खुद को छोड़ कर बाकी जो रह जाता है।
उसको भी वह छोड़ छाड़ कर अलग थलग हो जाता है॥
९. जैसे कतरा बहर में मिल कर अलग नहीं कर पाता है।
वैसे किरण सुरज में मिल कर उस से एक हो जाता है॥
१०. इस हालत को खुद वह समझता और खुद को समझाता है।
कुदरते कामिल[3] और बन्दे में फर्क़ नहीं कर पाता है॥
११. मुर्शिदे कामिल की रहमत से इस हालत में आता है।
जहां न बन्दा-ख़ालिक वो खुद या कुछ ही रह जाता है॥
१२. इस हालत को कोई हैरत-हैरत और कोई कुछ गाता है।
मुर्शिद 'शिव' अपने 'कुबेर' को राधास्वामी धाम बताता है॥

---

1. मामीला, 2. ज्ञान, 3. सतगुरु।

नज्म (१४)

१. मैं न कहता कि फिरिश्ता[1] या शैतान[2] बनो।
मैं न कहता कि तुम हिन्दू मुसलमान बनो॥
२. मैं न कहता कि तुम सोने की जन्जीर बनो।
मैं न कहता कि तुम रहबर या पीर बनो॥
३. मैं न कहता कि तुम इनसान की तसवीर बनो।
मैं न कहता कि तुम मुल्क[3] की शहतीर बनो॥
४. मैं न कहता कि तुम आशिके दिलगीर बनो।
मैं हूं कहता कि निशाने के तुम अब तीर बनो॥
५. मैं हूं कहता कि हमेशा तुम खुश इनजाय बनो।
मैं हूं कहता कि तुम कामिल इनसान बनो॥
६. रहमत चाहते हो तो रहम करना सिखो।
आफ़त चाहते हो तो जुल्म करना सिखो॥
७. गर हो इनसां तो औरों के दस्तगीर[4] बनो।
हो न ऐसा कि तुम काफ़िर वो बे पीर बनो॥
८. किब्र[5] वो नखवत[6] से न आप को नापाक करो।
नाज़ वो नफ़रत से न आप को बर्बाद करो॥
९, फज़्ल वो कर्म से तुम इस जहान को अबाद करो।
यह न हो कि पेच वो ताव से बर्बाद करो॥
१०. शक्ल गर है इन्सां का तो दिल इन्सां हो।
सुरत इनसान की और सीरत[7] हेवान न हो॥
११. 'कुबेर' मुर्शिदे 'शिव' ने इनसान बनाया हमको।
औरों के दर्द से दिल भर आये सिखाया हमको॥

---

1. देवता, 2. दैत, 3. नेता, 4 सहायक, 5-6. घमण्ड,
7. दिल।

१. सब साथी मेरे छूट गये, दुनियां के रिश्ते टूट गये।
काल और करम सब लूट गये, अब अपना आपा अकेला है॥

२. अशरत[1] हसरत[2] सब दूर हुवे, सब बहम वो गुमा काफ़ूर हुवे।
ठोकर जब मैंने खाई है, तब राज़ समझ में आई है॥

३. दोज़ख[3] वो बिहीश्त[4] ख्याली थे,असवात[5] वो नफी[6]से खाली थे।
इनके हस्ती[7] मन मानी थे. इन में न कोई मेरे हामी[8] थे।

४. ये माल वोज़वाल सब फ़ानी थे, ये सव के सब हैरानी थे।
ये स्कूं[9] क़रार से खा़ली थे, इन से हम रुखे फीके थे।

५. झगड़े दीं दुनिया दुर हुवे, अक्ल वो बे अक्ल काफ़ूर हुवे।
गो आप ही आप हम नूर हुवे,पर खुद की समझ से दुर हुवे।

६. दुनिया वो दीं से न उलफत[10] है. इनसे नफ़रत नहीं रग़वत है।
मुझे शादी और न नाशादी है, मुझे क़ैद न और अजादी है॥

७. हम सब में दख्ल समझते थे, और सब को अपना कहते थे।
ये खा़म[11] ख्याली मेरे थे, इन में न यहां कोई अपने थे॥

८. हमने न कहीं राहत पाई, मेरी रुह थी रहती घबराई।
जव से गुरु की ली शरनाई, अपने आपे की समझ पाई॥

९. मैं गुरु का बना गुरु मेरे बने, हम अपने आप सहारा बने।
मेरे सभी काम निष्काम बने, हम जैसे सुरज चांद बने॥

१०. "कुबेर" मुर्शिद "शिव ने करम की है, और मौज में मुझको जगह दी है।
हम मौज की मौज में है रहते, आपे से कभी नहीं गिरते हैं॥

---

1. हर्ष, 2. शोक, 3. नर्क 4. स्वर्ग 5. होने, 6. न होने, 7. होना, 8. मददगार, 9. शान्ति, 10. प्रेम, 11. तत्वहीन विचार।

नज़्म (१६)

१. तुम को बता दूं कहां यार का निवास है।
जहां नहीं सूरज चांद दिन और रात है॥

२। जहां नहीं पानी पवन धरती आकास है।
जहां नहीं हम तुम छाया प्रकास है॥

३. जहां नहीं मोह माया भूख वो पियास है।
जहां नहीं दुख सुख और त्रियताप है॥

४. अमृत का भोजन प्रकाश का निवास है।
जहां नहीं दीया बाती स्वयं प्रकाश है॥

५. जहां नहीं साज वाज अनहद झनकार है।
स्वयं जहां शब्द उठे मस्ती का राग है॥

६. जहां अपने स्वयं में अपना निवास है।
जहां आदर्श पर पूरा विश्वास है॥

७. जहां नहीं स्वामी वो सेवक का आभास है।
स्वयं का आभास भी जहां पर समाप्त है॥

८. मरने का शोक नहीं जीने का हुलास है।
जहां नहीं काल व्यापे यार मेरे पास हैं॥

९. जहां नहीं आस फांस प्रेम वो हुलास है।
"कुबेर" सदा बहार जहां समझो क्या बात है॥

नज्म (१७)

१. जब मेरे दर्द दिल से आप तू मजबूर हुआ।
शक्ले इन्सां में तेरा खुद बखुद ज़हूर[1] हुवा॥
२. जिलवये[2] ज़ात का इनसान में वजूद[3] हुवा।
बन के मावुद[4] खुद आविद[5] के गम को दूर किया॥
३. मेहर मुर्शिद से हर दर्द मेरे दुर हुवे।
फ़ज्ल वो करम से क़दमो में हम मनजूर हुवे॥
४. अब्रे[6] रहमत[7] से आलम सभी सैराव किया।
रहम वो करम से हर दो जहां आबाद किया॥
५. मुर्शिदे "शिव" की मेहर से दिल शाद हुवा।
कर्म को उसने दर्दे दिल से में आज़ाद हुवा॥

1. प्रगट, 2. ईश्वर, 3. देह धरना, 4. प्रीतम, 5. प्रेमी, 6. बादल, 7. दया।

नज्म (१८)

१. क्या क्या जफ़ोय[1] हमने कीं कुछ काम न निकला।
यक नज़रे कर्म तेरे विन अर्मान[2] न निकला॥
२. वीराना में घूमे वो व्याबान को ढुन्ढ़े।
मतलव का मेरे कोई भी सामान न निकला॥
३. मन्दिर में जाके पूजे वो मस्जिदों में की सिजदे।
बदनाम हुये करके सब बेकाम सब निकला॥
४. नादां बने दाना बने मुफ़लिस बने अमीर।
इन सब के सब का रुखासा ईन्जाम ही निकला।
५. कितना हुवा मैं हैरां दिन रात गर मदाम[3]।
जब तक न हुवा मेहरबां बे-काम सब निकला॥
६. दिल तोड़ कर जब आ गया तेरे पनाह में।
तब मेंहरवां हुवा तू मेरा काम सब निकला॥
७. मूर्शिद को कर तू मेहरबां सब काम छोड़ दे।
गुमनाम कर अपने को तब काम सब निकला॥

1. तकलीफ़, 2. अभिलाषा, 3. लगातार।

नज्म (१९)

१. मेहरे[1] मुर्शिद से हमेशा हम[2]खुश इनजा़म रहे।
हम न काबे गये न मसजीद में बदनाम रहे॥

२. हम न मथुरा न काशी में परिशान रहे।
हम हमेशा देर दौलत[3] पे ब आराम रहे॥

३. मेहरे मुर्शिद ने हर दर्द को काफूर किये।
जब कभी धूप लगी आप वहां छांव किये॥

४. मेर नाशाद दिल को आपने दिलशाद किये।
मेरे विराना दिल को आप ने आबाद किये॥

५. हम जो साया हुवे तो आप मेरे नूर हुवे।
हम जो मूसा हुवे तो आप मेरे तूर हुवे॥

६. मुर्शिदा तेरे करम से ये भी दूर हुवे।
हम न मूसा बने न आप मेरे तूर हुवे॥

---

1. दया, 2. सुफल, 3. घर।

नज्म (२०)

१. कहां रहता हूं ? मैं तो हैरत में खिचा रहता हूं ।
शाद से काम न नाशाद कभी रहता हूं ॥

२. उल्फत वो नफ़रत के झगड़ों से मैं अब दूर हुआ ।
आप में आप खिचां आप में मसरुर[1] हुवा ॥

३. शादी वो ग़म से न रहता है मुझे काम कभी ।
बस्वसे[2] दिल के मेरे हो गये वे काम सभी ॥

४. दौज़ख वो बिहीश्त के ख़यालों से मैं अब दूर हुवा ।
मुर्शिद कामिल की मेहर से अब मैं नूर हुवा ॥

५. खुद खुदा का दिल में मेरे जहूर[3] हुवा ।
आप परवाना बना आप ही मैं नूर हुवा ॥

६. अपने आपे में मेरा खुद व खुद मजज़ूब[4] हुआ ।
मैं न मालिक था कभी और न मज़दूर हुवा ॥

७. शमां[5] या नूर[6] न था इनसे मैं अब दूर हुआ ।
ज़ात से वस्ल हुई मुर्शिद को मनजूर हुवा ॥

८. आबिद, माबूद वो मसजिद से में अब दुर हुवा ।
यह न समझो कि मुसा से अब मैं तूर हुवा ॥

९. मुर्शिद 'शिव' ने मुझे मेहर से आबाद किया ।
मुझको न क़ैद किया मुझको न आज़ाद किया ॥

---

1. आनंदमय, 2. गुनावन, 3. प्रगट होना, 4. समाजाना, 5. दीपक 6. प्रकाश ।

नज्म (२१)

१. मेरे ईश्क[1] का शौला[2] भड़क उठा, हम आशिक तुम माशूक हुवे।
२. यह फ़र्क़ मुझे मनजूर नहीं, हम आविद[3] तुम मावूद[4] हुवे ॥
३. यह पर्दा दुई का कैसे हटा, हम और हुवे तुम और हुवे ।
४. तुम से कहो वस्लत[5] कैसे हुई, हम और रहे तुम और रहे ॥

---

1. प्रेम, 2. आग की चिनगारी, 3. सेवक, 4. स्वामी 5. मिलाप ।

नज्म (२२)

१. जो रक्षक यहां है वह रक्षक वहां है।
तुझे फ़िक्र क्यों कर दो किस बात का है।
२. जो साथी बतन[1] में वह साथी वतन[2] में।
जो साथी अयां[3] में वह साथी निहाँ[4] में॥
३. जो है ज़िन्दगी में वही मौत में है।
जो दाना[5] में है वह ही नादां[6] बना है॥
४. किया जिस ने प्रकाश छाया बना है।
जो विष को बनाया वह अमृत बना है॥
५. जो है ब्रह्म वह ही तो माया बना है।
फ़र्क़ गर है इनमें बता दो कि क्या है॥
६. फरक समझे अन समझे प्रकाश छाया।
यों इस को समझलो यह है ब्रह्म माया॥
७. समझ जिस को आई वह प्रकाश खुद है।
जो इस को न समझा वह छाया बना है॥
८. नहीं ब्रह्म माया हो तुम मेरे भाई।
जहां से हो आये है इन से उंचाई॥
९. न तुम हो यहां के न तुम हो वहां के।
समझने की कोशिश करो हो जहां के॥
१०. समझ इस की आई ज़रा देर में है।
समझ कर इसे दिल तो खुशदिल हुआ है॥
११. 'कुबेर' समझता हूं इस को समझ मेरी यह है।
बयां से है बाहर समझ से बरी है॥

---

1. पेट, 2. दुनिया, 3. प्रगट, 4. गुप्त, 5. बुद्धिमान, 6. बुद्धिहीन।

जिन्दगी का लुत्फ

१. बुलबुल खुशदिल आपने काशाना[1] में है ।
माल वा जर महफूज़ तहखाना में है ॥
२. सुबह खुशदिल शाम हो जाने में है ।
आग जल कर राख हो जाने में है ॥
३. दरिया खुशदिल वहर[2] मिल जाने में है ।
सफर को मंजिल पहुंच जाने में है ॥
४. आंख खुशदिल बन्द हो जाने में है ।
आंसू खुद बह कर निकल जाने में है ॥
५. वल्वला[3] खुशदिल निकल जाने में है ।
बात को मुह से निकल जाने में है ॥
६. बादये[4] पूर लुत्फ[5] पी जाने में है ।
काम को इन्जाम पा जाने में है ।
७. "कुबेर" सब खुशी तो अपने मिट जाने में है ।
ज़िन्दगी का लुत्फ मर जाने में है ॥

1-घोंसला 2-समुन्दर 3-अभिलाषा 4-शराब 5स्वादिष्ट ।

वन्दना

१. वन्दनम सतज्ञानदाता, वन्दनम सत ज्ञान मय,
वन्दनम निर्वान राता, वन्दनम निर्वान मय ।

२. भक्ति मुक्ति योग युगति, आप के आधीन सब,
आप ही है सिन्धू सदगति, जीव जन्तू मीन सब ।

३. आप गुरु सतगुरु दया, और प्रेम के भंडार हैं,
कर्ता धर्ता आप हैं, कर्तार जगदाधार हैं ।

४. रिध्धि सिद्धि भक्ति नौ निध्धी, हैं चरण में आप के,
बच गया भव दुख से जो आया, शरण में आप के ।

५. भक्ति दिजिये नाम की, सत नाम में विश्राम दे ।
राधास्वामी अपना कीजीये, राधास्वामी धाम दे ।



प्रकाशक :—
मानवता मन्दिर,
सुतैहरी रोड़,
होशियारपुर।

मुद्रक :—
सुधाकर प्रिंटरज़,
अशोक नगर,
होशियारपुर।